विजय तिवारी का रचना संसार

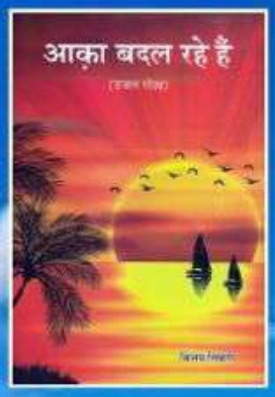

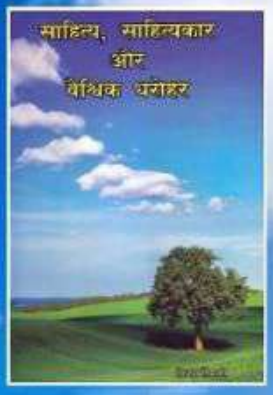

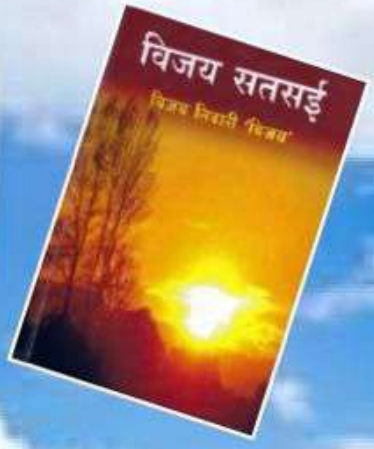

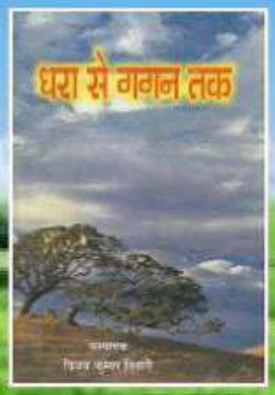

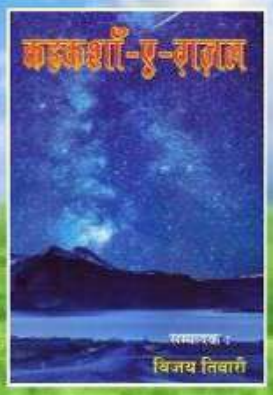

डॉ. धीरज वणकर

डॉ. गोवर्धन बंजारा

डॉ. अनु मेहता

विजय तिवारी का रचना संसार

संपादक

डॉ. धीरज वणकर

डॉ. गोवर्धन बंजारा

डॉ. अनु मेहता

प्रकाशक

साहित्य सेतु अकादमी ट्रस्ट

अहमदाबाद

विजय तिवारी का रचना संसार

संपादक
डॉ. धीरज वणकर
डॉ. गोवर्धन बंजारा
डॉ. अनु मेहता

© संपादक

ISBN : 978-81-980943-3-9

मूल्य : 250

प्रथम संस्करण
माघ शुक्ल पक्ष, पंचमी, वि.स. 2081
2, फरवरी, 2025

प्रकाशक
साहित्य सेतु अकादमी ट्रस्ट
अहमदाबाद

टाइपसेटींग
स्टाइलस ग्राफिक्स
अहमदाबाद–380001

मुद्रक
साहित्य सेतु अकादमी ट्रस्ट
A–202, क्रिश लक्ज़ूरिया
वस्त्राल रोड, अहमदाबाद–382418
(मो.) 9427622862

सभी प्रबुद्ध विद्वान मनीषी साहित्य साधकों की ओर से
माता सरस्वती के श्री चरणों में सादर समर्पित।

सम्पादकीय

दरअसल साहित्य संवेदनाओं का संसार है। यह भी सर्वविदित है कि साहित्य समाज का दर्पण एवं दीपक है। साहित्य का दायित्व है सामाजिक सरोकारों के प्रति समाज को सजग एवं संवेदनशील बनाए ताकि प्रत्येक मनुष्य प्रगति एवं परिवर्तन के दौर से अछूता न रहे। साहित्य यदि अवरोधों के प्रति सजग न कर सके तो साहित्य सर्वमान्य मूल्य के रूप में स्थापित नहीं हो सकता है। प्रसिद्ध आलोचक आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने साहित्य का उद्देश्य **मनुष्य जाति का हित करना** माना है। साहित्य का मुख्य प्रयोजन **हित साधन** है। साहित्य मनुष्य के जीवन और जगत, आत्मा और परमात्मा, राष्ट्र और समाज, आनंद और विषाद, महानता और हीनता का एक सबल मापदंड अर्थात मानदंड है। साहित्य मनुष्य जीवन के अनुभवों तथा अनुभूतियों का विराट रूप है। साहित्य विश्व कल्याण की भावना से ओत–प्रोत है। –

सर्वेभवन्तु सुखिन: सर्वे सन्तु निरामया:।
सर्वे भद्राणि पश्यंतु मा कश्चिद दुःख भाग भवेत्।।

साहित्यकार अपनी समस्त संवेदनाओं को समेट कर अनुभवों को तराश कर ही किसी साहित्य की रचना करता है।

विजय तिवारी हिन्दी भाषा के प्रतिष्ठित साहित्यकार हैं। उनका बहुआयामी व्यक्तित्व एवं कृतित्व रहा है। उन्होंने कवि, ग़ज़लकार, सतसईकार, समीक्षक, सम्पादक एवं साहित्य के अध्येता के रूप में विशेष उपलब्धि प्राप्त की है। विद्यार्थी जीवन से वे लिखते रहे हैं। विजय तिवारी ख्याति प्राप्त एक कवि हैं और कविता, गीत, ग़ज़ल, दोहे लिखने में बहुत निपुण हैं। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर ख्याति पानेवाले मशहूर ग़ज़लकार तिवारी जी के ग़ज़ल संग्रह **'फल खाए शजर'** और **'आक़ा बदल रहे हैं'** हिन्दी साहित्य अकादमी गुजरात द्वारा पुरस्कृत हैं। इनके शोध लेखों का संग्रह **'साहित्य, साहित्यकार और वैश्विक धरोहर'** भी हिन्दी साहित्य अकादमी गुजरात द्वारा पुरस्कृत है। **धरा से गगन तक–1** उनके द्वारा संपादित विश्व का सर्वप्रथम अंतरराष्ट्रीय हिन्दी काव्य संकलन है। वर्ष–2023 में तिवारी जी के कुशल संपादन में **'धरा से गगन तक–2'** काव्य संग्रह प्रकाशित हुआ। जिसमें भारत सहित विश्व के इक्कीस देशों के कवियों की रचनाएं संकलित हैं। वर्ष–2024 में हिन्दी सतसई परंपरा को समृद्ध करनेवाली **'विजय सतसई'** का हिन्दी साहित्य जगत में भरपूर स्वागत हुआ और पाठकों ने अत्यंत सराहना और प्रसंशा की है। अभी हाल ही में गुजरात साहित्य अकादमी के आर्थिक सहयोग से '**रोशनी काट दी**' ग़ज़ल संग्रह प्रकाशिक हुआ है । हिन्दी साहित्य में विजय तिवारी के उक्त बहुमूल्य प्रदेय को भुलाया नहीं जा सकता।

विजय तिवारी के समग्र साहित्य पर केंद्रित **'विजय तिवारी का रचना संसार'** संपादित ग्रंथ में तिवारी जी के ग़ज़ल संग्रह पर, समीक्षात्मक ग्रंथ पर, **विजय सतसई** पर राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति प्राप्त विद्वानों, चिंतकों के 50 गहन अध्ययन परक लेखों का समावेश है। संपादित ग्रंथ में प्राप्त शोधालेख महत्वपूर्ण हैं। ग़ज़ल हिन्दी साहित्य की लोकप्रिय विधा

रही है। त्रिलोचन के शब्दों में कहें तो **कविता अन्तरतम से निकलती है। मन की स्थिति, परिस्थितियों का दबाव और भावावेश कविता लिखने के लिए बाध्य करते हैं।** गुजरात के ग़ज़लकार हिन्दी ग़ज़ल के राष्ट्रीय फलक पर अपनी पहचान बना चुके हैं। इतना ही नहीं हिन्दी ग़ज़ल को एक शीर्ष स्थान दिलाने में लगे हैं। विजय तिवारी उनमें से एक हैं। विजय तिवारी की ग़ज़लें गुजरात राज्य पाठ्य–पुस्तक मंडल में शामिल हैं। उनकी ग़ज़लों पर डॉ. कुँअर बेचैन का कथन द्रष्टव्य है– **श्री विजय तिवारी को ग़ज़ल कहने का सलीका आता है। निश्चय ही वह ग़ज़ल की आत्मा से परिचित हैं। उनकी ग़ज़लें वैसे बहुत सरल तथा सहज हैं किन्तु सोचो तो सोचने पर मजबूर करती हैं। – विजय की ग़ज़लें व्यवस्था पर तो चोट करती हैं वह केवल प्रहार के लिए नहीं वरन समाज को सुन्दर बनाने के लिए है।** ('फल खाए शजर' की भूमिका से)

फल खाए शजर पर 19 सार्थक लेख संकलित हैं। अंसार कंबरी का कहना है कि **श्री विजय तिवारी की गणना उन रचनाकारों में की जाएगी जिनकी शायरी में मात्र निजी दुःख दर्द न होकर समाज के सुख–दुख, आम आदमी की पीड़ा का एहसास बड़े सलीके से प्रतिबिंबित हुआ है।** डॉ. अनन्तराम मिश्र 'अनन्त' का लेख सटीक व ज्ञानवर्धक है। उन्होंने विजय तिवारी के **'फल खाए शजर'** की ग़ज़लों में युगीन विसंगतियों और कथनी–करनी के भेद को अनेक स्थलों पर प्रभावी ढंग से उजागर किया है। प्रगतिशील ग़ज़लों के अतिरिक्त इस संग्रह में प्रेम श्रृंगार से भी सम्पृक्त कुछ ग़ज़लें हैं। संकलन में डॉ. कुँअर बेचैन का "निजीपन और सामाजिक सरोकार की ग़ज़लें" लेख गहन अध्ययन से ओत–प्रोत है। उनके मतानुसार "विजय की ग़ज़लों में आज के परिवेश की विसंगतियों पर गहरे प्रहार हैं। ऐसे प्रहार, ऐसी चोटें जो वर्तमान समय के अनगढ़ पत्थर में से समाज की सुन्दर और पूजा योग्य मूर्ति तराशने में सफल हुई हैं।" वरिष्ठ ग़ज़लकार भगवानदास जैन ने 'फल खाए शजर' पर समीक्षा करते हुए लिखा है कि "विजय ने हर रंग की ग़ज़लें कही हैं। उनकी ग़ज़लें बहुआयामी हैं। प्रेम, सौंदर्य और भक्ति के रंग में डूबे चित्र भी उभर आए हैं।" इसके अतिरिक्त डॉ. उर्मिलेश, डॉ. ओमप्रकाश शुक्ल, डॉ. दिवाकर दिनेश 'गौड़' , चन्द्रसेन 'विराट', डॉ. भावना सावलिया, डॉ. सुनील कुमार, डॉ. गुलाबचंद पटेल, डॉ. सतीन देसाई 'परवेज' के लेख गहन चिंतन के परिचायक हैं।

गौरतलब है कि विजय तिवारी जी की ग़ज़लें यथार्थ का आईना है जिसमें पीड़ा, संवेदनाओं, विडंबनाओं के जीवंत दृश्य उजागर हुए हैं। 'आक़ा बदल रहे हैं' ग़ज़ल संग्रह पर अध्येताओं के 17 लेख हैं। प्रस्तुत संग्रह में 89 ग़ज़लें हैं जिसमें जीवन एवं समाज से जुड़े विभिन्न पहलुओं तथा अनुभूतियों को सहज भाव से उकेरा है। डॉ. सुनील कुमार ने लिखा है "आक़ा बदल रहे हैं, सामाजिक सार्थकता के साथ पाठकों के सामने आया है।" जम्मू से डोली तिकू अरवल ने इस संग्रह को "यह सनातन सत्य है" कहा है। जम्मू से ही दीपशिखा ने गहन अध्ययन करके 'आक़ा बदल रहे हैं' के बारे में अपने महत्वपूर्ण विचार व्यक्त करते हुए लिखा है कि "इनमें समाज की मृत होती चेतनाएं, संबंधों के टूटते बिखरते मार्मिक चित्र, राजनीति के कुत्सित चेहरे, पारिवारिक, साँस्कृतिक, नैतिक मूल्यों का पतन, इन सभी का चित्रण बहुत ही प्रभावशाली ढंग से हुआ है।" रूसी भारतीय मैत्री संघ 'दिशा'

मॉस्को के अध्यक्ष एवं चिंतक डॉ. रामेश्वर सिंह का 'आक़ा बदल रहे हैं' पर व्यक्त विचार ध्यानाकर्षक है। उनके मतानुसार "विजय की ग़ज़लों में सामाजिक सरोकार, टुटते रिश्ते, घृणा, ईर्ष्या, मिलना, बिछुड़ना, राजनीतिक गिरावट, नफ़रत, भ्रष्टाचार, धोखा, प्रेम आदि भावों की अभिवृद्धि दिखाई देती है।"

सिद्धहस्त रचनाकार विजय तिवारी ने समीक्षा के क्षेत्र में कलम चलाकर 'साहित्य, साहित्यकार और वैश्विक धरोहर' नामक समीक्षात्मक ग्रंथ दिया है। प्रस्तुत किताब पर छः विद्वानों की समीक्षा को इस ग्रंथ में समाहित किया गया है। हिन्दी के मूर्धन्य साहित्यकार डॉ. किशोर काबरा ने उक्त ग्रंथ पर मननीय विचार व्यक्त किये हैं। काबरा जी ने विशेष में लिखा है कि "विजय तिवारी ने अपने ग़ज़लकार – गीतकार स्वरूप से अलग हटकर समीक्षात्मक, शोधात्मक एवं चिन्तनात्मक गद्य लेखक के रूप में अपने आपको साहित्य में प्रस्तुत किया है। भाषा सीधी सरल और प्रवाह पूर्ण है। इस पुस्तक में सूरदास, फ़िराक़ गोरखपुरी, क्रांतिकारी युगदृष्टा कबीर, हमारी राष्ट्रभाषा और हमारी राष्ट्रीय अस्मिता पर तिवारी ने ज्ञानवर्धक विचार पेश किए हैं।"

हिन्दी कविता का अत्यंत प्राचीन प्रिय छंद है – दोहा। वस्तुत: सुनने, पढ़ने में दोहा जितना सहज लगता है इतना सरल नहीं होता है। हिन्दी सतसई परंपरा की अगली कड़ी **'विजय सतसई'** है, जिसका प्रकाशन मई – 2024 में हुआ है। जिसमें 772 दोहों का समावेश है। ये दोहे देखन में छोटे लगें घाव करें गंभीर वाले हैं। विजय सतसई पर प्रसिद्ध मनीषियों, कवियों की 6 समीक्षाएं मिली हैं। सभी ने '**विजय सतसई**' की तहेदिल से प्रशंसा करते हुए स्वागत किया है। **'विजय तिवारी का रचना संसार'** ग्रंथ के प्रकाशन पर्व पर हम अपने तमाम समीक्षक मित्रों का हृदयतल से आभार ज्ञापित करते हैं, जिन्होंने अपनी अनुमति देकर विद्वतापूर्ण लेख भेजे। अब यह ग्रंथ आप सभी सुधी पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत है। आपके सुझाव की हमें प्रतीक्षा रहेगी।

– डॉ. धीरज वणकर
हिन्दी विभागाध्यक्ष,
जी. एल. एस. कॉलेज फॉर गर्ल्स, अहमदाबाद,
मानव संसाधन विकास मंत्रालय से पुरस्कृत लेखक

अनुक्रमणिका

1.	फल खाए शजर – एक दृष्टि **– अंसार कंबरी**	**1**
2.	टीस भरी अपील **– उषा राजे सक्सेना**	**5**
3.	प्रस्तवन **– डॉ. अनन्तराम मिश्र 'अनन्त'**	**6**
4.	स्वागत योग्य ग़ज़लें **– डॉ. उर्मिलेश**	**9**
5.	निजीपन और सामाजिक सरोकार की ग़ज़लें **– डॉ. कुँअर बेचैन**	**11**
6.	एक शायर - चिंता एवं चिंतन में डूबा **– चन्द्रसेन विराट**	**14**
7.	विलक्षण तरुणाई का परिचय **– भगवानदास जैन**	**16**
8.	रोमांचकारी ग़ज़ल संग्रह **– भारतेन्दु श्रीवास्तव**	**18**
9.	'फल खाए शजर' को पढ़ते हुए **–डॉ. ओमप्रकाश शुक्ल**	**19**
10.	कुछ नयेपन की परिचायक श्री विजय तिवारी जी की ग़ज़लें **–प्रो. (डॉ.) दिवाकर 'दिनेश' गौड़**	**24**
11.	"फल खाए शजर" में आधुनिक ग़ज़ल का परिवर्तित स्वरुप **–प्रो. देवी पन्थी**	**27**
12.	"फल खाए शजर" ग़ज़ल संग्रह में व्यक्त प्रासंगिकता **–डॉ. भावना एन. सावलिया**	**34**

13. बेमिसाल ग़ज़लों का बेहतरीन सरमाया 'फल खाए शजर'
– कविता बष्ट **43**

14. सर्वश्रेष्ठ ग़ज़ल-संग्रह 'फल खाए शजर'
– डॉ. गुलाब चंद पटेल **46**

15. मानवीय संवेदनाओं का अत्यन्त संवेदनशील बयान
–डॉ. परशुराम गणपति मालगे **50**

16. 'फल खाए शजर' आम आदमी के जीवन का खास ग़ज़ल संग्रह
–डॉ. दिग्विजय कुमार शर्मा **54**

17. 'फल खाए शजर' एक विहंगावलोकन
–प्रो. किरीट गुणवंतराय जोशी **60**

18. 'फल खाए शजर' – विजय कुमार तिवारी के ग़ज़ल संग्रह का अवलोकन
–डॉ. सतीन देसाई 'परवेज' **70**

19. बेहतरीन ग़ज़लों का ऐतिहासिक दस्तावेज है – 'फल खाए शजर'
डॉ. सुमन कमल मिश्र **75**

20. अवलोकनार्थ संग्रह "आक़ा बदल रहे हैं"
– डॉ. सुनील कुमार **79**

21. मानव पीड़ा का अद्भुत दस्तावेज है "आक़ा बदल रहे हैं"।
– डॉ. राजीव कुमार पाण्डेय **84**

22. "आक़ा बदल रहे हैं"
– डॉ. रामगोपाल भारतीय **88**

23. यह सनातन सत्य है – आक़ा बदल रहे हैं
– डोली तिकू अरवल **92**

24. 'आक़ा बदल रहे है' अत्याधुनिक ग़ज़ल संग्रह
–दीपशिखा 'दीप' **96**

25. संवेदनाओं की मौन पुकार है - "आक़ा बदल रहे हैं"
–श्रीमान्नारायणाचार्य "विराट" **103**

26. आक़ा बदल रहे हैं गागर में सागर
डॉ. अलका पाण्डेय **109**

27. बदलते आक़ाओं की बदलती औक़ात
– बिर्ख खडका डुवर्सेली **111**

28. मेरी नज़र में 'आक़ा बदल रहे हैं' ग़ज़ल संग्रह
– डॉ. रामेश्वर सिंह **115**

29. ग़ज़लों में डूबे विजय तिवारी
– श्री सुवास दीपक **117**

30. 'आक़ा बदल रहे हैं' एक जीवन्त आईना
–डॉ. अलका अरोड़ा **119**

31. 'आक़ा बदल रहे हैं' यह विडम्बना है
– डॉ. सुषमा चौधरी **122**

32. 'आक़ा बदल रहे है' कठोर यथार्थ
–डॉ. मेघना शर्मा **124**

33. 'आक़ा बदल रहे हैं'
–डॉ. वर्षा महेश **126**

34. अवसरवाद पर घातक प्रहार का अचूक आयुध, "आक़ा बदल रहे हैं"
–डॉ. अवधेश कुमार 'अवध' **127**

35. 'आक़ा बदल रहे है' वैश्विक परिदृश्य में
– डॉ. अन्नदा पाटनी **129**

36. 'आक़ा बदल रहे हैं' ग़ज़ल संग्रह एक नज़र
– डॉ. सुभाष भदौरिया **136**

37. एक शोधात्मक निबन्ध-कृति - साहित्य, साहित्यकार और वैश्विक धरोहर
– डॉ. किशोर काबरा **142**

38. 'साहित्य, साहित्यकार और वैश्विक धरोहर' एक समीक्षा
–डॉ. धनंजय भंज **146**

39. 'साहित्य, साहित्यकार और वैश्विक धरोहर' एक विशाल परिदृश्य
– डॉ. विनोद बब्बर **149**

40. 'साहित्य, साहित्यकार और वैश्विक धरोहर' श्रेष्ठ संक्षिप्त इतिहास
–डॉ. दक्षा जोशी **151**

41. 'साहित्य, साहित्यकार और वैश्विक धरोहर' स्तरीय आलेख
– डॉ. देवनारायण शर्मा "चक्रधर" **154**

42. साहित्य, साहित्यकार और वैश्विक धरोहर – शोधात्मक लेखों का श्रेष्ठ संग्रह
– कार्तिका एस. नायर **157**

43. श्रेष्ठ लेखों का महत्वपूर्ण दस्तावेज
–प्रो. कमलेशकुमार चोकसी **162**

44. समकालीन स्थिति का जीवंत आईना
–डॉ. सुनील कुमार **165**

45. कृति के दोहे कीर्ति दें...
–डॉ. प्रेमशंकर त्रिपाठी **167**

46. समाज का आईना है – विजय सतसई
– सुषमा मल्होत्रा **170**

47. दुर्गुणों पर सद्गुणों की विजय – विजय सतसई
– डॉ. अनु मेहता **173**

48. विजय सतसई में जीवन के रंग
– डॉ. पूनम झा **179**

49. विविध विषयों एवं समसामयिक समाज का प्रतिबिंब : विजय सतसई
– डॉ. धीरज वणकर **181**

50. आधुनिक युग की श्रेष्ठ सतसई – विजय सतसई
–डॉ. बैजनाथ शर्मा 'मिन्टू' **186**

डॉ. धीरज वणकर

अध्यक्ष, हिन्दी विभाग,
जी. एल. एस. कॉलेज फॉर गर्ल्स, अहमदाबाद
मानव संसाधन विकास मंत्रालय से पुरस्कृत लेखक

डॉ. गोवर्धन बंजारा

एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष,
हिन्दी विभाग,
एच. के. आर्ट्स कॉलेज,
आश्रम रोड, अहमदाबाद, गुजरात

डॉ. अनु मेहता

आचार्य एवं कवयित्री,
आणंद इंस्टीट्यूट ऑफ
पी. जी. स्टडीज इन आर्ट्स,
आणंद , गुजरात

फल खाए शजर – एक दृष्टि

– अंसार कंबरी

ग़ज़ल के इतिहास के बारे में बहुत कुछ लिखा जा चुका है कि वह किन-किन पड़ावों को तय करते हुये यहाँ तक पहुँची। इस सम्बन्ध में मैं इतना ही कहूँगा कि हमारे देश में ग़ज़ल उर्दू से निकल कर हिन्दी में आई। कालान्तर में हिन्दी साहित्य की अन्य विधाओं के समान ही ग़ज़ल का भी क्षेत्र - विस्तार हुआ। हिन्दी में आकर इसकी विषय-वस्तु का दायरा व्यापक हुआ। ग़ज़लगो कवियों का ध्यान देश, राजनीति, समाज एवं समाज में व्याप्त कुरीतियों की ओर भी गया। वैसे हिन्दी में ग़ज़ल पहले से ही कही जाती रही है। निराला, प्रसाद और बलबीर सिंह 'रंग' जैसे स्थापित कवियों ने ग़ज़लें कहीं। किन्तु दुष्यंत के बाद हिन्दी ग़ज़ल की बाढ़ सी आ गई। वर्तमान दो दशकों को हिन्दी काव्य - जगत् के इतिहास में ग़ज़ल युग कहा जाय तो अतिश्योक्ति नहीं होगी। आजकल तो बहुधा कवि एवं कवयित्रियों ने गीत का आँचल छोड़ कर ग़ज़ल का दामन थाम लिया है। आज पत्र-पत्रिकाएँ ऐसी नहीं हैं जिसमें ग़ज़लें प्रकाशित न होती हों। यदि देखा जाय तो लगभग सभी रचनाकारों ने ग़ज़लों में कुछ न कुछ योगदान दिया है। कुछ कवि ग़ज़ल के क्षेत्र में अपनी पहचान बनाने में भी सफल हैं। इधर ग़ज़लगो कवियों ने ग़ज़ल पर आलेख भी लिखे तथा उसका विधान भी तराशने के सार्थक प्रयास किये। कुल मिला कर हिन्दी में ग़ज़ल ने अपने पैर जमा लिये हैं तथा वह हिन्दी काव्य में ऐसी घुल-मिल गई है कि अब ग़ज़ल को इससे अलग करना असम्भव नहीं तो मुश्किल जरूर है। मेरा तो यही मानना है कि यदि ग़ज़ल उर्दू की आबरू है तो हिन्दी की आरजू। शायद यही आरजू पूरी करने की नियत से श्री विजय कुमार तिवारी आपके सम्मुख 'फल खाए शजर' ग़ज़ल संग्रह रख रहे हैं।

'विजय' तुम वो सुखनवर हो जो पत्थर दिल को पिघला दे,
तुम्हें सुनकर बड़ी राहत मिली हम ग़म के मारों को।

श्री विजय कुमार तिवारी की गणना उन रचनाकारों में की जायेगी जिनकी शाइरी में मात्र निजी दुख-दर्द न होकर समाज के सुख-दुख, आम आदमी की पीड़ा का एहसास बड़े सलीके से प्रतिबिम्बित हुआ है –

बनता है महल जिसके हाथों से वही अक्सर,
आकाश तले जीवन करता है बसर देखो।
इस दौर के मंजर तो हद दर्जा निराले हैं,
पीती है नदी पानी, फल खाए शजर देखो।

इनकी वफा भावना एवं विचारों की बुनियाद पर टिकी हुई है। यह सही है कि जो जैसा होता है, वैसा ही दूसरों को समझता है।

वफ़ा चीज क्या है नहीं जानता जो,
वही कह रहा है 'विजय' बे-वफ़ा है।

जहाँ पर इनकी ग़ज़लों में प्रेमानुभूती और व्यक्तिकता भावुकता में परिलक्षित हुई है, वहीं पर भाव-पद्धति को अंगीकार करते हुये देश, धर्म, राजनीति, सामाजिक विसंगतियों पर भी इनकी नज़र गई है। इन्होंने बड़ी साफ़गोई से बिना किसी भय एवं दबाव के अपने उद्गार व्यक्त किये हैं।

हमारी साफ़गोई दोस्तों उनको न रास आई,
खरी कहदी भरी महफ़िल में तो झुंझला रहे हैं वो।

राजनीति पर इशारों से बात कहने का फ़न कम लोग ही जानते हैं। मगर तिवारीजी इसमें महारत रखते हैं।

रौशनी होगी सफर में इसलिए दी थी मशाल,
यह नहीं मालूम था वह घर जलाने आयेगा।

जब समाज की दुर्दशा देखते हैं तो उसको बड़ी शायसतगी के साथ चेतावनी देने से नहीं चूकते –

हर मोड़ पर ही ठोकरें खाई हैं आपने,
फिर भी जनाब आँख अभी तक खुली नहीं।
पतन की भयानक है खाई जहाँ पर,
डगर ये उसी मोड़ पर जा रही है।

अपने दर्द के बयान में बड़ी नफसियाती (मनोवैज्ञानिक) बात कहते हुये नज़र आ रहे हैं। कितना दर्द इनके दिल में है, इसका अंदाजा एक भावुक मन ही कर सकता है।

हँसी के बाँध से सैलाबे-ग़म को रोकता तो हूँ,
मगर तन्हाई में ये बाँध अक्सर टूट जाता है।

खिताबात और इनामात के वितरण पर कितना अच्छा व्यंग्य किया है मुल्हायजा फरमाइये –

न तो दिवंगत हूँ औ' न बूढ़ा,
पदक पुरस्कार पाऊँ कैसे ?

एक सच्चे साहित्यकार में जो खुद्दारी और साहस होना चाहिए, उससे तिवारीजी भी अछूते नहीं हैं –

क़लम छोड़ सकता नहीं वो कभी,
'विजय' का तू करदे भले सर क़लम।

जलाले दीप निडर हो के यार तूफाँ में,
हुई कभी भी किसी रोशनी की हार नहीं।

बीच भँवर में हीम्मत हमको,
जीवन जीना सिखलाती है।

चिकना घड़ा आखिर चिकना घड़ा है, उस पर किसी बात का असर कहाँ–

यक़ीन हो ही गया आज तुझको समझाकर,
कभी ढलान पे पानी ठहर नहीं सकता।

महानगरों की आपाधापी तथा पर्यावरण के एहसास को इनका संवेदनशील मन सुबह-शाम महसूस करता है –

आज भौतिकवाद में औ' इस मशीनी दौर में,
शाम की रौनक सुबह की ताजगी मिलती नहीं।

इनका देश प्रेम देखना हो तो –

हमें है जान से प्यारा ज़मीं का स्वर्ग ये अपना,
न देंगे हम किसी क़ीमत पे जीते भी चिनारों को।

जहाँ इनमें वफ़ा, साहस, देश प्रेम, संवेदना, प्यार की अनुभूतियाँ हैं, वहीं विनम्रता का सागर है –

तान कर सीना अहम् का सबको ठुकराता अगर,
तो समन्दर से कभी कोई नदी मिलती नहीं।

उक्त अश्आर इस बात को प्रमाणित करने के लिए काफी हैं कि श्री तिवारी जी ने 'फल खाए शजर' के रूप में एक ख़ूबसूरत तोहफा पेश किया है। वर्तमान में अनेक ग़ज़लगो कवियों की कई अच्छी पुस्तकें भी प्रकाश में आईं। इन रचनाकारों की कृतियों के बीच 'फल खाए शजर' भी अपनी रोशनी निश्चित बिखेरेगा। यह संग्रह भी अच्छी ग़ज़लों का सरमाया है। इसमें लगभग 69 ग़ज़लें संग्रहित हैं और सभी में ग़ज़ल की पारम्परिक मान्यताओं के साथ नयी विचारधारा एवं सोच मिलती है। श्री तिवारी ने अपनी ग़ज़लों में व्यापक परिवेश देने का प्रयत्न किया है। जिसमें उन्हें वांछित कामयाबी भी मिली है। इनकी ग़ज़लों में सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इनमें व्यक्त किया गया दर्द इनका अपना दर्द नहीं है। इन्होंने इस शेर को चरितार्थ कर दिया है कि –

खंजर चले किसी पे तड़पते हैं हम 'अमीर',
सारे जहाँ का दर्द हमारे जिगर में है।

इस तरह इन्होंने लोक - भावना का प्रतिनिधित्व करने वाले एक श्रेष्ठ रचनाकार की भूमिका बखूबी निभाई है। देश-भक्ति, दर्शन, समाज, उत्सर्जना, विरोधाभास, मानवता, भावना, भावुकता, साहस, आदमी का आदमी से व्यवहार, पूजा, प्रेम, राजनीति और सामाजिक विसंगतियाँ जैसी ज्वलन्त समस्याओं को अपनी ग़ज़लों में सोच की गहराई में जाकर उजागर किया है। इनकी भाषा विशुद्ध खड़ी बोली है तथा उर्दू और हिन्दी के शब्दों को बराबरी के साथ प्रयोग करने में कोई हिचक नहीं है। इनके बात कहने का अंदाज बड़ा बेबाक एवं असरदार है। श्री तिवारी वक्त के प्रति जागरूक हैं तथा इनकी कृति को देखकर सहसा मुझे अपनी यह पंक्तियाँ याद आ रही हैं।

है तुम्हारी ग़ज़ल न हमारी ग़ज़ल,
सबको लगने लगी आज प्यारी ग़ज़ल।
कहते होंगे कभी मीर ग़ालिब मगर,
आजकल कह रहे हैं तिवारी ग़ज़ल।

– अंसार कंबरी
वरिष्ठ साहित्यकार
जफ़र मंजिल, 11/116, मकबरा,
ग्वालटोली, कानपुर- 208001

❖

टीस भरी अपील

– उषा राजे सक्सेना

जनाब विजय तिवारी की ग़ज़लें 'फल खाए शजर' नज़र में आई। अपने नाम के मुताबिक ये ग़ज़लें एक अलग किस्म की शायरी हैं। इस संग्रह की सभी ग़ज़लों का मिजाज यकसाँ नज़र नहीं आता है। यानी कि यह एक रंग-बिरंगे फूलों का गुलदस्ता है। कहीं पर कोई ग़ज़ल रूमानी खयालातों, हुस्न-इश्क के दरमिया बसर करती है, तो कहीं एक बेचैनी का एहसास भी कराती है जिनमें बदलते हुए समाज के बिखरते हुए मूल्यों के प्रति चिंता और नष्ट होती संवेदनाओं में से कुछ 'अच्छा' बचा लेने की टीस भरी अपील नज़र आती है। यानी तिवारी जी की ग़ज़लें रूमानी दायरे में क़ैद न रहकर आज की विडम्बनाओं, विसंगतियों और वेदनाओं से सीधी जुड़ी हुई हैं।

प्रस्तुत ग़ज़लों में हिन्दी कविता का प्रभाव व्यापक है। ग़ज़लों में शुद्ध हिन्दी एक अच्छा प्रयोग है। ग़ज़लों का शिल्प न केवल सधा हुआ है बल्कि उसका सराहनीय निर्वाह भी हुआ है। ये रचनाएँ तिवारी जी की दीर्घकालीन काव्य- साधना की उपलब्धि हैं। मुझे पूरी आशा है कि इस काव्य संग्रह का हिन्दी जगत में भरपूर स्वागत होगा।

– उषा राजे सक्सेना
उपाध्यक्ष, हिन्दी समिति, यू. के.
सह सम्पादिका - 'पुरवाई' लन्दन
54, हिल रोड, मिचम, लन्दन

❖

प्रस्तवन

– डॉ. अनन्तराम मिश्र 'अनन्त'

हिन्दी-कविता की सम-सामयिक विधाओं में ग़ज़ल प्रमुख है। राष्ट्रभारती के भक्तिकाल में ही इसके रचनाधर्म के दर्शन होते हैं, परन्तु वर्तमान में स्व. दुष्यन्त कुमार इस विधा के पुरोधा हैं। उनकी ग़ज़लों के प्रकाशन, प्रसार एवं प्रतिष्ठापन के बाद हिन्दी-काव्य में ग़ज़ल लेखकों की संख्या दिनानुदिन वृद्धि पा रही है। यद्यपि समकालीन ग़ज़ल-सृजन के परिमाण - बाहुल्य में सब का सब स्तरीय और उत्कृष्ट नहीं है। तथापि उसीमें अनेक ग़ज़लकार ऐसे भी हैं, जिनसे वह हिन्दी में स्वतंत्र तथा अभीष्ट स्थान बना सकी है और काव्य-मर्मज्ञों में प्रतिष्ठित हुई है।

श्री विजय कुमार तिवारी भारत के धुर पश्चिमाँचल अहमदाबाद के निष्ठावान हिन्दी - उपासक हैं। अन्तरराष्ट्रीय हिन्दी काव्य-संकलन के ऐतिहासिक संपादन के अतिरिक्त वे ग़ज़ल भी कहने में माहिर हैं। सन् 1991 ई. में उनका पहला ग़ज़ल- संग्रह 'निर्झर' प्रकाशित और चर्चित हो चुका है। 'फल खाए शजर' उनका दूसरा ग़ज़ल-संग्रह है। आजकल हिन्दी की ग़ज़ल तीन भाषिक रूपों में रची जा रही है- ठेठ उर्दू में, संस्कृतनिष्ठ हिन्दी में तथा प्रचलित सार्वजनिक शब्दावली से समन्वित हिन्दुस्तानी में | तत्सम हिन्दी में सबसे कम और हिन्दुस्तानी में सर्वाधिक ग़ज़लें लिखी जा रही हैं। तिवारीजी की भी अधिकांश ग़ज़लें हिन्दुस्तानी में रचित हैं, जिनमें हिन्दी-उर्दू की गंगाजमुनी छवि मुखर है तथा कथ्य की सम्प्रेषणीयता एवं पारदर्शिता भी बलवती है।

माँ शारदा से तम को ज्योति में बदलने, कर्त्तव्य-बोध और आदर्शों पर अड़िग रहने के प्रार्थी विजयजी अपनी ग़ज़लों में 'लोभ, तृष्णा, छल, प्रपंचों से भरे युग' के यथार्थ बिम्ब तन्मयता से प्रस्तुत करते हैं। उनकी सृजनधर्मिता का आत्म- विश्वास इसमें मुखर है –

आप क्या चीज हैं मैं गीत ग़ज़ल से अपने,
चाँद, सूरज ये सितारे भी नचा सकता हूँ।

हजारों दोस्त तथा बेशुमार ज़ख़्म पाने वाले कवि ने बेगुनाहों के क़त्ल देखे हैं, और मुज़रिम फरार। शेर की खाल ओढ़कर सियारों के राज को भी वह देख रहा है तथा फूल देकर भी खार पाता है। दोस्तों की गद्दारी एवं बेवफाई उर्दू-शाइरी की एक 'काव्य- रूढी' है। बहुसंख्य शायरों ने इस विषय पर चोट करने वाले शेर कहे हैं। अतः विजय जी का यह शेर–

दोस्त हमने हजार पाये हैं,
ज़ख़्म भी बेशुमार पाये हैं।

पढ़ते या सुनते ही ऐसे अनेक शेर याद आने लगते हैं। एक शायर ने कहा है–

चोट खा के जो देखा कमीगाह की तरफ,
अपने ही दोस्तों से मुलाकात हो गयी।

बीते कल की आस्थाओं का स्वर था

ब्रच्छ न फल भच्छन करै नदी न संचै नीर।
परकारज के कारनै साधुन धरा शरीर ॥

जो कि कालिदास की इस मान्यता का लोक-स्वीकृत भावानुवाद है –

भवन्ति नम्राः तरवः फलोद्गमैः नवाम्बुभिर्दूरविलम्बिनो घनाः
अनुद्धताः सत्पुरुषाः समृद्धिभिः स्वभाव एवैष परोपकारिणः

परन्तु अतीत का वह उदात्त जीवन-मूल्य आज ऐसे अवमूल्यन को प्राप्त है कि कवि को कहना पड़ता है –

इस दौर के मंजर तो हद दर्जा निराले हैं,
पीती है नदी पानी, फल खाए शजर देखो।

ग़ज़लगो ने ऐसी ही युगीन विसंगतियों और कथनी-करनी के भेद को अनेक स्थलों पर प्रभावी ढंग से उजागर किया है। कुछ पक्तियाँ देखें –

जो कहते थे यहाँ हम दूध की नदीयाँ बहायेंगे,
ज़मी को बेख़ता के ख़ून से नहला रहे हैं वो।

जो अभी पर्यावरण पर दे गया भाषण यहाँ,
देखना वो रात में जंगल कटाने आयेगा !

जो थे खिलाफ मय के वही कह रहे हैं अब,
जीवन तेरा फिजूल है 'गर तू ने पी नहीं।

कबीर ने सदियों पहले कहा था –

दोस पराये देख के चले हसन्त हसन्त,
अपने कबौ न देख हीं, जिनके आदि न अन्त।

श्री विजय ने इसी तथ्य को युगीन सन्दर्भ में यों कहा है –

सभी कह रहे हैं ज़माना बुरा है,
मगर कोई ख़ुद में नहीं झाँकता है।

'प्रगतिशील' ग़ज़लों के अतिरिक्त इस संग्रह में कुछ ग़ज़लें प्रेम-श्रृंगार से भी सम्पृक्त हैं। इन्हें 'पारम्परिक' भी कह सकते हैं, क्योंकि ग़ज़ल का परम्पराबद्ध रूप प्रेम-श्रृंगार ही है। यथार्थ के मरुस्थल में तपने के बाद मानो कवि प्रणय की अमराइयों की छाँव में जाता है, जहाँ मृदु-सुकुमार भावनाएँ उसके घावों पर मरहम लगाती हैं। ऐसे कुछ शेर यहाँ दृष्टव्य हैं।

याद तुम्हारी ये लाती है,
रात न जाने क्यों आती है ?

शाम ढ़ले परछाई हमसे,
चुपके-चुपके बतियाती है।
झील लगे जंगल में जैसे,
पायलिया-सी खनकाती है।

कुल मिलाकर तिवारीजी की ग़ज़लों में युगीन विरूपताएँ मुँह भर बोलती हैं, व्यंग्य - प्रहार करती हैं और कुछ सोचने-करने के भाव भी जगाती हैं। उनके उत्तरोत्तर साहित्यिक उत्कर्ष की कामना करता हुआ मैं उन्हीं के शब्दों में उनके ग़ज़ल-वैशिष्ट्य को रेखांकित कर विराम लेना चाहूँगा।

'विजय' तुम वो सुखनवर हो जो पत्थर दिल को पिघला दे,
तुम्हें सुनकर बड़ी राहत मिली हम ग़म के मारों को।

– डॉ. अनन्तराम मिश्र 'अनन्त'
सीनियर रीडर, हिन्दी विभाग,
केन ग्रोअर्स नेहरू पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज,
गोला, गोकर्णनाथ खीरी - 262802

❖

स्वागत योग्य ग़ज़लें

– डॉ. उर्मिलेश

श्री विजय कुमार तिवारीजी की ग़ज़लों से गुजरते हुए यह राय सहज ही बन जाती है कि श्री तिवारी हिन्दी ग़ज़ल के मर्यादित और मंजे हुए हस्ताक्षर हैं। ग़ज़ल के पारम्परिक शिल्प का सम्यक् निर्वहन करते हुए उन्होंने कुछ ग़ज़लें हिन्दी छन्दों में भी कही हैं। मतला, मक्ता और शेर की कहन के लिए जिस ग़ज़लात्मक सोच और अन्दाज़ की जरूरत है, उसे बखूबी इन ग़ज़लों में देखा जा सकता है।

अपनी सामाजिक संलग्नता और प्रासंगिकता से जहा ये ग़ज़लें हमें जोड़ती हैं वहीं ग़ज़लकार के वैयक्तिक अनुभवों से भी हमारा साक्षात् कराती हैं। मानवीय संवेदना के साथ युगीन सन्दर्भों की बिम्बात्मक और प्रतिकात्मक अभिव्यक्ति इन ग़ज़लों में है। इन ग़ज़लों का सबसे बेहतरीन पक्ष है व्यंग्यात्मकता। आज के विसंगत परिवेश में व्यंग्य जीवन और साहित्य का बेहद ज़रूरी हिस्सा बन गया है। राजनीति, समाज, धर्म, घर-परिवार, रिश्ते, दैनिक व्यवहार, सभी में जो विरूपताएँ फैली हुई हैं, उन्हें व्यंग्य के माध्यम से ही सशक्त अभिव्यक्ति दी जा सकती है। श्री विजय तिवारी का ग़ज़लकार अपने समय से जुड़कर सारी स्थितियों-परिस्थितियों को व्यंग्यात्मक लहजे में हमारे समक्ष रखता है। कुछ शेर आप भी देखें -

शेर की खाल ओढ़कर अक्सर,
राज करते सियार पाए हैं।
नई दुल्हन की डोली को शहर की भीड़ में लूटा,
दिया हमने ही रहकर मौन ये साहस कहारों को।
आ गया है वक्त वो बस्ती जलाने आएगा,
फिर वही दमकल लिए इसको बुझाने आएगा।
लूट, चोरी, ख़ून खुलकर लोकशाही में करो,
शान से शासन तुम्हें सर पर बिठाने आयेगा।

अपने समय के सत्यों से ये ग़ज़लें पूरी तरह बा - ख़बर हैं। केवल दो शेर ही इस दृष्टि से काफ़ी होंगे –

आज भौतिकवाद में औ' इस मशीनी दौर में,
शाम की रौनक सुबह की ताज़गी मिलती नहीं।
हर हाथ में खंज़र है सीनों में ज़हर देखो,
बहता है लहू हर सू अब चाहे जिधर देखो।

व्यक्ति के अन्दर और बाहर आज जो संघर्ष चल रहा है उसकी अत्यन्त अन्तरंग और आत्मीय अभिव्यक्ति भी इन ग़ज़लों में हुई है। मसलन–

ये धागा प्रेम का जुड़ जाए इस कोशिश में हूँ लेकिन,
यहाँ से जोड़ता हूँ तो वहाँ से टूट जाता है।
हर क़दम, हर पल वो मेरे साथ है,
फिर भी उसकी जुस्तजू होने लगी।

इन ग़ज़लों में एक साथ जहाँ अवसाद - आह्लाद, आस्था - अनास्था, आशा- निराशा से संवलित अशआर आपको मिलेंगे तो प्रेम और सौन्दर्य के सिलसिले में कुछ नई उपमाओं और रूपकों से भरे हुए शेर भी। जहाँ तक प्रतीकात्मकता का सवाल है, कवि ने अपने नज़दीक से ही ज्यादातर प्रकृति और रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में काम आने वाले प्रतीकों को ही लिया है किन्तु कहीं-कहीं पौराणिक प्रतीक जैसे सीता, गिरिधर, पाण्डव आदि को भी नए सन्दर्भों में ढालकर प्रस्तुत किया है, यद्यपि कवि के पास एक उर्वर सांस्कृतिक और भाषिक चेतना है, तो भी कहीं- कहीं कुछ खटकने वाली बातें भी हैं। जैसे –

तुम मेरी कब्र पर ऐ 'विजय',
सिर्फ़ काँटे चढ़ाया करो।

यहाँ 'कब्र' का प्रयोग कवि की सांस्कृतिक चेतना को क्षरित करनेवाला है। इसी तरह 'किताबे - बदखुलूसी', 'साहिबे - फ़न', 'हुस्ने - लाजवाब', 'कोहे - ग़म' जैसी उर्दू भाषा की सन्धियों से बचा जा सकता था। हिन्दी ग़ज़ल की प्रामाणिकता लांछित न हो, इसके लिए उर्दू भाषा के शब्द - प्रयोग पर हमें आपत्ति नहीं होनी चाहिए। हाँ, उर्दू के सन्धि-प्रयोगों से हमें जरूर बचना चाहिए, क्योंकि वे हिन्दी भाषा की प्रकृति के ठीक विपरीत पड़ते हैं। खैर, मैं श्री विजय तिवारी को बधाई दूँगा कि वे इन ग़ज़लों के ज़रिए हमें हिन्दी ग़ज़ल की विकास-यात्रा के प्रति आश्वस्त करते चलते हैं। इन ग़ज़लों की बिम्बात्मक भाषा अलग से अपनी पहचान बनाने में समर्थ है। बिम्बात्मकता की दृष्टि से एक शेर जो मुझे बेहद प्यारा लगा, उसका लुत्फ़ आप भी लें–

शाम ढ़ले परछाई हमसे,
चुपके-चुपके बतियाती है।

सचमुच श्री विजय कुमार तिवारी की ये ग़ज़लें भी आपसे चुपके-चुपके बतियाऐंगी और इन बातों में होगा आपका देश- परिवेश, प्रेम, आस्था, खुद्दारी, सामाजिक-राजनीतिक विद्रूपताएँ- यानि वह सब कुछ जिसे आप जी रहे हैं या फिर जीना पड़ रहा है।

कुल मिलाकर हिन्दी ग़ज़ल की यात्रा में श्री विजय कुमार तिवारी की ग़ज़लें एक अच्छे शकुन का संकेत देती हैं। इन ग़ज़लों का स्वागत होना ही चाहिए,

- डॉ. उर्मिलेश
रीडर एवं शोध निदेशक, हिन्दी विभाग,
नेहरु मेमोरियल शि. ना. दास स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बदायूं

❖

निजीपन और सामाजिक सरोकार की ग़ज़लें

– डॉ. कुँअर बेचैन

हिन्दी कविता की मंदाकिनी में इन दिनों जिस काव्य-विधा की सरिता आकर मिली है, वह काव्य-विधा उर्दू साहित्य की अमूल्य निधि 'ग़ज़ल' है। ग़ज़ल जब हिन्दी के साथ जुड़ी तो वह स्वयं भी समृद्ध हुई तथा हिन्दी कविता को भी समृद्ध किया।

वैसे हिन्दी के कवियों द्वारा लिखी जानेवाली ग़ज़ल का इतिहास क्रम चाहे जितना पुराना हो किन्तु जो ग़ज़ल को हिन्दी में एक नया रंग तथा विकास मिला उसका इतिहास पिछले पच्चीस-तीस साल का है। इतने कम समय में हिन्दी ग़ज़ल ने एक लम्बा फासला तय किया और स्वयं को नये-नये मोड़ और नवीन तेवर प्रदान किये। कथ्य और शिल्प दोनों ही स्तरों पर हिन्दी में कही जाने वाली ग़ज़ल विविध-आयामी है। विषय के इतने दरवाजे पहले ग़ज़ल के लिए कभी नहीं खुले थे। शिल्प के क्षेत्र में भी प्रतीक पद्धति की दृष्टि से ग़ज़ल ने अपना नया रूप सँवारा। ग़ज़ल की भाषा बोलचाल की भाषा के क़रीब होती गई। उर्दू वालों ने ठेठ फारसीपन को त्यागा और हिन्दी वालों ने ग़ज़ल कहते समय यह ध्यान रखा कि वह ठेठ संस्कृतनिष्ठ भाषा में बँधकर न रह जाय। आशय यह है कि उर्दू ग़ज़ल और हिन्दी ग़ज़ल दोनों ही भाषा की दृष्टि से एक दूसरे के बहुत क़रीब आईं। सच पूछा जाय तो एक प्रकार से भाषा का भेदभाव ही मिट गया। इन दिनों कही जाने वाली ग़ज़ल में यदि हम हिन्दी या उर्दू ढूँढ़ने लगें या यह पता लगाने निकल पड़ें कि अमुक ग़ज़ल हिन्दी की है या उर्दू की, तो शायद निराशा ही हाथ लगे। बड़ा स्वस्थ लक्षण है यह। कारण यह है कि सच्ची ग़ज़ल बोलचाल की भाषा में ही अपना 'प्रभाव' तथा 'प्रवाह' छोड़ती है।

अहमदाबाद के प्रसिद्ध कवि श्री विजय तिवारी का यह ग़ज़ल संग्रह 'फल खाए शजर' हिन्दी कविता के क्षेत्र में ग़ज़ल विधा की एक प्रमुख कड़ी है। श्री विजय तिवारी को ग़ज़ल कहने का सलीका आता है। निश्चय ही वह ग़ज़ल की आत्मा से परिचित हैं। उनकी ग़ज़लें वैसे बहुत सरल तथा सहज हैं किन्तु सोचो तो सोचने को मजबूर करती हैं।

हिन्दी ग़ज़ल का मुख्य स्वर व्यंग्य का रहा है। दुष्यंत कुमार ने 'साये में धूप' ग़ज़ल-संग्रह के तरकश से जो तीर निकाले थे उनकी मार बहुत दूर तक थी। विजय की ग़ज़लों में भी आज के परिवेश की विसंगतियों पर गहरे प्रहार हैं। ऐसे प्रहार, ऐसी चोटें जो वर्तमान समय के अनगढ़ पत्थर में से समाज की सुन्दर और पूजा योग्य मूर्ति तराशने में सफल हुई हैं। प्रहार यदि ठीक शक्ल में लाने के लिए हो तो उसे प्रहार नहीं कहा जाता वरन् उसे कला कहा जाता है। विजय की ग़ज़लें व्यवस्था पर जो चोट करती हैं वह केवल प्रहार के लिए नहीं हैं, वरन् समाज को सुन्दर बनाने के लिए हैं। इस प्रकार के कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं। अर्थनीति पर चोट करते हुए वे कहते हैं–

यहाँ भर पेट पानी भी मयस्सर हो नहीं पाता,
वहाँ कुत्तों को देखो दूध से नहला रहे हैं वो।

इसी प्रकार धर्म के ठेकेदारों पर, उनकी कट्टरता को लक्ष्य करते हुए और उनकी हिंसा को दृष्टि-पथ में रखते हुए, किये गये ये व्यंग्य भी देखें–

जो कहते थे यहाँ हम दूध की नदीयाँ बहायेंगे,
ज़मी को बेख़ता के ख़ून से नहला रहे हैं वो।

साहित्यकारों को अधिकतर पुरस्कार तब ही मिलते हैं जब वे बूढ़े हो जाएँ या दिवंगत हो जाएँ। ऐसी नीति पर व्यंग्य करते हुए श्री विजय तिवारी ने एक अच्छा और सच्चा शेर कहा है–

न तो दिवंगत हूँ औ' न बूढ़ा,
पदक पुरस्कार पाऊँ कैसे।

वे लोग जिनसे औरों को कुछ मिलना चाहिए था, वे स्वयं ही सब कुछ हड़प रहे हैं। ऐसा न होता तो विजय भाई यह शेर न कहते

इस दौर के मंजर तो हद दर्जा निराले हैं,
पीती है नदी पानी, फल खाए शजर देखो।

आज का युग वैज्ञानिक युग है। मशीनीकरण और शहरीकरण इसकी देन। इस ग़ज़ल संग्रह के कवि ने शहरीकरण और मशीनीकरण के कारण छिने हुए प्राकृतिक वातावरण के सम्बन्ध की वास्तविकता को उकेरा है –

आज भौतिकवाद में औ' इस मशीनी दौर में,
शाम की रौनक सुबह की ताजगी मिलती नहीं।

यों तो हमेशा ही रिश्ते टूटते और जुड़ते रहे हैं किन्तु वर्तमान समय की विसंगतियों तथा विवशताओं ने रिश्तों के साथ सबसे अधिक छेड़खानी की है नज़दीकी और पारिवारिक रिश्तों की टूटन तो इन दिनों कुछ ज्यादा ही देखने में आ रही है। कोशिश करते हुए भी रिश्ते बच नहीं पा रहे हैं। इस सत्य को कवि विजय तिवारी ने अच्छी तरह पहचाना है और एक बहुत ही अच्छा, बहुत ही प्यारा और महत्वपूर्ण शेर कहा है.

ये धागा प्रेम का जुड़ जाए इस कोशिश में हूँ लेकिन,
यहाँ से जोड़ता हूँ तो वहाँ से टूट जाता है।

रिश्तों की टूटन के प्रमुख कारणों में से एक यह कारण भी है –

पता नहीं कि ज़माने को क्या हुआ है 'विजय',
किसी को आज किसी पर भी एतबार नहीं।

आज शिक्षा पर अधिक जोर दिया जा रहा है। शिक्षा की ज्योति के आलोक में व्यक्ति और अधिक सभ्य होना चाहिए था, विध्वंस-विरोधी तथा निर्माणकारी होना चाहिए था, किन्तु आज की शिक्षा आज के समाज को हिंसा के रास्ते पर ले जा रही है, विध्वंस के रास्ते पर ले जा रही है। मशाल तो इसलिए दी गई थी कि उससे रास्ते रोशन हो जायेंगे किन्तु

किसी को क्या पता था कि लोग इन मशालों का दुरुपयोग करेंगे, लोगों के घर जलायेंगे।

रौशनी होगी सफर में इसलिए दी थी मशाल,
यह नहीं मालूम था वह घर जलाने आयेगा।

ग़ज़ल में यों तो अनेक शेर होते हैं, किन्तु सबसे अच्छे शेर वे माने जाते हैं जिनमें शेरियत हो तथा जीवन का गहरा अनुभव भी हो। जो 'सूक्ति वाक्य' जैसे लगें। जो किसी विशेष घड़ी में, किसी ज्वलंत घटना के घटित होने पर स्वयमेव याद आयें। विजय तिवारी जी के इस संग्रह में बीसियों शेर इस प्रकार के हैं उनमें से कुछ ये हैं, देखें –

बन्द कमरों में कभी भी रोशनी मिलती नहीं,
द्वार मन के बन्द हों तो ज़िन्दगी मिलती नहीं।

यकीन हो ही गया आज तुझको समझाकर,
कभी ढलान पे पानी ठहर नहीं सकता।
कभी जो प्यार किया हो किसी से तो जानो,
ये वो नशा है कभी जो उतर नहीं सकता।

आशय यह है कि यह संग्रह हिन्दी के ग़ज़ल-संग्रहों की कड़ी में एक ऐसा ग़ज़ल-संग्रह माना जायेगा जो अपने 'निजीपन' तथा 'सामाजिक सरोकार' के कारण पसंद किया जायेगा। इस संग्रह का कवि वास्तव में 'रचनाकार ' है। सच्चा रचनाकार वही है जो एक ओर काव्य-रचना कर रहा हो और दूसरी ओर समाज- रचना के गुरुभार को भी वहन कर रहा हो। मुझे प्रसन्नता है कि भाई विजय तिवारी अपनी रचनाओं में इस दृष्टि से एकदम खरे उतरते हैं। उन्हें पुस्तक - प्रकाशन के इस महोत्सव पर अनेक बधाइयाँ देते हुए।

– डॉ. कुँअर बेचैन
रीडर एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग,
एम. एम. एच. कॉलेज, गाजियाबाद

❖

एक शायर - चिंता एवं चिंतन में डूबा

– चन्द्रसेन विराट

यह जरूरी नहीं है कि ग़ज़ल कहने वाला हर शायर अपने वक्त की चिंता में डूबा हुआ हो और चिंतन भी कर रहा हो। श्री विजय कुमार तिवारी किन्तु ऐसे ही एक शायर हैं जो चिंता भी कर रहे हैं और चिंतन भी। उन्हें चिंता है कि देश का क्या होगा क्योंकि वे कहते हैं –

इस दौर के मंजर तो हद दर्जा निराले हैं,
पीती है नदी पानी, फल खाए शजर देखो।

उस देश-भूमि खंड का क्या होगा, जिसकी नदियाँ अपना पानी स्वयं पीती हों और पेड़ स्वयं अपने फल खाते हों। कितनी कलात्मक उक्तियों के साथ शायर ने देश के प्रति अपनी चिंता व्यक्त की है।

वे केवल चिंता व्यक्त करके नहीं रह जाते। आगे भी सोचते हैं। कहते हैं–

बन्द कमरों में कभी भी रोशनी मिलती नहीं,
द्वार मन के बन्द हों तो ज़िन्दगी मिलती नहीं।

इतना ही नहीं वे अपने चिंतन के प्रति भी सतर्क हैं। कहते हैं।

हरिक शै की तह में नज़र जा रही है,
मेरी सोच आखिर किधर जा रही है।

एक चिंतक के लिए चिंतन आवश्यक तो है ही। उसके साथ सोच भी दिशाहीन नहीं हुई है, यह चिंता भी आवश्यक है। 'विजय' के पास यह दोनों हैं एक साथ। इसलिए उनकी चिंता आवश्यक चिंतन के साथ सार्थक हो उठती है। कविता की सार्थकता इसी में तो है।

चिंतन करते करते वह समाज की विसंगतियों पर भी दृष्टि डालता चलता है और उन पर करारा व्यंग्य भी करता है। समाज में पुरस्कारों की राजनीति और उसमें व्याप्त विडम्बनाओं को देखकर वह कह उठता है।

न तो दिवंगत हूँ औ' न बूढ़ा,
पदक पुरस्कार पाऊँ कैसे।

यह चिंतन का ही प्रतिफल कहा जायेगा जो कवि को समाज में व्याप्त विसंगतियों पर व्यंग्य करने को प्रेरित करता है और अपनी बात पूरी ताकत के साथ कहने की हिम्मत भी देता है।

कवि विजय की चिंता का तारतम्य बढ़ता ही जाता है, जब वह कह उठते हैं।

पतन की भयानक है खाई जहाँ पर,
डगर ये उसी मोड़ पर जा रही है।

मूल्यों के स्खलन एवं सद्गणों के ह्रास के प्रति निरंतर रूप से चिंतित हैं और कहते हैं –

ऐसा लगता है कि सद्गण मिट चुके संसार से,
साफगोई, स्वाभिमान औ' सादगी मिलती नहीं।

विसंगतियों की ओर इंगित करना भी व्यंग्य को प्रकारांतर से व्यक्त करना है–

यहाँ भर पेट पानी भी मयस्सर हो नहीं पाता,
वहाँ कुत्तों को देखो दूध से नहला रहे हैं वो।

चूँकि यह चिंता है कवि को तो उसका चिंतन भी उसे विचार देता है

हिफ़ाजत चाहते हो तो सजग रहना जरूरी है,
न गुजरे सर से पानी बांध दो पहले किनारों को।

कवि होना अपनी जगह महत्वपूर्ण है किन्तु एक सामान्य मनुष्य होना उससे भी अधिक महत्वपूर्ण है। सामान्य मनुष्य प्रेम करता है, प्रेम पाता है। वह उल्लसित होता है तो निराश भी। यही साधारणता उसे मनुष्य बनाये रखती है। वह कहता है–

मेरे नसीब में शायद कोई बहार नहीं,
इधर को आती कभी ख़ुशनुमा बयार नहीं।

सामान्य आदमी अपनी निराशा से भी उबरता है और फिर सामान्य ज़िन्दगी में व्यस्त हो जाता है।

निराश हो के बिखर जाऊँ मैं वो शख़्स नहीं,
किसी का वक्त पे बेशक है इख्तियार नहीं।

कवि 'विजय' का स्वयं से साक्षात्कार करते हुए यह कहना –

अभी तू सीख ज़रा क्या है गीत और ग़ज़ल,
तुकें मिला के तेरा फन निखर नहीं सकता।

पाठकों को सुखद आश्वासन देता है कि कवि अपनी सीमा को खूब जानता है और अपनी कला के आयामों के प्रति भी चिंतित है और सचेत भी। सृष्टि के शाश्वत विषय प्रेम पर भी कवि 'विजय' ने जोर आजमाइश की है और खूब प्यारे शेर कहे हैं। उसने कमल थामी तो अब अपनी मंजिल पाये बिना उसे छोड़ेगा नहीं।

क़लम छोड़ सकता नहीं वो कभी,
'विजय' का तू करदे भले सर क़लम।

कवि का आत्मविश्वास स्तुत्य है। मेरी बहुत बहुत शुभकामनाएँ।

– चन्द्रसेन विराट
वरिष्ठ साहित्यकार
'समय' 121, वैकुंठधाम कॉलोनी, इन्दौर-452001

❖

विलक्षण तरुणाई का परिचय

– भगवानदास जैन

प्रिय बन्धु विजय तिवारी मेरे परमस्नेही मित्र हैं, अत: उनके ग़ज़ल-संग्रह 'फल खाए शजर' के प्रकाशन के अवसर पर मुझे अपरिमित आनंद की अनुभूति हो यह स्वाभाविक है।

श्री विजय तिवारी आज पश्चिमांचल के इने-गिने ग़ज़लकारों में प्रतिष्ठित हो चुके हैं। देश-विदेश की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में जब मैं उनकी ग़ज़लों को प्रकाशित होते देखता हूँ तो मेरा आनंद दूना हो जाता है। आज उनकी ग़ज़लों का यह ग्रंथस्थ एवं प्रकाशित स्वरूप देखकर मुझे संतोष हुआ।

विजय प्रतिबद्ध कवि नहीं है। उन्होंने हर रंग की ग़ज़लें कही हैं। उनकी ग़ज़लें बहु आयामी हैं। कहीं ग़ज़लकार सियासी चेहरों को बेनकाब करता है, कहीं शासन-प्रशासन की मक्कारियों की धज्जियाँ उड़ाता है, कहीं तथाकथित अपनों की बेवफ़ाई पर क्षोभ प्रकट करता है, तो कभी वर्तमान दोगली और विषम व्यवस्था पर जमकर प्रहार करता है। इसके अलावा विजय की ग़ज़लों में तग़ज्जुल के रंग भी आपको इतस्ततः बिखरे हुए दिखाई देंगे। प्रेम, सौंदर्य और भक्ति के रंग में डूबे चित्र भी कई शेरों में उभर आए हैं और वतनपरस्ती या राष्ट्रभक्ति से लबरेज़ शेर भी अनेकत्र पढ़ने को मिलते हैं। 'यथा नाम तथा गुण:' के अनुसार विजय की अखंड आस्था, अडिग आत्मविश्वास, अप्रतिहत मनोबल तथा उनकी जिंदादिली और खुद्दारी भी उनकी ग़ज़लों के कई शेरों में उतर आई है। वैसे तो नज़र अपनी-अपनी, ख़याल अपना अपना, बहरहाल विजय की ग़ज़लों के मेरी अपनी पसंद के कुछ चुनिंदा शेर देखिए और महसूसिए उनमें निहाँ नए दौर के मुख्तलिफ़ रंग –

सभी कह रहे हैं ज़माना बुरा,
मगर कोई ख़ुद में नहीं झाँकता है।

क़िताबे बदख़ुलूसी के छिपाकर स्याह पन्नों को,
ज़माने को गुलाबी आवरण दिखला रहे हैं वो।

जिगर शरीर में फौलाद का ही रखता हूँ,
मुझे समझ न तू पारा बिखर नहीं सकता।

लूट, चोरी, ख़ून खुलकर लोकशाही में करो,
शान से शासन तुम्हें सर पर बिठाने आयेगा।

हँसी के बाँध से सैलाबे - ग़म को रोकता तो हूँ,
मगर तन्हाई में ये बाँध अक्सर टूट जाता है।

गरज कि विजय ने हर रंग के शेर कहे हैं, फिर भी बहुधा उनकी नज़र आज के आम आदमी और उसके दु:ख दर्दों पर ही केन्द्रित रही है। तरूण कवि विजय की क़लम से निकली हुई इन ग़ज़लों में क़दम क़दम पर आपको उनकी विलक्षण तरुणाई का परिचय होगा। पुख्ता

शाइरी और मुकम्मिल शोहरत की मंजिल उनका इंतजार कर रही है।

विजय की शाइरी यक़ीनन ग़म के मारे पाठकों के लिए सिर्फ लुत्फोमज़ा का ही जारिया नहीं, वरन् राहतेजाँ और सुकूनेदिल भी है। प्रस्तुत है विजय की ही एक ग़ज़ल का मक्ता

'विजय' तुम वो सुखनवर हो जो पत्थर दिल को पिघला दे,
तुम्हें सुनकर बड़ी राहत मिली हम ग़म के मारों को।

प्रिय विजय के लिए मेरी तो यही दुवा है, कि

'खुदा करे ज़ोरे क़लम और ज़ियादा !'

- भगवानदास जैन
वरिष्ठ साहित्यकार
बी-105 मंगलतीर्थ पार्क, कैनाल के पास,
जशोदानगर रोड, मणीनगर (पूर्व), अहमदाबाद - 382445

❖

रोमांचकारी ग़ज़ल संग्रह

– भारतेन्दु श्रीवास्तव

'फल खाए शजर' के शीर्षक से सम्भवतः पाठक यह समझने लगें, जैसा कि सर्वप्रथम मेरी प्रतिक्रिया थी कि यह ग़ज़ल संग्रह काफी कठिन होगा क्योंकि 'शजर' शब्द हिन्दी के शब्दकोषों में नहीं मिलता। परन्तु जैसे शजर का अर्थ इन ग़ज़लों को पढ़कर ही ज्ञात हो जाता है और साथ ही रसास्वादन भी होता है, मुझे विश्वास है कि पाठकों को श्री विजय तिवारी की 'फल खाए शजर' बहुत ही आनन्दवर्धक लगेगी और उर्दू के कुछ शब्दों का अनुपम ढंग से ज्ञान कराएगी।

यह ग़ज़ल संग्रह बड़ा ही अद्भुत,
इसका पठन आनन्दकारी है बहुत।
नदी पिए पानी और फल खाए शजर,
अनेकों आश्चर्यकारी दृश्य ऐसे हैं बहुत।

मुझे इसमें विज्ञान की सूक्ष्म दृष्टि भी दिखी। श्री तिवारी जी कहते हैं–

चाँद को सूरज प्रकाशित 'गर नहीं करता 'विजय',
तो किसी सूरत धरा को चाँदनी मिलती नहीं।

चन्द्रमा में अपना प्रकाश नहीं है बल्कि सूर्य के प्रकाश के परावर्तन से वह आलोकित लगता है। ज्योत्स्ना में अनगिनत प्रेमियों का प्रेम प्रचुर होता है और उनको रोमांचित करता है।

मुझे आशा है कि मुझ जैसे उर्दू के अल्प ज्ञान वाले व्यक्ति को इसमें आनन्द और ज्ञान दोनों का सम्मिश्रण मिला है। हिन्दी के पाठकों को ख़ुशी का इल्म और ख़ुशी से इल्म होगा।

श्री तिवारी जी को मेरी अनेकों शुभकामनाएँ और बधाइयाँ।

- भारतेन्दु श्रीवास्तव
64, लोंग्सवर्ड ड्राइव, स्कारबोरो,
औंटेरियो - कनाडा

'फल खाए शजर' को पढ़ते हुए

–डॉ. ओमप्रकाश शुक्ल

ग़ज़ल संग्रह का शीर्षक है— 'फल खाए शजर'; इसमें 'फल' संस्कृत शब्द है और 'शजर' मूलतः अरबी भाषा से उर्दू-हिंदी में आया शब्द जिसका अर्थ वृक्ष या दरख़्त है। 'फल खाए शजर' के रचनाकार श्री विजय कुमार तिवारीजी हिन्दुस्तानी ज़बान के समकालीन शायर हैं— रचना-शिल्प के स्तर पर ये ग़ज़लें हिंदी-उर्दू की गंगा-जमुनी तहज़ीब के बहुत क़रीब हैं। 'फल खाए शजर'(1999) का दूसरा संस्करण 2017 में प्रकाशित और साहित्य अकादमी गांधीनगर से पुरस्कृत है। हिंदी साहित्य की अन्य विधाओं की तरह ग़ज़ल का विस्तार हुआ; बल्कि कई अन्य विधाओं से अपेक्षाकृत अधिक। समकालीन ग़ज़लों का विषय 'ज़नाना से या ज़नाना के बारे में बातचीत' से बहुत आगे निकल चुका है। फिर भी यह कहना ग़लत न होगा कि साहित्य की मुख्यधारा के तहत हिन्दी कविता के अनुपात में हिन्दी ग़ज़ल की समीक्षा नहीं हो रही है; जबकि हिन्दी ग़ज़ल लिखने-पढ़ने या सुननेवाले कम नहीं हैं। यहाँ एक बात और भी देखी जा सकती है कि समकालीन हिन्दी कविता के शिल्प पक्ष पर परम्परागत रूप से समीक्षा नहीं होती जबकि हिन्दी ग़ज़ल में आज भी छंद एवं शिल्प की परम्परागत तमाम बातें अपेक्षित मानी जाती हैं हालाँकि अब बदलाव भी दिख रहा है। वास्तव में, अच्छी मुक्त छंद कविता वही लिख सकता है जिसे छंद का सही-सही ज्ञान हो। इसके बावजूद मुक्त छंद के नाम पर हिन्दी कविता धड़ल्ले से लिखी जा रही है। हिन्दी ग़ज़ल में ऐसी छूट की संभावना कम होती है क्योंकि ग़ज़ल के समीक्षक एक ख़ास तहज़ीब और शऊर के कायल हैं।

'फल खाए शजर' पुस्तक में जनाब अंसार कंबरी से लेकर डॉ. उर्मिलेश और डॉ. कुँअर बेचैन जैसे ग्यारह महानुभावों-ग़ज़ल के जानकारों का 'स्वागत', 'शुभकामनाएँ' और 'बधाइयाँ' अपना विशिष्ट महत्व रखती हैं; इन्हें पढ़ना चाहिए। संग्रह की कुल 69 ग़ज़लें - विषय - वैविध्य, समकालीन चिंता और चिंतन, प्रासंगिकता तथा भाव और भाषा आदि दृष्टि से पढ़ने योग्य हैं। भारतेन्दु श्रीवास्तव जी को इन ग़ज़लों में विज्ञान की सूक्ष्म दृष्टि दिखी— 'चाँद को सूरज प्रकाशित गर नहीं करता विजय / तो किसी सूरत धरा को चाँदनी मिलती नहीं'[1]। इसी तरह उषा राजे सक्सेना जी इन 'ग़ज़लों में शुद्ध हिन्दी एक अच्छा प्रयोग'[2] देखती हैं और डॉ. उर्मिलेश "किताबे - बदखुलूसी', 'साहिबे - फ़न', 'हुस्ने-लाजवाब', 'कोहे-ग़म' जैसी उर्दू भाषा की संधियों से बचने" की बात कहते हैं[3]। यहाँ 'फल खाए शजर' पर कुछ कहने का मतलब समीक्षा की समीक्षा करना हरगिज नहीं है।

भारतीय वाङ्मय एवं सुभाषितों में कहा गया है कि जिस प्रकार फल आने पर डालियाँ सहज ही झुक जाती हैं उसी प्रकार सज्जन एवं ज्ञानी पुरुषों की विनम्रता सहज-सरल होती है। वृक्ष कभी अपना फल ख़ुद नहीं खाता, नदी दूसरों के लिए बहती है, कभी अपने लिए जल-संग्रह नहीं करती। लेकिन, परिस्थितियाँ बहुत बदल गयी हैं अब कहा जा सकता है—'फल खाए शजर'; यह बात सिर्फ़ शीर्षक तक सीमित नहीं है। यह जीवन-मूल्यों का

ह्रास है, - "इस दौर के मंजर तो हद दर्ज़ा निराले हैं, पीती है नदी पानी, फल खाए शजर देखो"[4]। जीवन की बढ़ती आपाधापी, गलाकाट स्पर्धा, शासन की निष्क्रियता, घटिया राजनीतिक दाँवपेच, अराजकता, भ्रष्टाचार, मीडिया की भूमिका, वैश्विकीकरण और उसका प्रभाव, बाज़ारवाद, टूटती सामाजिक संरचना, आस्था और विश्वास पर प्रहार आदि के कारण मनुष्य नयी चुनौतियों से जूझ रहा है, उसकी मानसिकता एवं सोच में बदलाव आया है। इसीलिए आज की कविता में जहाँ एक तरफ़ आक्रोश है, बौखलाहट है, विसंगतता, हड़बड़ी है वहीं दूसरी तरफ़ आत्मविश्वास है, खुद्दारी है, रोमांच है, परिस्थितियों से संघर्ष करने की शक्ति है। 'फल खाए शजर' की ग़ज़लें अलग-अलग स्थितियों, परिवेश एवं मूड में लिखी गयी हैं; शायद इसीलिए किसी एक ही विषय या मुद्दे पर रचनाकार का विचार सदैव समान नहीं रहा है; मंचीयता एवं फरमाइश भी एक वज़ह हो सकती है। जैसे, शहर की ज़हरीली सोच अथवा आक्रोश और उसमें निहित विवशता तथा कुछ हद तक बौखलाहट या फिर किसी पर ऐतबार न करने का स्टेटमेंट — बतौर बानगी आस्वाद लिजिए :

यहाँ हाथों में काँटे, निगाहों में ज़हर है
दिमागों में है वहशत दिलों में भी शरर है[5]।
कर भला होगा बुरा अब ये ज़माना आ गया है,
इस लिए अब फूल रखकर ख़ार ही बस बाँटता हूँ[6]।
अगर बुरा न लगे तो हम एक बात कहें,
किसी भी शख़्स पे हरगिज न ऐतिबार करें[7]।

और इसके साथ-साथ कवि यह भी महसूस करता है — "सभी कह रहे हैं ज़माना बुरा है / मगर कोई ख़ुद में नहीं झाँकता है"। इसी तरह रचनाकार का एक अंदाज यह भी रहा है—

हमारे चाहने वाले जहाँ में कम नहीं हैं.
किसी को भी मगर दिल दे दें ऐसे हम नहीं हैं।

तो प्रेम एवं रोमांच में उसका स्वर एक समर्पित प्रेमी का है— "यूँ ही हमको सताया करो, / तुम न वादे निभाया करो। कनखियों से हमें देखकर, तुम ज़रा मुस्कुराया करो"[8]। या फिर "आँखें हैं नशीली-सी गेसू हैं घटाओं से, / होंठों के ये मयखाने हैं गाल गुलाबों से"[9]।

आधुनिक रचनाकारों ने व्यंग्य को विशेष महत्व दिया है। 'फल खाए शजर' में व्यंग्य के माध्यम से कवि ने सामयिक समस्याओं, राजनीति, सामाजिक गतिविधियाँ आदि पर करारा प्रहार किया है। यह व्यंग्य कहीं कहीं सहज मुखर हुआ है— अभिधात्मक है तो कहीं व्यंजनात्मक। डॉ. उर्मिलेश ने इन ग़ज़लों का सबसे बेहतरीन पक्ष व्यंग्यात्मकता[10] माना है। कवि की पीड़ा उसकी अपनी भी होती है और जनसामान्य की— सार्वभौमिक भी। 'फल खाए शजर' में कवि कहीं पर सीधे निजी तौर पर प्रहार करता दिखता है तो कहीं प्रतिनिधि के रूप में –

कैक्टस घर में लगाना है नई तहजीब अब तो,
इसलिए वट वृक्ष आँगन का पुराना काटता हूँ[11]।

आजकल लोकशाही का मतलब है ये,
लूट कर, ख़ून कर, ऐश कर, राज कर[12]।

धर्म और राजनीति के ठेकेदारों ने जो समस्याएँ और उलझनें खड़ी की हैं, कवि उससे वाक़िफ़ है। 'फल खाए शजर' में कई जगहों पर कवि की पीड़ा और बेबशी व्यंग्यरूप में भरी है—

जब जब खयाल आया चलो देश से मिलूँ
तब तब मुझे मिले हैं दहकते हुए सवाल[13]।
जो कहते थे यहाँ हम दूध की नदीयाँ बहायेंगे,
ज़मी को बेख़ता के ख़ून से नहला रहे हैं वो[14]।

अकादमियाँ, संस्थाएँ या सरकारें पुरस्कार प्रदान करती हैं; उनके भी कुछ मानदण्ड होते हैं; कवि का व्यंग्य उल्लेखनीय है- "न तो दिवंगत हूँ औ' न बूढ़ा, / पदक पुरस्कार पाऊँ कैसे"[15] ? परंतु पुरस्कार पाने के लिए महज दिवगंत होना या बूढ़ा होना पर्याप्त नहीं है। यह बात रचनाकार के प्रश्नवाचक चिह्न में छिपी है; यानी बूढ़ा या दिवंगत न होने पर और भी रास्ते हैं। यह जो 'और रास्ता' है उसे कवि ने अभिधात्मक नहीं होने दिया, इसमें पुरस्कारों के पीछे की राजनीति एवं विडम्बनाएँ निहित हैं। व्यंग्य में निहित आक्रोश बोलचाल के लहजे में कहीं कहीं कोरा कथन या स्टेटमेंट बन गया है, जैसे— "खा सके चारा, कफ़न बेचे औ' घोटाले करे जो / मैं उसे अपने वतन का असली नेता मानता हूँ"[16]।

साहित्यकार की क़लम की नोंक पर उसके पूर्ववर्ती महान रचनाकारों का दबाव और प्रभाव होता है। शब्द और प्रस्तुति, विषय और संदर्भ आदि अलग हो सकते हैं। 'फल खाए शजर' की कई ग़ज़लें अपने पूर्ववर्ती एवं सामयिक रचना एवं रचनाधर्मिता से प्रभावित रहा है कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं— कबीर ने कहा था जो घर फूँके आपना चले हमारे साथ - 'मैंने अपना घर जलाकर रौशनी दुनिया को दी है[17]। साहिर लुधियानवी की ग़ज़ल 'मैं ज़िंदगी का साथ निभाता चला गया / हर फिक्र को धुएँ में उड़ाता चला गया' - 'हर ख़ुशी दोस्तों में लुटाता रहा, / मैं ग़मों को धुएँ में उड़ाता रहा'[18]। ऐसे कई अन्य उदाहरण रखे जा सकते हैं।

कविता में विज्ञान की सूक्ष्म दृष्टि देखना अलग बात है- "चाँद को सूरज प्रकाशित गर नहीं करता विजय / तो किसी सूरत धरा को चाँदनी मिलती नहीं" - लेकिन कवि परंपरागत बंधनों से मुक्त नहीं है और कविता में कल्पना, बिम्ब, प्रतीक, मिथक का अलग स्थान एवं महत्व है। ध्यान रहे कि रचनाकार ने 'खाते हैं केला गुण गाते हैं आम के' जैसा प्रयोग किया है तो साथ ही कई जगहों पर परम्परागत प्रयोग को भी सहज प्रस्तुति दी है—

मावस के अंधेरे में पूनम-सा उजाला ये,
कुछ और नहीं तेरे रुख़सार की ताबिश है[19]।

कवि का अपना व्यापक कल्पना-संसार होता है। कविता कवि के स्वान्तः सुखाय के साथ सामाजिक के लिए भी होती है। रचना सहृदय तक पहुँचे उसे आंदोलित करे यह भी आवश्यक है। 'फल खाए शजर' की रचनाएँ पाठकों तक पहुँचती हैं। लेकिन कहीं-कहीं अस्पष्टता एवं अनावश्यकता भी दृष्टिगोचर होती है; बानगी के तौर पर हम देख सकते हैं—

"कहाँ को चले थे कहाँ आ गये हैं, / नहीं है ये मंजिल जहाँ हम खड़े हैं"[20] में कुछ स्पष्ट नहीं होता कि रचनाकार का लक्ष्य क्या था ? यह एक पछतावा या भूल पर व्यक्त किया जानेवाला अफसोस सा लगता है। मुसलसल ग़ज़ल को छोड़कर ग़ज़ल का प्रत्येक शेर उसी प्रकार पूर्वापर निरपेक्ष और अपने आप में पूर्ण होते हैं जिस प्रकार दोहा। एक शेर पर गौर करें- "आज कट जाय अगर सर तो कोई बात नहीं, / यूँ हमेशा ही रहा शान से झुकने न दिया"[21] – यहाँ पर सिर कटाने का कोई कारण नहीं; साथ ही शान से रहने की बात में कोई औचित्यभंग नहीं दीखता। लोकतंत्र में वोट देकर गद्दी पर बैठाने की बात सहज है, शासक वादे पूरे न भी करे लेकिन 'कृपा-दृष्टि' का इतना आग्रह क्यों ? और वह 'कृपा दृष्टि' यदि किसी और पर इनायत हो रही है तो विकलता क्यों ? दृष्टि यदि वास्तव में कृपालु है तो चाहे जहाँ जाए — "हमीं ने दिया ताज उनको मगर अब / कृपा दृष्टि उनकी उधर जा रही है"[22]। इस 'कृपा दृष्टि' का एक दूसरा पक्ष व्यंग्यात्मकता भी हो सकता है लेकिन फिर 'हमीं ने दिया ताज' अलग जा पड़ेगा। श्रीकृष्ण का रास रचाने का रूप इतना स्वीकृत हुआ कि मानों उन्होंने गोपियों को नचाने के सिवाय और कुछ नहीं किया। खैर, किसी को रास रचाना है या राम बनना है, यह उसका निजी विषय है[23]। इसी तरह "निकलो न यार तिसपर सज-धज के और बनके" - में 'बनके' भर्ती का शब्द ही कहा जायेगा भले ही वह ग़ज़ल के मीटर के तहत प्रयुक्त हुआ हो, इससे बचा जा सकता था। इसी तरह 'रण्डी' शब्द आज जन सामान्य में जिस अर्थ में व्यहृत होता है और एक समुदाय या पेशा विशेष से जुड़ा है, उसे हेय या त्याज्य नहीं बनाना चाहिए। इसी तरह किन्नर समुदाय की भी अपनी आइडेन्टिटी है राजनेताओं पर व्यक्त आक्रोश किसी हद तक बौखलाहट में बदल जाता है - "देख सियासत के रंग-ढंग / रूप बदलती ज्यों रण्डी। लगते हैं नेता भी अब / घोर शिखण्डी पाखण्डी"[24]।

हिन्दी ग़ज़ल और उर्दू ग़ज़ल के बीच भेद करना या फ़र्क बताना यहाँ उद्देश्य नहीं है लेकिन इतना तो ज़रूर कहेंगे कि आम बोलचाल की हिन्दी में कही गई ग़ज़लें उर्दू की हो सकती हैं और अरबी-फारसी शब्दों का प्रयोग होने के बावजूद ग़ज़लें हिन्दी की कही जा सकती हैं ! चूँकि बात भाषा पर जा रही है जहाँ उषा राजे सक्सेना 'फल खाए शजर' की 'ग़ज़लों में शुद्ध हिन्दी का अच्छा प्रयोग' देखती हैं - संग्रह की पहली ग़ज़ल "आस छोडूँ ना कभी हे माँ मुझे वो शक्ति दे" इस तरह की ही ग़ज़ल है; वहीं डॉ. अनन्तराम मिश्र का मानना है कि अधिकांश ग़ज़लें हिन्दुस्तानी में लिखी गयी हैं। ग़ज़लों में रदीफ़-क़ाफ़िया के चलते कभी कभी अप्रचलित शब्दों का प्रयोग करना पड़ता है। वज़्न के लिए भी कभी-कभी शायर बोलचाल के शब्दों से हटकर प्रयोग करता है। एक मानसिकता यह भी है कि ग़ज़लों के लिए अरबी-फारसी-उर्दू के शब्द अधिक संगतपूर्ण हैं। ऐसे कई कारणों से हिन्दी का रचनाकार जाने-अनजाने उर्दू-फारसी आदि शब्दों का प्रयोग करता है।

'फल खाए शजर' के रचनाकार में भाषिक चेतना की समझ है; भाषा, बिम्ब और प्रतीक के स्तर पर वह प्रयोगशील है। शुद्ध हिन्दी की ग़ज़लें कहने की अपेक्षा बोलचाल की हिन्दी या हिन्दुस्तानी में कही गयी ग़ज़लें कहना अधिक संगतपूर्ण है। दो उदाहरण पर्याप्त होंगे — "जिसे लटकाया जाना चाहिए फाँसी के फन्दे से" और "अगर बुरा न लगे तो हम एक बात कहें"[25] उर्दू की संधियों से बचने की बात डॉ. उर्मिलेश जी ने कही है क्योंकि ये हिन्दी

भाषा की प्रकृति के ठीक विपरीत पड़ते हैं[26]। यह भी वास्तविकता है कि हर रचनाकार अच्छी तरह से उर्दू-फारसी की संधियों से परिचित नहीं होता, वह ग़ज़ल की बहर पर ध्यान देता है; वहीं दूसरी ओर हिन्दी का सामान्य पाठक इनसे अपरिचित होता है; जैसे 'किताबे - बदखुलूसी', 'साहिबे-फ़न', पाबन्दे-वफ़ा, 'हुस्ने - लाजवाब', 'कोहे-ग़म' सज़ा-ए-मौत, जुर्मे उल्फ़त, तर्के-तअल्लुक आदि संधियाँ। उर्दू-फारसी आदि ऐसे किसी भी शब्दों से हिन्दी को परहेज नहीं जो बोलचाल में हैं या आम आदमी जिन शब्दों से परिचित है लेकिन 'फल खाए शजर' में नक्श पैबस्त, ताबिश, मुश्किलात, पुरनम, अक़ीब, हबीब, खुलूस, शरर जैसे तमाम शब्दों का प्रयोग इरादापूर्वक किया गया है। पौराणिक-ऐतिहासिक पात्रों— राम, रावण, दुर्योधन, दुःशासन, शकुनि, मीर जाफर, जयचंद, राँझा, मजनू आदि का युगीन एवं नये संदर्भों में प्रयुक्त करने का सराहनीय प्रयास हुआ है। मुहावरों का सुंदर - सहज प्रयोग भी रचनाशीलता की प्रौढ़ता का परिचायक है। बानगी के तौर पर - राह में काँटे बिछा दो, आज दो-दो हाथ कर लूँ, गुजरे सर से पानी, शेर की खाल ओढ़ना, सीना चाक किया जाना, आँख नहीं खुलना, आटा गीला होना, गुल खिलाना आदि। इसी तरह 'लाठी उसकी भैंस', 'नेहले पे देहला' जैसी कुछ कहावतों का भी उचित प्रयोग हुआ है।

संदर्भ :

1. भारतेन्दु श्रीवास्तव, फल खाए शजर
2. उषा राजे सक्सेना, फल खाए शजर
3. डॉ. उर्मिलेश, फल खाए शजर
4. फल खाए शजर, पृ. 59
5. फल खाए शजर, पृ. 73
6. फल खाए शजर, पृ. 92
7. फल खाए शजर, पृ. 87
8. फल खाए शजर, पृ.57
9. फल खाए शजर, पृ. 43
10. डॉ. उर्मिलेश, फल खाए शजर
11. फल खाए शजर, पृ. 92
12. फल खाए शजर, पृ. 56
13. फल खाए शजर, पृ. 83
14. फल खाए शजर, पृ. 37
15. फल खाए शजर, पृ. 58
16. फल खाए शजर, पृ. 92
17. फल खाए शजर, पृ. 31
18. फल खाए शजर, पृ. 30
19. फल खाए शजर, पृ. 72
20. फल खाए शजर, पृ. 62
21. फल खाए शजर, पृ. 69
22. फल खाए शजर, पृ. 71
23. फल खाए शजर, पृ. 39
24. फल खाए शजर, पृ. 36
25. फल खाए शजर, पृ. 91, 87
26. डॉ. उर्मिलेश, फल खाए शजर

-डॉ. ओमप्रकाश शुक्ल

सह-आचार्य,

सरकारी विनयन कॉलेज, धानपुर-दाहोद, गुजरात.

❖

कुछ नयेपन की परिचायक श्री विजय तिवारी जी की ग़ज़लें

–प्रो. (डॉ.) दिवाकर 'दिनेश' गौड़

श्री विजय तिवारी जी गुजरात राज्य के वर्तमान हिन्दी साहित्यिक जगत में एक सम्मानिय नाम है और देश में हिन्दी साहित्य के एक सुपरिचित नाम हैं और इसका कारण उनकी सदाबहार ग़ज़लें हैं। यह ग़ज़ल–संग्रह पहली मर्तबा सन 1999 में प्रकाशित हुआ था यानि कि आज से ठीक इक्कीस वर्ष पूर्व। फिर तिवारी जी ने सन 2017 में इसका दूसरा संस्करण प्रकाशित किया जिसे हिन्दी साहित्य अकादमी ने पुरस्कृत और सन्मानित किया। श्री तिवारी साहब की इन सदाबहार ग़ज़लों का रसास्वाद करने का सुअवसर मुझे भी प्राप्त हुआ है। आज से लगभग पच्चीस वर्ष पूर्व लिखी इन ग़ज़लों के मैंने पढ़ा या ये कहें कि मैं भावपूर्ण अवस्था में इनके अंदर उतर गया और मैंने पूर्ण मनोयोग से इन ग़ज़लों को पढ़ा। कुछ बातें जो मुझे इन ग़ज़लों के बारे में दृष्टिगोचर हुईं, वह कमोवेश यह हैं कि ये ग़ज़लें अलग–अलग अवसर पर अलग–अलग भाव अवस्था में रचित हुई हैं। कहीं ग़ज़लकार संसार की चालबाजियों से त्रस्त हो तल्ख स्वर में बात करता है और कभी वह प्रेमपाश में बँध उन लम्हों को जीना चाहता है जो उसे ज़िंदगी में सकून प्रदान कर रहे हैं। कभी ग़ज़लकार ने अपने व्यक्तिगत उनुभव साझा किए हैं और कभी उनकी ग़ज़ल में सामाजिक सरोकार प्रतिबिंबित और प्रतिध्वनित होते हैं। वर्तमान राजनीति जो सामाजिक और व्यक्तिगत शोषण और दमन की परिचायक रही है उससे शुब्ध हो ग़ज़लकार लिखते हैं।

आ गया है वक्त वो बस्ती जलाने आएगा,
फिर वही दमकल लिए इसको बुझाने आएगा।

तिवारी जी की ग़ज़लों की एक खास विशेषता है इन ग़ज़लों की चमत्कृतता और यह एक ऐसा लक्षण है जो उनकी ग़ज़लों को चिरन्तनता और अमरता बख्शता है ज़रा उनके कुछ शेरों पर मुलाहिजा फरमाऐं –

नई दुलहन की डोली को शहर की भीड़ में लूटा,
दिया हमने ही रहकर मौन ये साहस कहारों को।

यह शेर पाठक या ग़ज़ल के श्रोता को एकदम सन्न कर देता है और कुछ क्षणों के लिए वह वर्तमान जगत से उठ किसी और जहान में पहुँच जाता है। यहाँ यह शेर चमत्कृत कर देने वाला है। अब इस शेर पर गौर फरमाऐं –

लूट, चोरी, ख़ून, खुलकर लोकशाही में करो,
शान से शासन तुम्हें सर पर बिठाने आएगा।

व्यंग्यात्मक लहजे में ग़ज़लकार ने अपनी बात पेश की है और लोकतंत्र के बिभत्स आयाम पेश किए हैं। मुझे हिन्दी के महान शायर और जिनकी ग़ज़लें चमत्कृतता के लक्षणो

से भरपूर है, ऐसे श्री दुष्यंत कुमार का एक शेर इस प्रसंग में याद आता हैः

कहाँ तो तय था चिरागां हर एक घर के लिए
कहाँ चिराग ममस्सर नहीं शहर के लिए।

वर्तमान में देश में लोकतंत्र की विभत्सता का यही मंजर चारों ओर नज़र आता है जहाँ अनेक मर्तबा लोकतंत्र की इज्जत, इसकी रक्षा के नाम पर सरेआम, सरेबाजार नीलाम की जाती है। और जैसे द्रौपदी का भरे राजदरबार में चीरहरण होते हुए देख भीष्म पितामह, गुरु द्रौण और महात्मा विदुर जैसे पुण्यात्मा कुछ नहीं कर पाते वैसे ही आज सरेबाजार, अलोकतांत्रिक तरीके से लोकतंत्र का चीरहरण होते देख साहित्यकार शिक्षण-शास्त्री और समाज–सेवक कुछ नहीं कर पाते, सिर्फ कसमसा कर रह जाते है। तिवारी जी इसी भाव से अपनी एक ग़ज़ल के शेर में फरमाते हैं :

इस दौर के मंजर तो हर दर्जा निराले हैं।
पीती है नदी पानी, फल खाए शजर देखो।

यहाँ वक्रोक्ति के माध्यम से ग़ज़लकार ने वर्तमान व्यवस्था पर जबरदस्त कटाक्ष किया है और इसमें उनकी छटपटाहट साफ़ नज़र आती है।

वर्तमान समय के शासकों की कथनी और करनी में कितना फर्क है, यह जमीन और आसमां जितना फर्क उनकी लेखनी के माध्यम से, उनकी ग़ज़लों के शेरों में दृष्टिगोचर होता है और यह कहना मर्मान्तक होता है कि दिल को शब्दों से छलनी कर, दिल के आरपार निकल जाता है। देखिए इस शेर में ग़ज़लकार बिना कोई लाग–लपेट के अपनी यह बात कहते हैं :

जो अभी पर्यावरण पर दे गया भाषण यहाँ,
देखना वो रात में जंगल कटाने आएगा।

जो कहते थे यहाँ हम दूध की नदियाँ बहाऐंगे,
जमीं को बेख़ता के ख़ून से नहला रहे हैं वो।

किसी भी ग़ज़लकार के उनकी ग़ज़लों में अनेक चेहरे नज़र आते है श्री तिवारी जी की ग़ज़लों में मुख्यतः उनका यह चेहरा नज़र आता है जहाँ के बेबाकी से, समाज और तंत्र के दंभी आचरण पर व्यंग-प्रहार करते हैं मगर इसके अलावा उनका एक चेहरा प्रेम के उस सुकुमार चितवन नयनो वाले उस कवि का भी है जिसके दिल में प्रेम हिलोरे ले रहा है और वह ग़ज़ल की परंपरम्पागत शैली में अपने दिल की बात, स्वयं से या फिर अपने माशूक से कोमल अंदाज़ में करता है कुछ बानगी देखिए :

शाम ढले परछाई हमसे,
चुपके–चुपके बतियाती है।

झील लगे जंगल में जैसे,
पायलिया सी खनकाती है।

तिवारी जी की ग़ज़लों में रोचकता भी है और निर्विकार रूप से ये काफी हद तक दिलचस्प भी हैं। जिन्हें पाठक बार–बार पढना चाहता है; श्रोता बार–बार सुनना चाहते हैं और कुछ ग़ज़लों का तो बारबार गुनगुनाने का भी दिल करता है। इनमें से लगभग सभी ग़ज़लें लयात्मक हैं और ग़ज़ल के शास्त्रीय विधी–विधान के चौखटे में फिट बैठती हैं। तिवारी जी एक श्रेष्ठ ग़ज़लकार हैं इनकी ग़ज़लों में चिरन्तनता, नवीनता और निरन्तरता है। और यही लक्षण इनकी ग़ज़लों को श्रेष्ठता प्रदान करते हैं। हम इनसे भविष्य में इसी प्रकार के और श्रेष्ठ संग्रहों की उम्मीद रखते हैं और हमें आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि तिवारी जी हमारी आशाओं को परिपूर्ण करेंगे।

लूट, चोरी, ख़ून खुलकर लोकशाही में करो,
शान से शासन तुम्हें सर पर बिठाने आएगा।

सामाजिक और आर्थिक शोषण का इस लोकतंत्र में यह आलम है कि ग़ज़लकार की क़लम से यह हृदयवेधक शब्दों का वाण छूटा है।

इस दौर के मंजर तो हद दर्जा निराले हैं,
पीती है नदी पानी, फल खाए शजर देखो।

तिवारीजी ने इन ग़ज़लों में वही लिखा है जो उन्होंने जिया है अतः ये ग़ज़लें सहज है। इन ग़ज़लों की सबसे विशेष बात इनकी चमत्कृतता है जो किसी अच्छे साहित्य का लक्षण होता है। चमत्कृतता का अर्थ है पुरानी बांतें भी नए अंदाज में कहना अपने अनुभव बहुत सीधी–सादी भाषा में अपने पाठकों के वतियाना, कुछ इस अर्थ में बतियाना कि पाठकों को ग़ज़लकार के अनुभव ख़ुद के लगें और वे मन्त्रमुग्ध भाव से सम्मोहित हों एक के बाद एक ग़ज़ल का रसास्वादन करते चले जाऐं ग़ज़ल एक पुरानी विद्या है मगर ग़ज़लकार का अभिगम नवीन है और यह उनकी ग़ज़लों को चिरन्तनता प्रदान करता है भाव, भाषा और मात्रा विन्यास सभी में ग़ज़लें अनूठी हैं अनोखी हैं, प्रभु से अभ्यर्थना है कि तिवारजी इसी तरह भावपूर्ण अंदज़ में लिखते रहे, अपने पाठकों के हृदय तक फिर–फिर पहुँचे और इसी प्रकार भविष्य में श्रेष्ठ ग़ज़लों का उपहार हमें फिर–फिर देते रहें.

- प्रो. (डॉ.) दिवाकर 'दिनेश' गौड़
एसोसिएट प्रोफेसर एवं PG अध्यक्ष,
सेठ पी. टी. आर्ट्स एण्ड साइंस कॉलेज
गोधरा
गुजरात

❖

"फल खाए शजर" में आधुनिक ग़ज़ल का परिवर्तित स्वरुप

–प्रो. देवी पन्थी

विजय तिवारी कृत हिन्दी ग़ज़ल-संग्रह "फल खाए शजर" पर समालोचकीय दृष्टि डालना मेरे बूते की बात नहीं। मैं नेपाल में रहता हूँ। ऐसे भी नेपाली ग़ज़ल (बीसवीं सदी से प्रारम्भ) हिन्दी ग़ज़ल (तेरहवीं सदी से प्रारम्भ) की तुलना में सात सौ वर्ष कनिष्ठ है। फिर भी मैं वरिष्ठ साहित्यकार देवनारायण शर्मा राज्य सरकार द्वारा ग़ज़ल विधा में पुरस्कृत व्यक्तित्व विजय तिवारी जी के आग्रह को टाल नहीं पा रहा हूँ। कुछ लिखने का दुस्साहस कर रहा हूँ। सबसे पहले मैं किताब के नाम के उपर दृष्टि गोचर होने की अनुमति चाहता हूँ।

"फल खाए शजर" नाम की औचित्य पुष्टि : "फल खाए शजर" हिन्दी वाङ्मय भण्डार में एक चुनिदा ग़ज़ल-संग्रह है, जिस पर अनेक समालोचकीय दृष्टि गोचर हुए हैं। "शजर" शब्द को विम्ब बनाकर बड़े-बड़े अग्रज हिन्दी शायरों ने रचना की है जिसमें प्रमुख हैं शहजाद अहमद, राहत इंदौरी, खाम, भावना अवस्थी, साकेत गर्ग आदि। शजर का अर्थ पेड़ है। इस संसार में करोड़ों प्रकार के पेड़ हैं जो प्रति वर्ष फल देते तो हैं मगर ख़ुद नहीं खाते। दूसरों को अर्थात मानव, पंछी और जानवर को खिलाकर धर्म कमाते हैं। यहाँ "शजर" सरकार का प्रतीक है। ग़ज़लकार तिवारी सत्ता में बैठे राजनीतिक दल अर्थात सरकार के ऊपर कड़ा व्यंग्य प्रहार करते हैं। उच्चकोटि के विम्ब प्रयोग करते हैं। सारी सुविधाएँ सरकार ख़ुद उपभोग करती हैं, जनता को भूखे नंगे ग़रीबी में रहने को बाध्य बना रही है, वर्तमान सरकार। संग्रह का नाम सारी रचना को प्रतिनिधित्व करने में पूर्ण सफल है। तिवारी जी की इस सफलता की मैं दाद देता हूँ। हालांकि ग़ज़ल का मुख्य विषय प्रेम है, धोखा है, मिलन है, वियोग है मगर तिवारी जी ने समाज के हरेक पहलू को टटोला है। समाज में पनप रहे अनेक विकृति, विसंगति, बेथिति असन्तुष्टि, भ्रष्टाचार, अन्याय, अत्याचार, भाई-भतीजावाद आदि को प्रमुखता के साथ उजागर करके एक प्रगतिशील लेखक की भूमिका को सफलता पूर्वक अदा किया है।

अब मैं "ग़ज़ल" शब्द पर प्रश्न खड़ा करना चाहूँगा। "ग़ज़ल" अरबी शब्द है जो नुक्ते को छोड़कर "हिन्दी ग़ज़ल" बन गई है। नुक्ते के साथ ग़ज़ल का शाब्दिक अर्थ होता है "औरत या प्रेमिका के साथ बातें करना।" जब हम ग़ज़ल शब्द से नुक्ते हटा देते हैं तब ये बेअर्थ का शब्द बन जाता है या अर्थ खो देता है। जैसे हम नुक्ते के साथ "ख़ाना" का अर्थ "घर" होता है। उदाहरण - जिमख़ाना। जब ख़ाना से नुक्ते हटा देते हैं तब इसका अर्थ बदल जाता है और "भोजन" होता है। नुक्ते विहीन ग़ज़ल का अर्थ क्या हो सकता है ?

मेरे विचार में जब कोई उर्दू बहर का प्रयोग करके उर्दू व्याकरण में बँधकर ग़ज़ल लिखता है तब ग़ज़ल में नुक्ता लगना जरुरी है, लेकिन जब हम हिन्दी व्याकरण का प्रयोग करके ग़ज़ल लिखते हैं तब ग़ज़ल से नुक्ते हटते हैं। ऐसी परिस्थिति में ग़ज़ल शब्द का अर्थ

वही नहीं रहता है, बेअर्थ हो जाता है। यहाँ हमें ग़ज़ल शब्द के स्थान पर ओम नीरज जी की "गीतिका" या देवी पन्थी की "चारु, राग, विराग" लिखने का कायद बनता है। इसी हालत को उजागर करते हुए पद्मश्री गोपालदास 'नीरज' 'ग़ज़ल' शब्द पर चुटकी लेते हुए कहा-" आजकल ग़ज़ल के नाम पर बहुत-कुछ कूड़ा-करकट इकट्ठा हो रहा है।" [ग़ज़ल गरिमा-3 पृ.29]

विजय तिवारी ने अपनी ग़ज़ल में हिन्दी व्याकरण को महत्त्व देते हुए उर्दू नुक्ते का प्रयोग खास शब्द में किया है। जैसे ज़मीन, अक़ीब, ज़हरीली, ख़फ़ा, नज़र, अन्दाज़ आदि। मुझे लगता है तिवारी जी ने नुक्ता का प्रयोग करते वक्त व्याकरण सचेतना के हिसाब से कम और व्यवहारिक परम्परा को ज्यादा निभाया है। उनके इस कोटि में हिन्दी के अनेक अव्वल शायर भी आते हैं। स्वाभाविक है यह परम्परा आने वाले वर्षो में भी हमें देखने को मिलेगी। यह इस बात को संकेत करती है कि हिन्दी ग़ज़ल - साहित्य में उर्दू की जड़ अमीर खुसरो से विजय तिवारी तक मजबूत है।

तुम दिल के इतने क़रीब हो।
जैसे की कोई अक़ीब हो।

ग़ज़ल यह अरबी साहित्य की प्रसिद्ध काव्य विधा है जो बाद में फ़ारसी, उर्दू, हिन्दी और नेपाली साहित्य में भी बेहद लोकप्रिय हुई। संगीत के क्षेत्र में इस विधा को गाने के लिए ईरानी और भारतीय संगीत के मिश्रण से अलग शैली निर्मित हुई। ग़ज़ल का इतिहास कुल मिलाकर १३०० वर्ष का है। ग़ज़ल शीर्षक देकर रची हुई रचना में नारी पात्र, क़ाफ़िया, रदीफ़, बहर, लय का होना जरुरी ही नहीं अनिवार्य है। लोग कहते है कि ग़ज़ल का शीर्षक नहीं होता है। मेरा दावा है कि ग़ज़ल शब्द ही शीर्षक है, जिसके नीचे नारी, प्रणय, बहर आदि का होना अनिवार्य है। तुकांत शब्द का प्रयोग या क़ाफ़िया, रदीफ़, मीटर ग़ज़ल को पूर्ण नहीं कर सकते। हिन्दी ग़ज़ल के नायक दुष्यन्त कुमार (सन १९३३-१९७५) ने ग़ज़ल के विषय वस्तु में परिवर्तन का संकेत दिया, तब से अब तक करिब ५० वर्ष से हिन्दी ग़ज़ल को दुष्यन्त कुमार के चश्मे से देखा जा रहा है। तिवारी जी की रचना में भी आधुनिकता की प्रचुरता इतनी प्रखर है कि शास्त्रीय ग़ज़ल का संकेत ही नहीं मिलता। ये दुष्यन्त कुमार के समकालीन हो कर प्रस्तुत हैं। विजय तिवारी ने हालांकि संग्रह की सभी रचनाओं को समग्र में ग़ज़ल कहा है लेकिन संग्रह में ग़ज़ल और ग़ज़ल के समदृश्य चारु, राग, विराग को प्रचुर स्थान दिया गया है। यह सर्जक की दूर दृष्टि है। आइए इस बात की पुष्टि करें- प्रस्तुत रचना में - "भीगी लटों, भीगा आँचल, जानम, घूंघट ज़रा निकालो" शब्दों के संजाल ने नारी के प्रति प्रेम झुकाव सम्बोधन को दर्शाया है। इसलिए जिस ग़ज़ल - फार्मेट में नारी सम्बोधन है उसको हम ग़ज़ल ही कहेंगे। तिवारी जी की एक सुन्दर ग़ज़ल देखें जिसमें नारी-प्रेम को विषय वस्तु बनाया है–

मोती टपक रहे हैं भीगी लटों से उनके।
मौसम हुआ गुलाबी अरमान जागे मन के।

बरसात में नहा के क्या खूब लग रहे हैं,
शरमा के भीगा आँचल लिपटा है तन से उनके।
मस्ती से वो चलेगा ख़ुशबू से भर उठेगा,
नज़दीक से भी गुजरे झोंका जो उस बदन के।
यूँ भी अदा तुम्हारी क़ातिल बहुत है जानम,
निकलो न यार तिस पर सज-धज के और बन के।
यूँ बेनक़ाब हो के क्यों आ गये यहाँ पर,
अब होश में नहीं हैं सब फूल इस चमन के।
शरमा के कुछ लजा के घूँघट ज़रा निकालो,
गुजरे ज़माने अब वो मासूम लड़कपन के
रोको न आज दिल को हो जाय जो होने दो,
पीने दो जाम जम के मदमस्त उस नयन के।

तिवारी जी की प्रस्तुत निम्न रचना में "राम नामी ओढकर, शाख़्स, खींच डाले वस्त्र, ख़ोफ़" आदि शब्द बताते हैं की रचना का नायक या खलनायक पुरुष है। सम्बोधन पुलिङ्ग है। ग़ज़ल स्त्रीलिंग शब्द है। ग़ज़ल का जब जन्म हुआ, उस वक्त नारी को पढ़ने-लिखने, अपने शौहर या प्रेमी को पसन्द / नापसन्द करने का अधिकार नहीं था। इसलिए नारी को एक तरफा सेक्स मेटर बनाकर उसके अङ्ग-प्रत्यंग का वर्णन करके राजे-महाराजों को आनन्द देने के लिए सुनाया गया। आज की नारी पढ़ी-लिखी है, प्रस्तुत प्रेमी को पसन्द / नापसन्द करने का अधिकार रखती है। इसलिए खास करके नारी के लिए "चारु" का आविष्कार किया गया है। पुरुष भी नारी की भूमिका में "चारु" लिख सकते हैं। प्रस्तुत है तिवारी कृत रचना का एक मतला और कुछ शेर उदाहरणार्थ –

राम नामी ओढ़कर वह शख़्स मुझको छल रहा।
स्वार्थ साधन के लिये ही साथ मेरे चल रहा।
कोख के मोती ने देखो लाज माँ की बेच दी,
खींच डाले वस्त्र सारे और आँचल जल रहा।
क्यों अंधेरा छा रहा है आज सारे मुल्क में,
देश के सूरज का यारों तेज देखो ढल रहा।
हो गया है आदमी आज़ाद लेकिन आज भी,
हर शहर में, हर नज़र में ख़ौफ़ ही बस पल रहा
जानता हूँ यह ग़ज़ल सुनकर ख़फ़ा वो हो गये,
इस तरह उनको हक़ीक़त आम करना खल रहा।

तिवारी जी की प्रस्तुत रचना में - "हे माँ! मुझे शक्ति दे, भक्ति दे, मुक्ति दे, शारदे" इन शब्द समूह का प्रयोग माँ सरस्वती से वन्दना हेतु किया गया है। ग़ज़ल में जो सम्बोधन होता है उस में कामुक्ता की गन्ध होती है। मगर प्रस्तुत रचना में कामुक्ता के स्थान पर श्रद्धा, भक्ति और याचना है। यहाँ प्रस्तुत है उनकी अव्वल एवं पवित्र प्रस्तुति –

आस छोड़ूँ ना कभी हे माँ मुझे वो शक्ति दे।
ज्योति में तम को बदल दूँ मुझमें ऐसी भक्ति दे।
झूठ की छाया भी छू ना पाए मेरी बात को,
इस तरह मेरे कथन में सत्य की अभिव्यक्ति दे।
बोध हो कर्तव्य का, आदर्श से भी ना डिगूँ,
विश्व को कर दे प्रकाशित मुझमें ऐसा व्यक्ति दे।
लोभ, तृष्णा, छल, प्रपंचों से भरे युग में यहाँ,
सदगुणों की कर सकूँ रक्षा जगत में युक्ति दे।
माँगता वरदान वीणा वादिनी माँ शारदे,
तेरे चरणों में ही छूटें प्राण वो अनुरक्ति दे।
हार जीवन में विजय' की हो न पाए माँ कभी,
शब्द मेरे हों चिरन्तन काल से भी मुक्ति दे। –

तिवारी जी की प्रस्तुत रचना में "विवश, मर नहीं सकता, निखर नहीं सकता, उभर नहीं सकता, बेवकूफ, नशा" जैसी अनेक विकृति, विसंगति, बेथिति, असन्तुष्टि की झलक है। ग़ज़ल की विषय वस्तु जन्म से ही नारी सौंदर्य वर्णन, प्रेम, धोखा, मिलन और वियोग रहा है, वह यहाँ पर नहीं है। वर्तमान समाज के चित्र का चित्रण करने में कुशल श्रष्टा तिवारी जी की यह रचना पढ़ें–

बड़ा विवश है कभी कुछ भी कर नहीं सकता।
ख़ुशी से जी न सका और मर नहीं सकता।
ख़याल है ये ग़लत ही किसी बगीचे को,
गुलाब 'गर न मिले तो निखर नहीं सकता।
जहाँ में कर न सकेगा अगर ख़ुशामद तो,
करे वो लाख जतन पर उभर नहीं सकता।
सभी कहेंगे उसे बेवकूफ़ दुनिया में,
जो ख़ुद के दोष, किसी सर पे धर नहीं सकता।
यक़ीन हो ही गया आज तुझको समझाकर,
कभी ढलान पे पानी ठहर नहीं सकता।
कभी जो प्यार किया हो किसी से तो जानो,
ये वो नशा है कभी जो उतर नहीं सकता।
अभी जमीर मरा ही नहीं इसी कारण,
निभा रहा हूँ वचन मैं मुकर नहीं सकता।
अभी तू सीख ज़रा क्या है गीत और ग़ज़ल,
तुकें मिला के तेरा फ़न निखर नहीं सकता।
जिगर शरीर में फौलाद का ही रखता हूँ,
मुझे समझ न तू पारा बिखर नहीं सकता।

किया लिहाज 'विजय' ने नहीं तो दुनिया में,
सिवा ख़ुदा के किसी से भी डर नहीं सकता।

विजय तिवारी सरस्वती के पुजारी हैं। ग़ज़ल विधा में उनका गहरा लगाव है। उनके तीन ग़ज़ल संग्रह निर्झर (1991), फल खाए शजर (1999) और आक़ा बदल रहे (2017) प्रकाशित हुए हैं एवं राज्य सरकार द्वारा पुरस्कृत हैं। तिवारी जी एक साथ ग़ज़लकार, लेखक, सम्पादक, कवि एवं कुशल कार्यक्रम संचालक हैं। तिवारी के ग़ज़ल में इन्द्र धनुष के सभी सात रंग मौजूद हैं। प्रणय, विकृत, विसंगति, बेथिति, असन्तुष्टि, दूर दृष्टि, देशभक्ति आदि उनकी ग़ज़ल के विषय बस्तु बनकर पाठक के मन मस्तिष्क को केन्द्रित करने में सफल हैं। ग़ज़ल का एक-एक शेर उनकी परिपक्वता को प्रमाणित करती है। उनकी रचना में हम डर भय, भूत प्रेत, असंभवता, नैराश्य, थकावट, चिन्ता नहीं पाते। समाज का चित्रण करने में तिवारी माहिर हैं। उनका विचार प्रगतिशील है। महिला के ऊपर कहीं भी छींटाकशी नहीं। शालीनता को उन्होंने पग-पग पर खूब निभाया है। एक कवि की कोमल और कठोर हृदय को उन्होने सीना चीर के दिखाया है। अब्बल ग़ज़ल के कुछ सूचक इस प्रकार हैं जिनको तिवारी जी ने भलीभाँती निभाया है।

१. स्पष्टता : ग़ज़ल के शेर में व्यक्त भाव / विचार स्पष्ट होना जरुरी है। अर्थात अर्थ या भाव स्पष्ट है।

२. प्रौढता : ग़ज़ल के सभी शेर में विचार / भाव परिपक्व होना चाहिए, बचपना न हो। तिवारी जी की ग़ज़लों में नहीं है।

३. अर्थपूर्णता : ग़ज़ल के शेर अर्थ से भरे हों।

४. अन्योन्याश्रिता : ग़ज़ल के प्रथम मिसरे में उद्घाटित विषयवस्तु का पुष्टि दूसरे मिसरे में अनिवार्य होना चाहिए।

५. गेयात्मकता : गेयता ग़ज़ल की अनिवार्य शर्त है। बहर या छन्द का प्रयोग अनिवार्य है।

६. व्याख्यात्मकता : ग़ज़ल में व्याख्या वर्जित है। कम शब्दों में ज्यादा कहने की विधा है ग़ज़ल। ग़ज़ल के शेर में कम से कम शब्द का खर्च उत्तम माना जाता है।

७. सरलता : ग़ज़ल के शेर में सरल साहित्यक शब्दों का प्रयोग अच्छा माना जाता है।

८. पूर्णता : ग़ज़ल के शेर पढ़ने या सुनने में अपूर्ण नहीं होने चाहिए। कथ्य का पूर्ण होना जरुरी है।

९. व्याकरण दोष : ग़ज़ल के शेर में प्रयोग किए गये शब्द बहर या छन्द मिलाने के लिए व्याकरण का तोड़मोड़ नहीं करना चाहिए।

१०. अश्लीलता दोष : ग़ज़ल के शेर में असभ्य, अश्लील, नग्नतापूर्ण, कामुक शब्द का प्रयोग बर्जित है।

११. विक्षेप दोष : ग़ज़ल के शेर में आवश्यकता से ज्यादा शब्द का प्रयोग या शब्द के अभाव को महसूस किया गया तो विक्षेप दोष उत्पन्न होता है।

१२. जटिल शब्द : ग़ज़ल के शेरों में कोमल शब्द का प्रयोग होना जरुरी है। अर्थ

के दृष्टि से जटिल शब्दों का प्रयोग और अनादरवाची शब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहिए। सरलता भी ग़ज़ल के सौंदर्य की श्री वृद्धि करती है। संकीर्णता तो है ही नहीं।

विजय तिवारी की ग़ज़लों को उपर्युक्त समालोचना के कसौटी पर परखा जाए तो वे खरे निकलते हैं। भाषा की शुद्धता, भाव की स्पष्टता और प्रौढता या परिपक्वता उनकी पहली विशेषता है। अश्लीलता शून्य है। जटिलता नगण्य है। विचार का बहाव गंगा नदी की तरह अविरल है। "उर्दू शब्द ग़ज़ल का वज़न बढाती है" - यह भ्रम अधिकतर हिन्दुस्तानी ग़ज़लकारों में है, इससे तिवारी जी भी अछूते नहीं रहे हैं।

क़ाफ़िया :

क़ाफ़िया अरबी शब्द है। यह "कफु" धातु से बना है। इसका अर्थ "जाने के लिए तैयार" होता है। क़ाफ़िया ग़ज़ल का केन्द्र बिन्दु है। क़ाफ़िया के पूर्ण ज्ञान के बिना ग़ज़ल लिखना असम्भव है। हिन्दी और नेपाली के बड़े-बडे शायर क़ाफ़िया चयन करते समय अटक जाते हैं। वही अटक को सावधानी कहते हैं। संचेतना कहते हैं। क़ाफ़िया के बाद रदीफ़ आता है। ग़ज़ल में क़ाफ़िया अनिवार्य है, रदीफ़ अनिवार्य नहीं। फिर भी क़ाफ़िया और रदीफ़ दोनों हों तो ग़ज़ल में चार चांद लगते है। क़ाफ़िया के चैन को देख कर पता चलता है कि ग़ज़लकार किस दर्जे का है। जो तुकांत के जानकार हैं उन्हे क़ाफ़िया चयन में कम दिक्कत होगी। विजय तिवारी में उपरोक्त उल्लेख्य कमजोरी नहीं है।

ग़ज़ल लेखन और प्रकाशन में विजय तिवारी का अनुभव तीन दशक से ज्यादा का है। उनको अनुभव ने परिपक्व बनाया है। क़ाफ़िया के छनावट (चयन) और प्रयोग में त्रुटि कि संभावना बहुत कम है। ग़ज़ल को कहते समय ग़ज़लकार क़ाफ़िया में विश्राम लेकर अर्थात महत्त्व देकर वाचन करता है और वाह! वाह !! कि आवाज सुनकर मन्त्र मुग्ध हो जाता है। तिवारी जी क़ाफ़िया छनावट में माहिर लगते हैं।

तुम दिल के इतने क़रीब हो।
जैसे की कोई अक़ीब हो।
ताउम्र निभाए साथ मेरा,
हसरत है ऐसा हबीब हो।
तुझको मैं इतना प्यार करूँ,
हर शख़्स कहे तुम अजीब हो।
मैं एक मरीजे इश्क हूँ औ',
तुम ख़ुद ही मेरे तबीब हो।
हो चाँद सा मुखड़ा पहलू में,
बस अपना ऐसा नसीब हो।
मैं ख़ुशी ख़ुशी मर जाऊँ अगर,
तेरी बाँहों का सलीब हो।
हो प्यार का ज़ज़्बा हर दिल में,
कोई न किसी का रक़ीब हो।
ए खुदा दुआ ये क़बूल कर,

कोई न जहाँ में ग़रीब हो।
ये कैसी सियासत हो गई है?
कोई तो उमदा नजीब हो।
तुमको सुनकर यूँ लगा 'विजय',
तुम हर दिल अज़ीज़ अदीब हो।

इस ग़ज़ल में अदीब, नजीब, ग़रीब, रक़ीब, सलीब, नसीब, तबीब, हबीब, अक़ीब, क़रीब क़ाफ़िया और हो.... रदीफ़ है। ऐसे अनेक सुन्दर उदाहरण पेश किये जा सकते है। तिवारी जी के अन्दाजे बयाँ को सलाम। तिवारी जी कि संप्रेषण शैली प्रशंसनीय है।

अन्त में, यह कहते हुए ख़ुशी हो रही है कि तिवारी जी हिन्दी वाङ्मय के बहुत किमती खजाना हैं। कड़ी और खरी आलोचना इनको नम्बर एक सोना बना सकती है। आलोचक बिना साहित्य फिका पड़ जाता है। आलोचना करने के लिए सारे सिद्धान्त को पढ़ना, कृतिको शुरु से अन्त तक पढ़ना, फिर लिखना, बहुत मेहनत करनी पड़ती है। हिन्दी / नेपाली साहित्य की कमी नहीं बल्कि समालोचक की कमी है। समालोचक को कहीं किसी सरस्वती पुत्र ने अपना मित्र नहीं माना है। क्योंकि वह दूध को दूध पानी को पानी कहता है। तिवारी जी ऐसा न करें यही मेरी गुजारिश है। अस्तु!!!

-प्रो. देवी पन्थी
त्रिभुवन विश्वविद्यालय, काठमाडौ नेपाल।

❖

"फल खाए शजर" ग़ज़ल संग्रह में व्यक्त प्रासंगिकता

–डॉ. भावना एन. सावलिया

"फल खाए शजर" ग़ज़ल संग्रह में आधुनिक प्रासंगिक बोध व्यक्त हुआ हैं। प्रस्तुत ग़ज़ल संग्रह में आधुनिक युगीन स्वार्थी राजनीति खोखले और कपटी लोकतंत्र या लोकशाही सामाजिक असमानता, नारी का अपमान, धार्मिक आडंबर, शहरी वातावरण, श्रृंगार के दोनों पक्ष आदि पर शायर की पैनी दृष्टि का दर्शन होता है।

"फल खाए शजर" ग़ज़ल संग्रह में व्यक्त प्रासंगिकता :

विजय कुमार कृत "फल खाए शजर" ग़ज़ल संग्रह है। इसमें कुल उनहत्तर ग़ज़लें हैं। इसका प्रथम संस्करण १९९९ में और दूसरा संस्करण २०१७ में प्रकाशित हुआ था। "फल खाए शजर" ग़ज़ल संग्रह का विषय क्षेत्र विविध और विस्तृत है। इसमें ग़ज़लकार की सूक्ष्म और पैनी दृष्टि का दर्शन होता है। श्री विजय कुमार तिवारी जी ने अनेक यथार्थ परिस्थितियों का हमको परिचय करवाया है और समस्या प्रधान परिस्थितियों के निर्माता की ओर करारा व्यंग्य किया है। जैसे कि राजनीतिक, सामाजिक असमानता, धार्मिक आडंबर, आदि पर सिर्फ करारा व्यंग्य ही नहीं किया है, बल्कि हमारे गाल पर थप्पड़ भी मारा है। शायर विजय कुमार तिवारी स्वाभिमानी, संवेदनशील, स्पष्ट वक्ता और सहृदयी हैं। वे सच्ची बात करने में ज़रा भी हिचकिचाते नहीं हैं। उन्होंने हमारी राजनीति, लोकतंत्र और समाज का वास्तविक चित्रण करके जनता को जागरूक करने का प्रयास किया है।

कवि आस्थावादी हैं। उनके दिल में जनहित की भावना कूट-कूट कर भरी है। उसने प्रारंभ में माँ वीणावादिनी से मंगल कामना व्यक्त की है। जैसे

आश छोड़ूँ ना कभी हे माँ मुझे वो शक्ति दे।
ज्योति में तम को बदल दूँ मुझमें ऐसी भक्ति दे।"
बोध हो कर्तव्य का आदर्श से भी ना डिगूँ।
विश्व को कर दे प्रकाशित मुझमें ऐसा व्यक्ति दे।"

(पृष्ठ सं. २७)

विजय कुमार तिवारी जी ने अपनी ग़ज़ल में अनेक विषयों को स्थान दिया है। व्यक्ति, समाज, राष्ट्र, प्रेम, परिवार, सम्बन्ध, आशा, निराशा, स्वाभिमान, कर्तव्यपरायण, राजनीति, भ्रष्टाचार, सामाजिक असमानता, लोकतंत्र, धार्मिक आडंबर, भाईचारा, नारी अपमान, दुषित शहरी वातावरण, मातृभूमि, शौर्य, साहस, दुख-दर्द, समाज की यथार्थ स्थिति, दुष्टता, स्वार्थी ढोंगी, श्रृंगार, ख़ुशामद, संघर्ष, हौसला, सकारात्मक सोच, आस्था आदि विषयों पर शायर की क़लम चली है, जो शायर की गहरी अनुभूति का परिचय देती है साथ ही हमारा दिल भी हचमचा देते हैं।

राजनीति पर व्यंग्य : विजय कुमार समाज का सच्चा आईना हैं। उनकी पैनी दृष्टि भ्रष्ट राजनीति से अछूती नहीं है। उन्होंने आधुनिक युगीन दुष्ट और स्वार्थी राजनीति का पर्दा खोलकर रख दिया है।

देख रियासत के रंग ढंग,
रुप बदलती ज्यों रण्डी।
लगते हैं नेता भी अब
घोर शिखण्डी पाखण्डी।

(पृष्ठ सं. ३६)

इस दौर के मंजर तो हद दर्जा निराले हैं,
पीती है नदी पानी फल खाए शजर देखो।

उन्हें शर्म क्यों आयेगी,
मोटी है जिनकी चमड़ी।
वक्त तमाचा मारेगा,
तब निकलेगी सब अकड़ी।

पृष्ठ सं. ८८

रावण राज हुआ जाता है राम राज्य की कोशिश में।
चोर, लुटेरे, ख़ूनी डाकू भी अब नेता बनते हैं।

(पृष्ठ सं. ६०)

कहीं प्रान्त भाषा, कहीं धर्म जाति, कहीं राजनीति, कहीं स्वार्थ कारण।
हुआ जब से आज़ाद भारत तभी से लगातार जलता चला जा रहा है।

(पृष्ठ सं ९६)

इस प्रकार शायर ने आज़ाद भारत का यथार्थ चित्रण व्यक्त कर के देश के प्रति अपनी चिंता व्यक्त की है।

सामाजिक असमानता : सबका साथ सबका विकास हमारी सरकार का विकास सूत्र रहा है। पर वह सिर्फ कहने मात्र का रह जाता है। समाज में प्रवर्तमान सामाजिक असमानता और निर्धनता की और निर्देश करते हुए कहते हैं :

यहाँ भरपेट पानी भी मयस्सर हो नहीं पाता,
वहाँ कुत्तों को देखो दूध से नहला रहे हैं वो।

(पृष्ठ सं. ३७)

बनता है महल जिसके हाथों से वही अक्सर,
आकाश तले जीवन करता है बसर देखो।।

(पृष्ठ सं. ५९)

यहाँ पर कवि ने परिश्रमी निर्धन, ग़रीब बेसहारा लोगों की ओर अपनी संवेदना व्यक्त की है और विकासशील समाज की ओर करारा व्यंग्य किया है।

बेगुनाहों का क़त्ल देखा है,
और मुज़रिम फ़रार पाये हैं।
शेर की खाल ओढ़कर अक्सर,
राज करते सियार पाये हैं।

(पृष्ठ सं . ३५)

लूट, चोरी, ख़ून, खुलकर लोकशाही में करो,
शान से शासन तुम्हें सर पर बिठाने आयेगा।
कौरवों के साथ गिरधर भी खड़े हैं युद्ध में,
कौन फिर पाण्डव को अब कैसे बचाने आयेगा।

(पृष्ठ सं. ४१)

लोकशाही से उठा बादल बरसने आ गया,
ख़ून की बारिश में नहलायेगा ये सोचा न था।

(पृष्ठ सं. ५१)

आज कल लोकशाही का मतलब है ये,
लूट कर, ऐश कर, ख़ून कर, राज कर।

(पृष्ठ सं. ५६)

इस प्रकार कवि ने स्वतंत्र भारत का यथार्थ दर्पण दिखा कर देश के प्रति अपनी व्यथा व्यक्त की है।

यथार्थ जीवन का चित्रण : शायर ने अपने ग़ज़ल संग्रह में यथार्थ जीवन का परिचय दिया है।

झुर्रियाँ चेहरे की बताएँगी,
उम्र कैसे गुजार पाए हैं।

(पृष्ठ सं. ३५)

यहाँ पर परिश्रमी निर्धन लोगों की दशा का चित्रण किया है। समाज में संयुक्त परिवार संस्कारों की खान एवं त्याग समर्पण की अनमोल निधि तथा सुख-दुख के हिस्से का पर्व त्यौहार है। शायर का रुझान संयुक्त परिवार की ओर रहा है। आज धन संपत्ति को प्राप्त करने की अंधी दौड़ में संयुक्त परिवार का टुकडों में विभाजन हो गया है। संवेदना न जाने कहाँ दब गई है। तिवारी जी ने इसकी ओर संकेत करते हुए कहा है कि -

भोजन बनता था साझा
फूट गई है वो हण्डी
जोर लगाकर खोल जरा
खुल जायेगी हर कुण्डी।

(पृष्ठ सं. ३६)

स्वार्थी लोगों की ओर निर्देश करते हुए शायर ने लिखा है :

स्वार्थ लालच में यहाँ हर शख़्स अँधा हो गया
कौन किसको प्यार से छाती लगाने आयेगा।

(पृष्ठ सं. ४१)

बाह्याडंबर का व्यग्य : बाह्याडंबर का व्यंग्य करते हुए कवि कहते हैं :

धरम के नाम पर अब सिर्फ पत्थर की ही मूरत हो,
सजा के थाल छप्पन भोग के दिखला रहें हों।

(पृष्ठ सं. ३७)

प्यास के मारे तड़प तड़प कर प्राण गँवाये हैं जिसने।
घाट पे लाकर लोग उसी को क्यों नहलाया करते हैं ?

(पृष्ठ सं. ६०)

शहरी वातावरण का दूषित प्रभाव : आज के भौतिकवादी युग में शहरी वातावरण में सिर्फ स्वार्थ और मतलब ही दिखाई देता है। शहर की ईर्ष्या और द्वेषभाव में संवेदना और मानवता न जाने कहाँ छिप गई है पता ही नहीं चलता, इसका यथार्थ चित्रण शायर ने व्यक्त किया है। जैसे –

बीता दिन आपाधापी में रात में लम्बी तान गये,
शहरों में इक दूजे से अब होती दुआ सलाम नहीं।

(पृष्ठ सं. ३९)

यहाँ हाथों में काँटें निगाहों में ज़हर हैं,
दिमागों में हैं वहशत दिलों में भी शरर है।

(पृष्ठ सं. ७३)

आज भौतिकवाद में औ' इस मशीनी दौर में,
शाम की रौनक, सुबह की ताजगी मिलती नहीं।

(पृष्ठ सं. ४५)

हो गया है आदमी आज़ाद लेकिन आज भी,
हर शहर में हर नज़र में ख़ौफ़ ही बस पल रहा।

(पृष्ठ सं. ४४)

इस प्रकार हम देखते हैं कि शायर ने ज़हरीले शहर का यथार्थ परिचय दिया है।

ख़ुशामद का प्रभाव : आज के युग में मेहनत के बदले झूठी ख़ुशामद की बोलबाला है। व्यक्ति चाहे जितना सत्य और सक्षम क्यों न हों, यदि आपके पास ख़ुशामद की कला नहीं है तो आपके सारे काम रुक जाते हैं।

मेहनत छोड़ ख़ुशामद कर,
बनती है किस्मत बिगड़ी।

(पृष्ठ सं. ८९)

ऐसे भी लोग यहाँ देखें है बाग में।
खाते हैं केला गुण गाते हैं आम के।

(पृष्ठ सं. ३४)

यहाँ योग्यता को मिले काम कैसे ?
ख़ुशामद सिफ़ारिश के रोड़े बड़े हैं।

(पृष्ठ सं. ६२)

इस प्रकार शायर ने योग्यता से नहीं पर ख़ुशामद से जीवन सँवार ने की बात बताकर आज की परिस्थितियों से रुबरु करवाया है।

स्वाभिमान का महत्व : प्रत्येक मनुष्य को सबसे प्रिय अपना स्वाभिमान होता है। स्वाभिमान ही व्यक्तित्व निखार की कड़ी हैं। यहाँ पर स्वाभिमानी शायर ने कहा है :

ग़म उठाये हैं बहुत और सहे हैं धोखे।
रंग इन्सान का पर दिल से उतरने न दिया।
आज कट जाए अगर सर तो कोई बात नहीं
यूँ हमेशा ही रहा शान से झुकने न दिया।

(पृष्ठ सं. ६९)

निहत्थे ही बदलूँगा तकदीर अब।
लड़ूँगा मैं मौजूदा हालात से।

(पृष्ठ सं. ८१)

सहारे नहीं औ' कठिन राह है,
रुकुँगा नहीं अब मैं हिमपात से।

(पृष्ठ सं. ८१)

अभी जमीर मरा ही नहीं इसी कारण
निभा रहा हूँ वचन मैं मुकर नहीं सकता।

(पृष्ठ सं. २८)

सकारात्मक भाव और मानव सहज वृत्तियाँ : शायर ने मानव सहज वृत्तियों का सूक्ष्म चित्रण किया है, जैसे –

यही दुआ मैं सदा माँगता रहा हूँ विजय
खुदा करें मेरे दुश्मन भी खूब फूले फलें।

(पृष्ठ सं. ८७)

अगर अरमान है दिल में भरोसा बाजुओं पर है,
तो दुनिया रोक क्या पायेगी ऐसे जाँ निसारों को।

(पृष्ठ सं. ३८)

जला ले दीप निडर हो के यार तूफाँ में,
हुई कभी भी किसी रोशनी की हार नहीं।

(पृष्ठ सं. ३३)

आप माने या न माने पर वो दिन भी आएगा,
मंच पर सम्मान से सच को नवाजा जाएगा।

(पृष्ठ सं. २९)

अगर वो सवारी है माँ शारदे की।
तो निश्चित विजय के ही घर जा रही है।

(पृष्ठ सं. ७१)

मेरे नसीब में शायद कोई बहार नहीं,
इधर को आती कभी ख़ुशनुमा बयार नहीं,
क़दम क़दम पे मेरे साथ साजिशें क्यों हैं ?
जहाँ में मेरी किसी से भी कोई रार नहीं है।

(पृष्ठ सं. ३२)

इस प्रकार "फल खाए शजर" ग़ज़ल संग्रह में सकारात्मक भाव, आशा-निराशा, आस्था संवेदना, दुख दर्द, आदि मानव सहज वृत्तियाँ दृष्टिगोचर होती हैं।

संघर्ष और हौसला : शायर ने "फल खाए शजर" ग़ज़ल संग्रह में संघर्षों को हौसले की उड़ान से मात दिया है।

राह में काँटें बिछा दो फिर भी मैं चलता रहूँगा।
आँधियों में भी दिया बन कर के मैं जलता रहूँगा।

(पृष्ठ सं ३९.)

मुश्किलों से डर के जो मर जाए वो तो और होंगे,
जीत हो या हार पर संघर्ष मैं करता रहूँगा।

(पृष्ठ सं. ३१)

हाथ से मेरे क़लम भी छीन ले चाहे ज़माना
फिर भी अपने ख़ून से तो गीत मैं लिखता रहूँगा।

(पृष्ठ सं. ३१)

हौंसले के शेर देखिए :

आप पत्थर पे भी फूलों को लगा सकते हैं,
मैं हवा में भी नए फूल खिला सकता हूँ।

आप समझें हैं मुझे मोम का पुतला ही मगर,
मैं तो फौलाद को भी मोम बना सकता हूँ।

(पृष्ठ सं. ३२)

भले ही खार या रोड़े बिछाएँ आप राहों में,
मगर रंग लायेगी इक दिन कड़ी मेहनत हमारी।

(पृष्ठ सं. ९४)

यहाँ पर शायर का हौसला हमारे लिए प्रेरणादायी है।

नारी जीवन का यथार्थ चित्रण : ज़माना चाहे कितनी प्रगति कर ले पर नारी जीवन की प्रगति ख़ौफ़ से भरी हुई है। चाहे महाभारत का युग हो, चाहे रामायण काल हो या चाहे आधुनिक युग हो। कहीं भी नारी सुरक्षित और सम्मानित नहीं है। प्रस्तुत ग़ज़ल में नारी के प्रति शायर का हृदय चित्कार कर उठा है, देखिए :

नारी विकास पर है जिरह पाँच दशक से,
कोठों पर क्यूँ हैं आज खनकते हुए सवाल।

(पृष्ठ सं. ८३)

कोख के मोती ने देखो लाज माँ की बेच दी,
खींच डालें वस्त्र सारे और आँचल जल रहा।

(पृष्ठ सं. ४४)

नई दुल्हन की डोली को शहर की भीड़ में लूटा,
दिया हमने ही रहकर मौन ये साहस कहारों को।

(पृष्ठ सं. ३८)

छोड़ना मत यूँ अकेला इस तरह सुनसान में,
भेष में साधु के वो सीता चुराने आयेगा।

(पृष्ठ सं. ४१)

इस प्रकार कवि ने नारी के करुण जीवन की दास्तान प्रस्तुत करके समग्र समाज के गाल पर ज़ोर से थप्पड़ मारा है।

"फल खाए शजर" में व्यक्त श्रृंगार भाव : ग़ज़ल और श्रृंगार का अटूट संबंध हैं। प्रेम, मुहब्बत और रंगीन भाव ही ग़ज़ल का प्राण तत्व है और मनुष्य जीवन एवं प्राणी मात्र में प्रेम तत्व अनमोल निधि है। प्रेम ही जीवन की सुन्दरता है। शायर विजय कुमार ने श्रृंगार भाव की विविध अदाओं को व्यक्त करके ग़ज़ल के भाव पक्ष और कला पक्ष को अत्यंत सुन्दर बना दिया है। श्रृंगार के दोनों पक्ष सहजता से प्रस्तुत किये हैं। संयोग श्रृंगार में शायर के प्यार के नशा की विलक्षणता देखिए :

कभी जो प्यार किया हो किसी से तो जानो,
ये वो नशा है कभी जो उतर नहीं सकता।

(पृष्ठ सं. २८)

आँखे हैं नशीली सी गैसू हैं घटाओं से,
होंठों के ये मयखाने हैं गाल गुलाबों से।

तस्वीर तुम्हारी ही इस दिल में बसा ली है,
जाओगे कहाँ अब तुम छिपकर के निगाहों से।

(पृष्ठ सं. ४३)

यूँ भी अदा तुम्हारी क़ातिल बहुत है जानम
निकलो न यार तिस पर सज धज के और बन के।

(पृष्ठ सं. ४७)

बरसात में नहा के क्या खूब लग रहें हैं,
शरमा के भीगा आँचल लिपटा है तन से उनके।

(पृष्ठ सं. ४७)

इस प्रकार विजय कुमार ने संयोग श्रृंगार की विभिन्न अदाओं का मोहक भाव व्यक्त किया है। संयोग श्रृंगार के साथ साथ शायर ने वियोग श्रृंगार का उत्कृष्ट भाव व्यक्त किया है। विरह श्रृंगार प्यार की चरम सीमा होती है।

हँसी के बाँध से सैलाबे ग़म को रोकता तो हूँ,
मगर तन्हाई में ये बाँध अक्सर टूट जाता है।
कहाँ जाऊँ, कहूँ किससे, किसे हमराज मैं समझूँ,
जिसे अपना समझता हूँ, वही तो लूट जाता है।

(पृष्ठ सं.६४)

गले किसीको लगाऊँ कैसे ?
कसम तुम्हारी भुलाऊँ कैसे ?
रक़ीब के हो गए हो तुम तो,
सबक वफ़ा का सिखाऊँ कैसे ?

(पृष्ठ सं. ५८)

इस प्रकार शायर ने श्रृंगार के दोनों पक्षों का बहुत ही सुन्दर ढंग से चित्रण किया है।

समय और जीवन : समय परिवर्तनशील है, समय के साथ ऋतु चक्र और प्राणी मात्र का जीवन चलता और बदलता रहता है। समय और जीवन का अटूट संबंध है। जैसे:

जनम मरण औ' रात दिवस,
कुदरत की अनमोल घड़ी
खोज रहा मानव अब तक
जग की सबसे प्रथम कड़ी।

कहने का तात्पर्य यह है कि जीवन और मृत्यु, रात और दिवस यानी कि समग्र जीवन चक्र कुदरत की अनमोल घड़ी है, वो घड़ी बीत जाने के बाद वापस लौटकर नहीं आती। खोजने से भी नहीं मिल पाती।

शायर ने भाईचारा के भाव को भी व्यक्त किया है। जैसे:

अगर नफ़रत मिटाना चाहते हैं तो तुम दिलों से तो,
ये हिन्दू वो मुसलमाँ है मिटा दो ऐसे नारों को।

समग्रतः देखा जाए तो "फल खाए शजर" ग़ज़ल संग्रह में विजय कुमार तिवारी ने आधुनिक युगीन प्रासंगिकता को व्यक्त किया है। समाज में प्रवर्तमान विभिन्न परिस्थितियों का यथार्थ चित्रण करके समाज को जागरूक करने का प्रयास किया गया है। शायर स्पष्ट वक्ता है। उन्होंने ने नीड़रता से लोकशाही और राजनीति पर करारा व्यंग्य किया है। सामाजिक असमानता से पीडितों, निर्धनों और बेसहारा के प्रति शायर ने अपनी संवेदना व्यक्त की है। जहाँ जरूरत पड़ी है वहाँ शायर ने क़लम और शब्द बाण भी चलाया है।

- डॉ. भावना एन. सावलिया
हिंदी अध्यापिका
आर्ट्स कॉलेज मोडासा (उ. गुजरात)

❖

बेमिसाल ग़ज़लों का बेहतरीन सरमाया फल खाए शजर

– कविता बष्ट

फल खाए शजर श्री विजय तिवारी जी का उत्कृष्ट ग़ज़ल संग्रह है। विजय तिवारी जी काव्य जगत के एक सशक्त हस्ताक्षर हैं। उनकी लेखनी के बारे में जितना लिखा जाए कम है। आपकी बेबाक लेखनी काव्य जगत के लिए वरदान स्वरूप है।

ग़ज़ल का इतिहास बहुत प्राचीन है। कालांतर में ग़ज़ल उर्दू से निकलकर हिंदी में आई तथा अपने विस्तार और समसामयिक रूप में भी स्थापित हुई है। वैसे हिंदी में ग़ज़ल पहले भी कही जाती रही है। निराला जी, प्रसाद जी ने भी ग़ज़लें अपने हिंदी भाव में सुदृढ ढंग से कही हैं। दुष्यंत के बाद तो हिंदी ग़ज़ल आम हो गयी है। इन्हीं ग़ज़लों को सार्थकता देने के लिए हिंदी के क़लमकार श्री विजय तिवारी जी ने भी 'फल खाए शजर' हिंदी और उर्दू का मिलाजुला भावनात्मक ग़ज़ल संग्रह लिखा है, जिसे गुजरात सरकार द्वारा पुरस्कृत भी किया गया है। उनके ग़ज़लों की झलक से मैं आपको रूबरू करवाती रहूँगी।

हमें है जान से प्यारा, ज़मीं का स्वर्ग ये अपना,
न देंगे हम किसी क़ीमत पे जीते जी चिनारों को।

आपकी ग़ज़लों में देश प्रेम भी अछूता नहीं है। ऐसे ही हर रूप रंग और समयानुसार तिवारी जी ने ग़ज़लों को एक सूत्र में बांधा है। आपकी 69 ग़ज़लें ही एक साहित्यकार के कर्तव्य निष्ठा का परिचय देती हैं। आपने अनेक विषयों पर अपनी क़लम चलाई है जैसे, सामाजिक विसंगतियाँ, ज्वलन्त समस्याओं, पूजा, प्रेम, देश-भक्ति, दर्शन, समाज, राजनीतिक, भावुकता, विरोधाभास, व्यवहारिकता, साहस, मानवता आदि समसामयिक गतिविधियों में ग़ज़ल संग्रह का योगदान रहा है।

तिवारी जी की काव्य साधना का प्रमाण उनकी उत्कृष्ट ग़ज़लों में दिखता है। आपको ग़ज़लों में बेबाकी से अपनी बात रखने का हुनर है तथा ग़ज़लों का रंग-बिरंगा रूप किसी पुष्प मंजरी का झुरमुट सा भी दिखता है।

बागों में खिले नव मंजरी सी खुशबू लिए हुए है ग़ज़ल
देश की चिंगारी बनकर वीरों के सम्मान में बनी है ग़ज़ल
ज्वलंतशील हो या कोई भावों को देती अपनी सरसता
जब देखूं प्रेम से तो नव संगनी सी अपनी बनी है ग़ज़ल"

श्री विजय तिवारी जी हिंदी साहित्य के उपासक हैं। आपने एक उत्कृष्ट साहित्यकार की भूमिका निभाई है। आपका हर काव्य संग्रह काबिल-ए-तारीफ़ है। वर्ष 1991 में आपका पहला ग़ज़ल संग्रह 'निर्झर' बहुत चर्चित हो चुका है। 'फल खाए शजर' आपका दूसरा ग़ज़ल

संग्रह है।

हर तरफ़ अचरज के ही बस सिलसिले हैं।
पर्वतों पर भी मुझे दलदल मिले हैं।

लो सदी इक्कीसवीं भी आ गई है
कैक्टस में फूल चम्पा के खिले हैं।

कवि मन के विचारों को आप बहुत ख़ूबसूरती से ढाल देते हैं। समाज को आइना दिखाकर व्यंग्य प्रहार, युगीन विरूपताएँ ग़ज़लों में गम्भीरता से समझने के भाव को प्रदर्शित करती है। जहाँ तक मैंने आपकी ग़ज़लों को पढ़ा और समझा है, उनकी बारीकियों को अपने ज़हन में उतारा है। मैं समझती हूँ कि आप एक उत्कृष्ट एवं मर्यादित लेखक हैं। आपने शिल्प का बखूबी निर्वहन किया है। एक साहित्यिक यात्रा का सुखद अनुभव काव्य धारा में बखूबी मिलता है। आपने ग़ज़लों को मानवीय संवेदना के साथ बिम्बात्मक और प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति, व्यंग्यात्मक, राजनीतिक, सामाजिक, दैनिक व्यवहार, रिश्ते-नाते, प्रेम अनुभूतियों को बहुत ही सहजता से संजोया है।

नई दुल्हन की डोली को शहर की भीड़ में लुटा,
दिया हमने ही रहकर मौन के साहस कहारों को।

समाज के हर रूप को आपने क़लम से कागज पर उतारा है। इन ग़ज़लों में हिंदी शब्दों का अच्छा समावेश किया है हालाँकि उर्दू के शब्दों से भी आपने रूबरू कराया है। ग़ज़लों में हिंदी और उर्दू ग़ज़ल का मनोहारी समन्वय है।

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हिंदी साहित्यकार के रूप में विजय तिवारी जी ने अपनी एक अलौकिक पहचान बनाई है। ग़ज़ल का हिंदी में समृद्ध होना भी काव्य जगत के लिए प्रंशसनीय है और यही हिंदी की गुणवत्ता को तिवारी जी ने अपने ग़ज़लों में प्रदर्शित किया है। आपकी लेखनी ने हिंदी और उर्दू को एक सुदृढ रूप में ढालकर भाषा को सरल और सहज बना दिया है। आपकी मेहनत, सोच एवं कर्तव्यनिष्ठा आपकी ग़ज़लों में पढ़ने को मिलती है। आपने ग़ज़लों में शहरीकरण, भौतिकतावाद और मशीनीकरण जैसे गहरे विचार को शामिल किया है तथा अपने शब्दों को तराशकर उन्हें ग़ज़ल के रूप में ढाला है।

ये धागा प्रेम का जुड़ जाए इस कोशिश में हूँ लेकिन
यहाँ से जोड़ता हूँ तो वहाँ से टूट जाता है

रिश्तों को बचाने - तोड़ने-जोड़ने पर भी विजय तिवारी जी ने अपनी कुशल काव्य शैली से बखूबी निभाया है। आपने ज्वलन्तशील बिंदुओं पर भी ध्यान केंद्रित किया है।

यकीन हो ही गया आज तुमको समझाकर
कभी ढलान पे पानी ठहर नहीं सकता।

पता नहीं कि ज़माने को क्या हुआ है "विजय"
किसी को आज किसी पर भी एतबार नहीं।

बहुत गूढ़ता से रचनाकार ने अपने शब्दों को शिल्प शैली में उतारा है। समाज की गतिविधियों का ध्यान लेखक ने अपने मनोभावों से उकेरा है और अपने देश की चिंता का चिन्तन बहुत ही कलात्मकता से प्रस्तुत किया है।

इस दौर के मंजर तो हद दर्जा निराले हैं,
पीती है नदी पानी, फल खाए शजर देखो।

समाज में व्याप्त विसंगतियों पर व्यंग्य करने का हुनर और चिंतन की निपुणता इन सभी शेरों में मिलती है। आपने अनेक ग़ज़लों को अलग-अलग रूप रंग में ढाला है। आपकी ग़ज़लों में प्रेम सौन्दर्य, राष्ट्रभक्ति एवं अन्य विषय भी आपकी नज़रों से अछूते नहीं हैं। तिवारी जी की कलात्मकता उनकी ग़ज़ल संग्रह में आसानी से मिल जाती है तथा बहुत आसानी से आपकी ग़ज़लों को स्वर में ढाला जा सकता है। जब मैं आपकी ग़ज़लों का रसपान कर रही हूँ तो आपकी ग़ज़ल लयबद्ध होकर मेरे हृदयतल को छू रही है और मुखमंडल पर आपकी ग़ज़ल की लयकारी बनी हुई है। आपकी पसंद जरूर पाठकों को आकर्षित करेगी।

आपके शेर की ख़ूबसूरती को कैसे बया करूँ कुछ आपके शेर बहुत ही ख़ूबसूरती से ढले हुए है। जितनी बार पढ़ो जहन में बने ही रहते हैं। कुछ झलकियां पाठकों की नज़र -

चाहता हूँ बस यही बन जाऊँ 'गर मैं भी 'विजय' - सा,
तो मुसीबत में भी फिर मद मस्त हो हँसता रहूँगा।

ऐ विजय, मेरी क़लम में है करामात बड़े,
आग पानी के भी चाहूँ तो लगा सकता हूँ।

ग़ज़ल, कविता का एक प्रकार है जिसकी शुरुआत दसवीं शताब्दी में फ़ारसी कविता में हुई थी और बारहवीं शताब्दी में यह इस्लामी सल्तनतों और सूफ़ी संतों के साथ दक्षिण एशिया में आई। उर्दू ग़ज़लें भारत में बहुत प्रचलित और लोकप्रिय हैं और आज के दौर में श्री विजय तिवारी जी का बहुचर्चित ग़ज़ल संग्रह 'फल खाए शजर' के बारे में मुझे भी लिखने का मौका मिला है। मैं तिवारी जी का धन्यवाद करती हूँ और आपके साहित्यिक उज्ज्वल भविष्य की कामना करती हूँ। कुशल साहित्यकार श्री विजय तिवारी जी एवं गुजरात अकादमी को वैश्विक धरोहर ग़ज़ल संग्रह की हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएं।

- कविता बिष्ट
वरिष्ठ साहित्यकार
देहरादून
उत्तराखंड

❖

सर्वश्रेष्ठ ग़ज़ल-संग्रह 'फल खाए शजर'

– डॉ. गुलाब चंद पटेल

हिन्दी साहित्य में ग़ज़लकार के रूप में प्रसिद्ध साहित्यकार, पूर्व शिक्षक, हिन्दी साहित्य परिषद की ओर से जिन्हें सर्व श्रेष्ठ काव्य के लिए 1992 में गुजरात के तत्कालीन राज्यपाल महामहिम डॉ. स्वरूप सिंह के कर कमलों से प्रथम पुरस्कार प्रदान किया गया है, तथा श्रेष्ठ काव्य के लिए 1993 में राज्यसभा की सदस्य श्रीमति उर्मिला बहन पटेल द्वारा पुरस्कार पदक प्राप्त हुआ है ऐसे अहमदाबाद के श्री विजय तिवारी की पुस्तक "फल खाए शजर" हिन्दी ग़ज़ल संग्रह की समीक्षा लिखने का सुअवसर हमे प्राप्त हुआ है, हम गौरवन्वित हैं।

फल खाए शजर काव्य संग्रह में माँ शारदा से शक्ति और भक्ति की माँग कवि विजय ने प्रथम ग़ज़ल में की है।

आस छोड़ूँ ना कभी हे माँ मुझे वो शक्ति दे,
ज्योति में तम को बदल दूँ मुझमें एसी भक्ति दे।

दूसरी ग़ज़ल में बताया गया है की इंसान आज विवश है, आज हर इंसान ख़ुशामद में लगा है, किन्तु जब बगावत होगी तब पछताना होगा। आँधीयों में भी प्रकाशित होकर सीना तान कर हमेशा लड़ते रहने की बात कवि ने इस ग़ज़ल में की है। ये न समझो कवि क़लम ही चला सकता है, शमशीर भी उठा सकते हैं। विजय तिवारी की हर ग़ज़ल में एक नया संदेश छिपा हुआ है। कवि की क़लम पानी में आग लगा दे एसी है। ग़रीबों का धन लुटकर मंदिर मस्जिद में दान करने वाले लोगों पर कवि ने व्यंग्य किया है। ग़ज़ल आगे बताती है की बेगुनाह को क़त्ल होते हुए देखा है, और मुज़रिम फ़रार होते हुए भी पाये हैं,

बेगुनाहों का क़त्ल देखा है,
और मुज़रिम फरार पाए हैं।
शेर की खाल ओढ़कर अक्सर,
राज करते सियार पाए हैं

शेर की खाल ओढ़कर राज करने वाले 'भेड़िये' की बजाय कवि ने 'सियार' शब्द रखकर बताया है की एक निर्बल व्यक्ति भी शेर बनकर राज करता है।

आज के नेता पाखंडी बन गए हैं। सीयार का रंग बदल गया है। कवि बताते हैं की धर्म के नाम पर अब सिर्फ मूर्तियों को छपन्न भोग लगाए जा रहे हैं, दूसरी ओर ग़रीब इंसान को खाना भी मुनासिब नहीं होता है, भूखे पेट सोना पड़ता है।

पुरुषोतम तुम खूब बनो पर मुझकों रास रचाने दो
श्याम बनूँ बस चाह यही है मुझको बनना राम नहीं।

कवि ने श्याम बनकर रास खेलने की इच्छा व्यक्त की है, राम बनना नहीं चाहते हैं। आज हर शख़्स स्वार्थ और लालच में अँधा हो गया है। पर्यावरण पर भाषण देने वाला ही

रात को जंगल कटाने आएगा, ऐसे मार्मिक कटाक्ष कवि की ग़ज़लों में देखने को मिलता है।

जो अभी पर्यावरण पर दे गया भाषण यहाँ,
देखना वो रात में जंगल कटाने आएगा।
कौरवों के साथ गिरधर भी खड़े हैं युद्ध में,
कौन फिर पांडव को अब कैसे बचाने आएगा।

आज ऐसा लगता है की कौरवों के साथ गिरधर गोपाल खड़े हैं, फिर पांडवों को कौन बचाने आएगा ? आज ऐसी ही स्थिति बन गई है, सत्य का साथ देनेवाला कोई नहीं है, सदगुणो की कमी महसूस हो रही है। आग लगाने वाला ही दमकल लेकर आग बुझाने आएगा ऐसी घटना कभी कभी हक़ीक़त में बनती है।

आगे चलकर कवि थोड़ा रोमांस में दिखाई पड़ते हैं। आँखे नशीली सी गेसू हैं हे, ये गुलाब जेसे होंठ, अपनी प्रियतमा की तस्वीर अपने दिल में बसा कर कहते हैं, की अब तुम केसे निकल पाओगी ?

शरमा के कुछ लजा के घूँघट ज़रा निकालो।
गुजरे ज़माने अब वो मासूम लड़कपन के।

कवि एक नयी दुल्हन को कहते हैं की अब तुम मत शर्माओ, आप की शादी हो गई है, आप के पति के सामने ज़रा घूँघट हटाकर बात करो, लड़कपन के वो ज़माने चले गए है।

रोको न आज दिल को हो जाय हो जाने दो,
पीने दो जाम जम के मदमस्त उस नयन के।

इस पंकित में स्पष्ट होता है की तुम आज मत रोको मुझे, आप के होंठो से हमे जाम पीने दो, कवि विजय ने अपनी ग़ज़लों में श्रृंगार रस और समाज की आपदाएँ, कमियों को अपनी ग़ज़लों के माध्यम से उजागर करने का प्रयास किया है। पाठकों को ग़ज़लें पढ़ने का आनन्द मिले और ग़ज़लों से कुछ नया संदेश प्राप्त करे उसका ध्यान कवि ने रखा है। कवि विजय को हमने नजदीक से देखा है, सुना है, उनमें प्रस्तुति की कला भी भरपूर पड़ी है। यदि रचना अच्छी हो लेकिन प्रस्तुति सही न हो तो सुंदर रचना अप्रिय लगती है। तुम मेरी कब्र पर ये विजय सिर्फ काँटे चढ़ाया करो, कब्र का प्रयोग संस्कृति की चेतना को जगाता है। उनकी ग़ज़लों में उर्दू शब्दों का ज्यादा उपयोग नहीं किया गया है, अपने देश प्रेम, आस्था, खुद्दारी, सामाजिक, राजनैतिक, विषमताएँ यह सभी मुश्किलों का सामना करके अपना जीवन व्यतीत करना पड़ता है। व्यक्ति के अंदर और बाहर आज जो संघर्ष चल रहा है, उसकी अर्जित अंतरंग और आत्मीय अभिव्यक्ति कवि द्वारा इन ग़ज़लों में व्यक्त हुई है। विजय तिवारी की ग़ज़लें एक अच्छा सुकून देनेवाली उम्दा ग़ज़लें है। इन ग़ज़लों में सबसे बेहतरीन व्यंग्यात्मकता का पक्ष देखने को मिलता है। आज व्यंग्य जीवन और साहित्य में होना जरूरी है, आज के विसंगत समाज में होना बहुत जरूरी बन गया है।

राजनैतिक, धर्म, समाज, परिवार, रिश्ते, दैनिक व्यवहार सभी में कुरुपताएँ फैली हुई हैं। उन्हे व्यंग्य के माध्यम से कवि ने सशक्त अभिव्यक्ति दी है। कोई दो राय नहीं है। आपने

आज के समय से जुड़कर आज के समय प्रवाह में स्थिति - परिस्थिति को व्यंग्यात्मक लहजे में हमारे समक्ष बहुखूबी रखा है।

ब्रच्छ न फल मच्छन करै नदी न संचै नीर

आज एसा हो नहीं रहा है, राज सत्ता में बैठे हुए वृक्ष रूपी नेता अपने फल ख़ुद ही खा रहे हैं, लोगों तक फल पहुँचना स्वप्न सा बन गया है। अपना ही कल्याण करने में आज के नेता जूटे हुए हैं। पैसों की खातिर अपना पक्ष छोड़कर अन्य पक्ष के साथ जुड़ जाते हैं।

विजय तुम वो सुखनवर हो जो पत्थर दिल को पिघला दे, इस पंक्ति का अर्थ है की पत्थर दिल को भी पिघला दे एसी ग़ज़लें श्री विजय तिवारी जी ने दी हैं। उनकी ग़ज़लें सुनकर ग़म में डूबे हुए इंसान को बड़ा सुखचेन मिले ऐसी उनकी ग़ज़लें है।

सभी कह रहे हैं ज़माना बुरा है,
मगर कोई ख़ुद में नहीं झाँकता।

लोगों से सुनने को मिलता है की, आज ज़माना बहुत बुरा है, किन्तु किसी भी इंसान ने कभी अपने गिरेबान में याने की ख़ुद में क्या बुराई है वो देखने की कभी कोशिश नहीं की है।

व्यंग्यात्मक, प्रगतिशील, उपदेशात्मक, ग़ज़लों के साथ कुछ ग़ज़लें प्रेम-श्रृंगार से भरी पड़ी हैं। एक शेर यहाँ दृष्टांत के रूप में पेश करता हूँ।

याद तुम्हारी ये लाती है,
रात न जाने क्यों आती है?

शाम ढले परछाईं हमसे चुपके चुपके, बतियाती है, झील लगे जंगल में जैसे, पायलिया सी खनकाती है। यहा प्रेम श्रृंगार का अनुभव होता है। मरुस्थल में तपने के बाद प्रणय की अमराइयों की छांव में कवि पाठकों को ले जाते हैं। मृदु सुकुमार भावनाओं के घावों पर मलम लगते शेर दिल में प्यार जताते हैं। दिलचस्प और रोमांस की ग़ज़लें पढ़ने का और विवेचन करने का सुंदर अवसर पाकर हम धन्यता का अनुभव कर रहे हैं। उनकी ग़ज़लों में जीवन की वास्तविकता का सत्य भी दष्टि गोचर होता है।

दोस्त हमने हजार पाये हैं,
ज़ख़्म भी बेशुमार पाये है।

कवि दोस्त के बारे में एक अच्छा और बुरा अनुभव इन पंक्तियों से वक्त करने की कोशिश की है। अच्छे दोस्त भी हजारों की संख्या में पाये है, अपितु उसमे ज़ख़्म देने वाले दोस्त भी बेशुमार पाये हैं। अच्छे दोस्तों की गिनती की गई है वो हजार है, जब की ज़ख़्म देने वाले दोस्तों की संख्या गिनती करना भी मुश्किल है।

श्री विजय तिवारी निष्ठावान ग़ज़लकार हैं। और हिन्दी के उपासक हैं। उनकी हिन्दी भाषा के प्रति लगन और विरासत में मिला हुआ हिन्दी का खजाना उन्हे मंजिल की ओर ले गया है।

आजकल हिन्दी की ग़ज़लें तीन स्वरूपों में रची जाती हैं। उर्दू में संस्कृति निष्ठ तथा

प्रचलित सार्वजनिक शब्दावली से संबन्धित हिंदुस्तानी भाषा में, तत्सम हिन्दी में सबसे कम और हिंदुस्तानी में सबसे अधिक याने की सर्वाधिक ग़ज़लें लिखी जा रही हैं। विजय तिवारी की अधिकांश ग़ज़लें हिंदुस्तानी में रचित हैं, जिन में हिन्दी-उर्दू की गंगा-यमुना की छवि उभर आई है। तथा तथ्य की पारदर्शिता भी बलवित है। उनकी सृजन धर्मिता और आत्मविश्वास उनकी ग़ज़लों में मुखर है।

आप क्या चीज हैं, में गीत ग़ज़ल से अपने चांद सूरज, ये सितारे भी नचा सकता हूँ, हजारों दोस्त तथा बेशुमार ज़ख़्म पाने वाले कवि ने बेगुनाहों का क़त्ल होते हुए देखा है, और मुज़रिमों को फरार होते हुए देखा है, ये सामाजिक विषमताओं की ओर लोगों का ध्यान केन्द्रित करने के लिए लिखा गया है, साहित्य समाज का दर्पण है, और उसमें अच्छाइयाँ तथा बुराइयाँ बाहर निकल आती हैं। शेर की खाल ओढ़कर सियार जेसे इंसान राज करते हुए और फूल देने पर भी खार पाते हुए लोगों को कवि ने देखा है। ग़ज़ल संग्रह का निष्कर्ष, फल खाए शजर अपने आप में एक अलग किस्म का शीर्षक है। उन्हे हार्दिक बधाई और शुभ कामनाएँ।

- डॉ. गुलाब चंद पटेल
कवि लेखक अनुवादक
नशा मुक्ति अभियान प्रणेता,
ब्रेस्ट कैंसर अवेरनेस प्रोग्राम योजक
इंडियन लायन्स गांधीनगर

मानवीय संवेदनाओं का अत्यन्त संवेदनशील बयान

–डॉ. परशुराम गणपति मालगे

ग़ज़ल उर्दू काव्य का एक अत्यंत लोकप्रिय, मधुर, दिलकश और रसीला अंदाज़ है। ग़ज़ल इतनी मधुर है कि वह लोगों के दिलों के नाज़ुक तारों को छेड़ देती है। उर्दू के सुप्रसिद्ध साहित्यिक एवं आलोचक रशीद अहमद सिद्दीक़ी साहब ग़ज़ल को बड़े फख्र के साथ 'आबरू-ए-शायरी' कहते हैं। शायद यही सब बातें हैं कि ग़ज़ल आज तक क़ायम है, और सभी वर्ग के लोग पसंद करतें हैं। माना जाता है कि, फारसी से ग़ज़ल उर्दू में आई। वली के साथ उर्दू शायरी दक्कन से उत्तर की ओर आई। यहाँ से उर्दू शायरी का पहला दौर शुरू होता है।

आज की हिन्दी ग़ज़लें बेहताशा बढती महँगाई, बेरोजगारी, राजनीतिक दाँव-पेंच, सामाजिक-सांस्कृतिक समस्याएँ आदि को अभिव्यक्त करने की कोशिश में लगातार अग्रसर हैं। आज की ग़ज़लों में प्रायः सम-सामयिक जीवन और युग बोध का चित्रण मिलता है। आप चाहे किसी की भी ग़ज़ल उठाकर देखें उसमें सम-सामयिक जीवन तथा जीवन से जुड़े हर बिंदु का उल्लेख मिलेगा।

आज का आधुनिक युग प्रायः हर जगह स्वार्थ, अमानवीयता और अन्याय आदि से भर गया है। इससे आम आदमी का जीव अत्यंत संघर्षमय बन गया है और वह संघर्ष करते - करते इस व्यवस्था के ख़िलाफ़ लड़ने में हार मानकर निराश दिखाई दे रहा है। अतः साहित्य की अन्य विधाओं के लेखकों के समान ग़ज़लकार भी अपना सामाजिक उत्तरदायित्व बख़ूबी निभाते हुए निराशाग्रस्त लोगों में आशावादी भावना जागृत करने का प्रयास किया है। इस दिशा में श्री विजय तिवारी जी भी पीछे नहीं हैं। वे आज की परिस्थिति का उल्लेख करते लिखते हैं...

स्वार्थ लालच में यहाँ हर शख़्स अँधा हो गया,
कौन किसको प्यार से छाती लगाने आएगा।
कौन अपना है पराया कौन है,
सब हक़ीक़त रू-ब-होने लगी।

ऐसे समाज से, समस्याओं से डरकर भाग जाना प्रायः कायर या नंपुसक मनःस्थिति को दर्शाता है। इसीलिए श्री विजय जी ने लोगों के मन में विश्वास और आशावादी भावना को जागृत करने के लिए लिखते हैं की...

राह में काँटे बिछा दो फिर भी मैं चलता रहूँगा,
आँधियों में भी दिया बनकर के मैं जलता रहूँगा।
मुश्किलों से डर के जो मर जाएँ, वो तो और होंगे,
जीत हो या हार पर संघर्ष मैं करता रहूँगा।

आस छोड़ूँ ना कभी हे माँ, मुझे वो शक्ति दे,
ज्योति में तम को बदल दूँ, मुझमें ऐसी भक्ति दे।
जला ले दीप निडर हो के यार तूफाँ में,
हुई कभी भी किसी रौशनी की हार नहीं।

ऐसी कई ग़ज़लें प्रस्तुत संग्रह 'फल खाए शजर' में हैं, अवश्य इन्हें पढ़कर पाठक आशावादी एवं निडर बनेंगे इस में कोई शक नहीं है।

ऐसी कई ग़ज़लें हैं, प्रस्तुत संग्रह में, जो आज की राजनीतिक परिवेश की सच्चाई को खोलकर रखते तो हैं ही, उसके साथ साथ एक व्यंग्य भी प्रस्तुत करते हैं। समकालीन हिन्दी ग़ज़ल में राजनीतिक चेतना मुख्य रूप से दुष्यंत के समय आयी है। वही बात हम तिवारी जी की ग़ज़लों में भी देखते हैं। उदाहरण के लिए...

लूट, चोरी, ख़ून खुलकर लोकशाही में करो,
शास ने शासन तुम्हें सर पर बिठाने आएगा।
लोकशाही से उठा बादल बरसने आ गया,
ख़ून की बारीश में नहलाएगा ये सोचा न था।
ताक पर रख दे सभी आदर्श, मानवता, दया,
विश्व में जन्नत वही पाएगा ये सोचा न था।
आजकल लोकशाही का मतलब है ये,
लूट कर ऐश कर ख़ून कर, राज कर।
रावण-राज हुआ जाता है राम-राज्य की कोशीश में।
चोर, लुटेरे, ख़ूनी, डाकू भी अब नेता बनते हैं।

धर्म की आड़ में आज सांप्रदायिकता और जातिवाद का घिनौना खेल पूरे विश्व में खेला जा रहा है। धर्म में नफ़रत व टकराव के बीज डाल कर हवाओं को ज़हरीला बनाने का हर संभव प्रयास किया जा रहा है। इससे सांप्रदायिक दंगे, आतंकवाद के साथ-साथ हिंसा की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है। किन्तु कवि, साहित्यकार और ग़ज़लकार अपने दायित्वों का पालन कर जनता को जागृत करने का प्रयास कर रहे हैं। आज जनता ये बखूबी समझ गयी है, धीरे-धीरे सांप्रदायिक रंगों और धार्मिक उन्माद के सच से जनता रूबरू हो रही है। इस दिशा में श्री तिवारी जी की ग़ज़लें भी पीछे नहीं हैं वे लिखतें हैं।

अगर नफ़रत मिटाना चाहते हो तुम दिलों से तो,
ये हिन्दू वो मुसलमाँ है मिटा दो ऐसे नारों को।
अगर ये चाहते हो तुम चमन में फिर बहार आए,
खिलाकर फूल चाहत के, बुलावा दो बहारों को।

बदलते समय में मानवीय और सामाजिक मूल्यों में होने वाले परिवर्तन की छाप श्री विजय तिवारी जी की ग़ज़लों पर स्पष्टतः देखी जा सकती है। मूल्यों में जैसे-जैसे बदलाव आता गया उसकी बानगी ग़ज़ल में भी देखने को मिलती रही। हमारा मूल्य समय सापेक्ष रहा है। समय के बदलते दौर से ग़ज़लकार अलग नहीं हुआ। बदलते समय में इंसानियत को

बरकरार नहीं रखने की टीस भी उनके ग़ज़लों में दिखती रही है।

मतलब की दुनिया में रिश्ते हैं नाम के,
मिलता है सब कुछ ही बदले में दाम के।

आज के इस मशीनी युग ने सामाजिक स्तर पर विभिन्न समस्याओं को जन्म दिया है। हमारे सामाजिक परिवेश की ऐसी कई समस्याएँ ग़ज़ल में व्यक्त हुई हैं। ऐसा कोई भी पहलू नहीं है, जिस पर उनकी नजरें नहीं गई हों। सामाजिक और धार्मिक विडंबनाओं की ओर इशारा करते हुए लिखते हैं–

यहाँ भर पेट पानी भी मयस्सर हो नहीं पाता,
वहाँ कुत्तों को देखो दूध से नहला रहे हैं वो।
धरम के नाम पर अब सिर्फ पत्थर की ही मूरत को,
सजा के थाल छप्पन भोग के दिखला रहे हैं वो।
जो कहते थे यहाँ हम दूध की नदियाँ बहाएँगे
जमीं को बेख़ता के ख़ून से नहला रहे हैं वो।

बहुत सारी ग़ज़लों में ग़ज़लकार ने समकालीन यथार्थ का मंज़र उपस्थित किया है। जो विसंगतियों को उघाड़ने में क़ामयाब हुई हैं। आज शासन और व्यवस्था पूंजीपतियों, व्यवसायियों और सेठ-साहूकारों, नेताओं के हाथों का खिलौना बन चुका है। ऐसे में भला ग़ज़लकार चुप कैसे रहे? ग़ज़लकार जनता को उसके अधिकार दिलाने के लिए व्यवस्था के प्रति गहरा आक्रोश जताता है। व्यवस्था के प्रति विरोध का स्वर मुखरित किया है —

सत्ता की इस लफ्फाजी में,
जनता तो गूँगी श्रोता है।
न्यायालय बहरा अँधा है,
न्याय यहाँ अब तो सोता है।
झोंपडी भी मयस्सर हुई ना हमें,
क्यूँ कहा था बनेगा महल जाइए।

उत्तर आधुनिकता, बाजारवाद और भूमंडलीकरण, मशीनी दुनिया, नारी जीवन का यथार्थ, जातिवाद, प्रांतवाद, भाषा भेद आदि विषयों के बारे में लिखते हैं....

आज भौतिकवाद में औ' इस मशीनी दौर में,
शाम की रौनक सुबह की ताजगी मिलती नहीं।
प्रान्त भाषावाद में आतंक चारों ओर है,
हर दिशा में आग है यह देश मेरा जल रहा

आज पर्यावरण का विनाश अत्यंत प्रमुख मुद्दा है। अतः आधुनिकता के नाम पर जंगलों का विनाश करनेवाले इन्सान की दोहरी मानसिकता पर करारा व्यंग्य करते हुए विजय जी अत्यंत प्रभावी बात रखते हैं कि –

जो अभी पर्यावरण पर दे गया भाषण यहाँ,
देखना वो रात में जंगल कटाने आएगा।

इस प्रकार "फल खाए शजर" संग्रह की ग़ज़लों के विभिन्न आयाम देखने पर पता चलता है कि ग़ज़लकार श्री विजय तिवारी जी ने जीवन व जगत के तमाम बिंदुओं पर अपनी दृष्टि डाली है। व्यक्ति से जुड़ी ऐसी कोई समस्या नहीं, जिस पर ग़ज़लें नहीं कही गयी हों। समय व परिवेश के अनुसार ग़ज़लकारों की सूक्ष्म दृष्टि समस्याओं की पड़ताल करती रही हैं। उनकी पीड़ा, उनके सपने व उनकी सोच को शब्दों की संवेदना मिलती रही है। समाज, धर्म, राजनीति, सत्ता की कई विद्रूपताएँ भी हम इनकी ग़ज़लों में व्यक्त होते देख सकते हैं। समग्रतः कहा जाए तो यह हमारी जीवन संवेदना का खुला बयान है।

- डॉ. परशुराम गणपति मालगे
विभागाध्यक्ष एवं सहायक प्राध्यापक
बेसेंट महिला कालेज मंगलूरू कर्नाटक ५७५००३

❖

'फल खाए शजर' आम आदमी के जीवन का खास ग़ज़ल संग्रह

–डॉ. दिग्विजय कुमार शर्मा

श्री विजय कुमार तिवारी जी का यह ग़ज़ल संग्रह पहले तो मैं यह नहीं समझ पाया कि इस पुस्तक का नाम "फल खाए शजर" ही क्यों रखा गया। जब इसे पढ़ना शुरू किया तो पता चला कि इसकी खाशियत यह है कि यह संग्रह व्यक्ति के जीवन से जुड़े अनेक बिंदुओं को स्पर्श करता है व्यक्ति के जीवन के विभिन्न पहलुओं को अपने में समेटे हुए है। फिर चाहे वह प्रेम, दोस्ती, दुश्मनी, अपने पराए की राजनीति के अनेक उतार चढ़ाव और तमाम ऐसे जीवन के मोड़ आते हैं जिन्हें विजय जी ने स्वयं इस पीड़ा को महसूस किया जाना पड़ता है। फिर चाहे वह किसी के भी जीवन की पीड़ा क्यों न हो, विजय जी ने अपनी ग़ज़लों के माध्यम से शब्दों की माला में पिरोया है। जो अनूठा और अद्भुत है जिसे वतर्मान को आइना दिखाने का प्रशंसनीय कार्य है।

वर्तमान समय की बात करें तो हिंदी साहित्य में अंतरमन को विचलित करने वाली, मन को झकझोर देने वाली, मन की चंचलता को प्रवाहित करने वाली, अद्भुत आकर्षण का आकार होने वाली उत्साह भरने वाली, चित्त की प्रवृत्ति की बदलने वाली ग़ज़ल, गीत, कविता ही एक माध्यम है जो अपने भूत, भविष्य और वर्तमान परिवेश में घटित अनेक घटनाओं को अपने ग़ज़ल व काव्य विधा के माध्यम से एक मार्ग बनाता है। इसलिए ग़ज़ल, शेरो, शायरी का क्रम दुष्यत कुमार से पहले से होता आ रहा हैं लेकिन दुष्यंत से पूर्व का समय उर्दू ग़ज़लों का था उनके साथ ही हिंदी में ग़ज़लों की विधा का श्रीगणेश हुआ। और आज देश दुनिया में अनेक नामचीन हुए हैं और ग़ज़लकार आज भी अपना मुकाम हासिल कर रहे हैं। आज इन सभी विधाओं से लेखक, पाठक कोई बचा नहीं है। जिस पर कुछ न कुछ लिखा और पढ़ा न गया हो, अभी और भी संधान होने चाहिए, जीवन में अवश्य गुनगुनाने चाहिए। स्वयं को समझाने के लिये अनेक सम, विषम और विपरीत, अनुकूल परिस्थितियों को जानना, पहचानना चाहिए। जिससे स्वयं को समाज में स्थान दिला सके, यह कार्य अपने ग़ज़लों के माध्यम से विजय जी बखूबी कर रहे हैं।

विजय जी ने व्यक्ति के बीते जीवन और उसके घटित जीवन के अनेक पहलुओं को झेलते व्यक्तियों को देखा और महसूस किया है जिसे इन्होंने अपनी ग़ज़ल के माध्यम से माला में पिरोया है–

बड़ा विवश है कभी कुछ भी कर नहीं सकता,
ख़ुशी से जी न सका और मर नहीं सकता।

अभी जमीर मरा ही नहीं इसी कारण,
निभा रहा हूँ वचन मैं मुकर नहीं सकता।

जो ख़ुशामद में लगा है एक दिन पछतायेगा,
कर्म योगी ही अलौलिक सुख जहाँ में पायेगा।

चील कौए लौमड़ी सब देखते रह जाएंगे,
हंस फिर सोने की थाली में ही मोती खायेगा।

विजय जी ने जीवन में अनेक लोगों के मानस की विषम परिस्थितियों को देखा है। उनको संघर्ष करते और सामना करते समाज को देखते हैं फिर वो अपने मित्र हों या फिर कोई और कोई परवाह नहीं करते वो लिखते हैं–

हर ख़ुशी दोस्तों में लुटाता रहा,
मैं ग़मों को धुँए में उड़ाता रहा।

पेश दिल को करूँ आपके सामने,
आज तक हौसले मैं बढ़ाता रहा।

राह में छोड़कर चल दिये वो मगर,
गीत फिर भी यूँ ही गुनगुनाता रहा।

अनेक संघर्ष और कष्टों के चलते जीवन में कभी हार न मानने वाले शख़्स ने समाज का डटकर मुकाबला किया है। कभी मुश्किलों के सामने स्वयं में हार नहीं मानी है यही संघर्ष उनको और मजबूत करता है, सम्बल प्रदान करता है।

राह में काँटे बिछा दो फिर भी मैं चलता रहूँगा,
शान से मर कर दिलों में तो सदा पलता रहूँगा।

मुश्किलों से डर के जो मर जाएँ वो तो और होंगे,
जीत हो या हार पर संघर्ष मैं करता रहूँगा।

कभी कभी स्वयं के नसीब को भी कोसते रहते हैं। कुछ लोग इस ज़माने में गुनाह करके भी गुनहगार साबित नहीं होते, इस पर भी इन्होंने अपने शब्दों में ग़ज़ल का रूप प्रस्तुत किया है।

मेरे नसीब में शायद कोई बहार नहीं,
इधर को आती कभी ख़ुशनुमा बयार नहीं।

सजा ए मौत मिली हमको जुर्म ए उल्फ़त पर,
वो क़त्ल कर के भी ठहरे गुनहगार नहीं।

निराश होके बिखर जाऊँ मैं वो शख़्स नहीं,
किसी का वक्त पे बेशक है इख़्तियार नहीं।

वर्तमान समाज की स्थिति से रूबरू कराते हुए विजय जी ने यह संकलन तैयार किया है। यहाँ पर तो सभी नाम के रिश्ते हैं। मतलब की दुनिया है यहाँ तो केवल और केवल

पैसों को रिश्तों से ज्यादा अहमियत देते हैं लोग, पैसा ही उनके लिए सबकुछ है। समाज में फैलते भ्रष्टाचार, बलात्कार, जैसी जघन्य घटनाएँ यहाँ आम बात हो गई हैं, लोग ईश्वर राम, अल्लाह को बदनाम करते नज़र आते हैं, लिखते हैं–

मतलब की दुनिया है रिश्ते हैं नाम के
मिलता है सबकुछ ही बदले में दाम के।

फूलों को तोड़ दिया नोची हर इक कली,
बनते हैं बन्दे फिर अल्ला के राम के।

ऐसे भी लोग यहाँ देखे हैं बाग में,
खाते हैं केला गुण गाते हैं आम के।

आजकल मित्रता में भी लोग क्या से क्या कर देते हैं। सच्चे मित्र आजकल दुनिया में नहीं रहे बहुत परिवर्तन देखने को मिल रहा है –

दोस्त हमने हजार पाए हैं।
ज़ख़्म भी बेशुमार पाए हैं।

गुनाहों का क़त्ल देखा है,
और मुज़रिम फ़रार पाए हैं।

शेर की खाल ओढ़कर अक्सर,
राज करते शियार पाए हैं।

यहाँ व्यक्ति नित नए सपने रोज बुनता है, सरकार, सत्ता स्वयं भू, व्यक्ति स्वयं को कुछ बताकर बड़ी बड़ी हांकता है। लेकिन कथनी और करनी में जमीन आसमान का अंतर होता है, सत्ता भोग सुख, धनाढ्यों की अलग ही लीला है परिपाटी है, ग़रीबों को पानी तक नसीब नहीं पीने को और उनके कुत्तों के लिए वी आई पी सुविधा के लिए लड़ जाते हैं,

दिखा सपने सुहाने बाग को बहला रहे हैं वो,
सिवा अपने न कोई बागवाँ बतला रहे हैं वो।

यहाँ भरपेट पानी भी मयस्सर हो नहीं पाता,
वहाँ कुत्तों को देखो दूध से नहला रहे हैं वो।

हाँ वतन को सुरक्षित रखने की भी बात बराबर करते हैं। अगर इसकी सुरक्षा चाहते हो तो हरसंभव हम सबको सतर्कता के साथ रहना होगा। पहले से ही ऐसी व्यवस्था रखो जिससे कोई भी दुश्मन अपनी सरहदों को न भेद सके, घुसपैठ न कर सके। अगर हम सभी इसे ख़ुशहाल और विकसित देखना चाहते हैं तो पुनः एकबार फिर से बहार लायें सभी देशवासी ख़ुशहाल रहें। हिन्दू मुसलमान की लड़ाई बंद हो, जाति, धर्म, मजहब से उठकर ही सुकून और शांति मिल सकती है, मुल्क में अमन हो सकता है। समरसता भाई चारे का भाव तभी हो सकेगा।

अगर नफ़रत मिटाना चाहते हो तुम दिलों से तो,
ये हिन्दू वो मुसलमां है मिटा दो ऐसे नारों को।

हिफ़ाज़त चाहते हो तो सजग रहना जरूरी है,
न गुजरे सर से पानी बाँध दो पहले किनारों को।

हमें है जान से प्यारा जमी का स्वर्ग ये अपना,
न देंगे हम किसी कीमत पे जीते जी चिनारों को।

व्यक्ति के जीवन के बारे में भी अपने शब्दों के लिए कहते हैं। एक जगह बैठे किसी को कुछ मयस्सर नहीं होता। हाथ पैर दिमाग आगे बढ़ने के लिए चलाने ही होते हैं।

इस दुनिया में उसका जीना भी क्या कोई जीना है,
जिसने कभी कुछ दुख न सहा हो जो थोड़ा बदनाम नहीं।

बंद कमरों में कभी भी रोशनी मिलती नहीं,
द्वार मन के बंद हों तो ज़िंदगी मिलती नहीं।

दर्द के साये ने जिस पर नज़र डाली न हो,
इस चमन में कोई भी ऐसी कली मिलती नहीं।

हमारे देश में पाखंडियों की कोई कमी नहीं है, यहाँ धर्म के नाम पर ठगों की कोई कमी नहीं है। हर शख़्स एक दूसरे को किसी न किसी प्रकार से छल रहा है। फिर वो चाहे प्रान्त की भाषा, संस्कृति की बात करें या आतंक की कहीं न कहीं आग लगी हुई है। जो कि बुझने का नाम नहीं ले रही। और यह तीव्र होती जा रही है यही देश की विडंबना है।

राम नामी ओढ़कर वह शख़्स मुझको छल रहा,
स्वार्थ साधन के लिए ही साथ मेरे चल रहा।

प्रान्त भाषावाद में आतंक चारों ओर है,
हर दिशा में आग है यह देश मेरा जल रहा है।

यहाँ की सभी गतिविधियों से व्यक्ति संघर्ष करते हुए जूझते हुए, ठोकर खाते हुए सम्भलने लगा है। वह अब ज़माने से डरने वाला नहीं रह गया। फिर चाहे कोई कितना भी सितम क्यों न कर ले लेकिन अब हम टूटकर बिखरने वाले नहीं हैं। अब हम भी किसी से कम नहीं हैं। अब हम सम्भल चुके हैं तुम भी अब सम्भल जाओ।

ज़माने तू करले सितम पर सितम,
मगर टूट कर अब न बिखरेंगे हम।

जहाँ में नहीं हम किसी से भी कम,
समझले की नहले पे दहले हैं हम।

व्यक्ति के जीवन के सुख दुख को बड़े ही क़रीब से देखा है इन्ही ज़ज़्बातों को अपने हालातों को शायरी, ग़ज़ल के माध्यम से विजय जी ने शब्दों में पिरोया है वे लिखते हैं–

ज़िंदगी का आईना है जिक्र है हालात का,
शायरी इजहार है मेरे दिल ज़ज़्बात का।

यहाँ एक बात और देखने को मिलती है कि व्यक्ति अपने दुख से दुखी नहीं है – वह दूसरों के सुख से दुखी होता दिखाई देता है यही व्यक्ति की आज ज़माने में फितरत सी बन चुकी है।

दूसरों की ख़ुशी से न जल जाइये,
उनकी ख़ुशियों में ख़ुद आप ढल जाइये।

राह ख़तरों से खाली नहीं आपकी,
हर क़दम पे है दुश्मन सम्भल जाइये।

यहाँ हर व्यक्ति परेशान नज़र आता है। यहाँ की करिश्माई रंगत को देखकर व्यक्ति बड़ा हैरान नज़र आता है। शांति, शीतलता में भी जब जलता हुआ हर नगर दिखाई देता है, कोई कुछ भी करने को बेबस है। उसके अंदर क्या चल रहा है यह कोई नहीं जानता, इस दुनिया में हर कोई व्यक्ति के घावों पर मरहम के बजाय नमक मलता दिखाई देता है। घुटन भरी ज़िंदगी में रोज व्यक्ति जीता और मरता है।

ये कैसा करिश्मा है हैरां है नज़र देखो,
बरसात के मौसम में जलता है शहर देखो।

इस दौर के मंजर तो हद दर्जा निराले हैं
पीती है नदी पानी फल खाए शजर देखो।

जब भी व्यक्ति स्वयं से परेशान होता है तो नफ़रत करने लगता है उसे कुछ भी दिखाई नहीं देता सोचने समझने की शक्ति क्षीण हो जाती है। ऐसे में व्यक्ति आखिर क्या करे –

इस कदर बेजार हूँ कि कुछ समझ आता नहीं
इस जहाँ में कोई भी अब दिल को बहलाता नहीं।

रास्ता मुश्किल मिला तो चल दिये वो छोड़कर
इस तरह जैसे कि हमसे अब कोई नाता नहीं।

हादसे इतने हुए हैं साथ मेरे क्या कहूँ
मौत भी हो सामने तो अब मैं घबराता नहीं।

क्या बताएँ कैसे कैसे हादसे सहते रहे
सच कहें तो ज़िंदगी भर किस्त में मरते रहे।

हर दिशा में हैं मुखर शैतान ही अब
होठ तो बस आदमी के ही सिले हैं।

मजहबी राहों को खुं से लाल करते
कौम के भटके हुए सब क़ाफ़िले हैं।

लो सदी इक्कीसवीं भी आ गई है
कैक्टस में फूल चंपा के खिले हैं।

विजय तिवारी जी ने जीवन के प्रत्येक पहलुओं को अपनी ग़ज़ल, और शेरो, शायरी में बखूबी पिरोया है, सभी रंग इनके ग़ज़ल संग्रह में समाहित हैं। फिर चाहे देश, समाज, व्यक्ति, प्रेम या फिर राजनीति दुश्मनी, या अन्य देश की बात क्यों न हो समाज के सभी बिंदुओं पर अपनी बख़ूबी क़लम चलाई है जिससे एक उम्दा और वर्तमान परिप्रेक्ष्य में समसामयिक घटनाओं को समेटा गया है यही जीवन की विभिन्न परिस्थितियों और स्थिति की कटु सच्चाई को दर्शाता है। इनकी लेखनी और भाषा शैली बहुत ही सहज, सरल शालीनता लिए हुए शब्द संयोजन हिंदी और उर्दू शब्दों का बड़ा ही तारतम्य समावेश है। जो कि चार चाँद लगाती है, एक एक पंक्ति बड़े ही अंतर्मन और अनुभव के साथ ग़ज़ल रूपी माला में पिरोई गई है। जिसे बार बार पढ़ने को मन करता है। जो कि विजय जी को एक अगल स्थान और पहचान दिलाता है।

भाई विजय जी के प्रति अगाध प्रेम और विश्वास है कि आपकी क़लम बराबर यूँ ही चलती रहे मेरी शुभकामनाएँ सदैव आपके साथ हैं। यह ग़ज़ल संग्रह एक अनूठा संग्रह है इसकी एक एक ग़ज़ल अपने में अलग ही मुकाम रखती प्रतीत होती है आप अपने लक्ष्य की प्राप्ति करें, एक नया कीर्तिमान स्थापित करें। ढेरों बधाई साधुवाद।

- डॉ. दिग्विजय कुमार शर्मा
साहित्यकार, शिक्षाविद
केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा (भारत)

❖

'फल खाए शजर' एक विहंगावलोकन

–प्रो. किरीट गुणवंतराय जोशी

ग़ज़ल हिन्दी साहित्य की एक ऐसी विद्या है जो एक बहन की तरह उर्दू से हिन्दी में आयी है। हिन्दी की प्रकृति में कई विशेषताओं सह समाहित हो गई है। अन्य विद्याओं की तुलना में ग़ज़ल ने हिन्दी के युवा पाठकवर्ग पर अपना प्रभाव जमाया है। इस प्रसंग में ग़ज़ल के स्वरूप को केन्द्र में रखकर हिन्दी ग़ज़ल के सशक्त हस्ताक्षर डॉ. ऊर्मिलेश अपना मत व्यक्त करते हुए कहते हैं – 'हिन्दी ग़ज़ल से मेरा अभिप्राय उर्दू कविता से आयातित उस काव्यविद्या से है जो उर्दू ग़ज़ल की शैक्षयिक काया में हिन्दी की अत्मा को प्रतिष्ठित करती हुई आधुनिक जीवन और परिवेश की संगतियो–विसंगतियों को नूतन भावबोध के साथ स्थापित करती हुई आगे बढ़ रही है।'[1] सच है कि कवियों की दृष्टि देश, समाज और राजनीति में व्याप्त विशेषताओं–मर्यादाओं पर केन्द्रित होती है।

श्री गोपालदास नीरज ने ग़ज़ल का संबंध मानव-जीवन के साथ जोड़ते हुए परिभाषा दी है – 'ग़ज़ल न तो प्रकृति की कविता है, न अध्यात्म की वह हमारे उसी जीवन की कविता है जिसे हम सचमुच जीते हैं।'[2]

ग़ज़ल के कथ्य और स्वरूप की दृष्टि से दो प्रकार प्रसिद्ध हैं इश्के हकीकी एवं इश्के मजाजी किन्तु उपर्युक्त परिभाषाओं को केन्द्र में रखकर हम कह सकते हैं कि ग़ज़ल ने हिन्दी भाषा में प्रवेश करने के साथ ही अपने स्वरूप को ही विस्तृत कर लिया है।

आधुनिक हिन्दी साहित्य में दुष्यंत कुमार के बाद ग़ज़ल विद्या का काफ़ी विकास हुआ है। सामयिक दो दशक हिन्दी काव्य जगत के इतिहास में ग़ज़ल युग के नाम से पहचाना जाता है। हिन्दी ग़ज़ल काव्य परंपरा में अहमदाबाद के ग़ज़लकार विजय तिवारीजी अनन्य स्थान रखते हैं। अपने सशक्त हस्ताक्षर के रूप में 'निर्झर', 'फल खाए शजर' और 'आक़ा बदल रहे हैं' जैसे ग़ज़ल–संग्रहों की रचना की है। इनमें से 'फल खाए शजर' ग़ज़ल संग्रह सन 1999 ध्रुव प्रकाशन अहमदाबाद से प्रकाशित एवं हिन्दी साहित्य अकादमी गुजरात तथा अखिल भारतीय सद्भावना ट्रस्ट अहमदाबाद द्वारा पुरस्कृत है। इसमें कुल मिलाकर 69 ग़ज़लें संकलित हैं।[3]

ग़ज़ल विद्या और उसके कवि अधुनातन हैं। फिर भी आपने मंगलाचरण की परिपाटी का निर्वाह करते हुए आजीवन लेखनकार्य जारी रखने का माँ सरस्वती से वरदान माँगा है–

माँगता वरदान वीणावादिनी माँ शारदे
तेरे चरणों में ही छूटे प्राण वो अनुरक्ति दे।

तो अन्य स्थान पर साहित्य–सेवा के लिए माता सरस्वती का आह्वाहन करते हुए प्रतीत होते हैं –

अगर वो सवारी है माँ शारदे की
तो निश्चित विजय के ही घर जा रही है।

कवि जीवन :

रचना में रचनाकार का व्यक्तित्व प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से निरूपित होता है। तदनुसार आपने महाकवि वाल्मीकि के समान लेखन के लिए दर्द को आवश्यक माना है। आगे उन्होंने अपनी कल्पना, कवित्वशक्ति का परिचय क़लम की ताकत के रूप में दिया है। इस विषय में लिखा है –

आप क्या चीज हैं मैं गीत ग़ज़ल से अपने,
चाँद सूरज यें सितारे भी नचा सकता हूँ।
ए 'विजय' मेरी क़लम में हैं कारामात बड़े,
आग पानी में भी चाहूँ तो लगा सकता हूँ।

लेखन के प्रति ग़ज़लकार की समर्पण भावना बड़ी सराहनीय है। कवि के शब्दों में देखिए –

हाथ से मेरे क़लम भी छीन ले चाहे ज़माना,
फिर भी अपने ख़ून से तो गीत मैं लिखता रहूँगा।

इसी तरह लेखनी सामाजिक अन्याय के प्रति विद्रोह भी कर सकती है –

परेशान करना हमें छोड़ दे, कहीं बम न बन जाये मेरी क़लम।

तो कहीं पाठकवर्ग को बहला भी सकती है –

ज़िंदगी का मजा आयेगा, गीत तुम मेरे गाया करो।

कवि का लेखनकार्य लोककल्याण और वैश्विकभावना से परिपूर्ण होता है। इस सच्चाई का उद्घाटन निम्नांकित ग़ज़लांश में किया गया है –

क़लम छोड़ सकता नहीं वो कभी ,
विजय का तू कर दे भले सर क़लम।

मैंने अपना घर जलाकर रोशनी दुनिया को दी है,
मिल सके सुख इस जहाँ को इसलिए मरता रहूँगा।

कवि ने प्रशासन की ओर से बूढ़ापे या मरण के बाद किये जानेवाले लेखक–सम्मान पर व्यंग्य किया है। साथ ही साथ वे विकट परिस्थिति में भी समाज का दिशा–निर्देशन करके अपने दायित्त्व को संभालना चाहते हैं। उन्होंने वैयक्तिक रूप से लेखन के लिए पीड़ा, धरतीप्रेम, कर्मनिष्ठा, सद्‌गुण, आंतरिक स्वच्छता, स्वाभिमान, सादगी का अभाव, संतोष, निराशा की अस्वीकृति परिश्रम जैसी हक़ीक़तों का इकरार किया है। लेकिन वे सारी कठिनाईयों के बीच अपना कवि कर्म जारी रखना चाहते हैं। उनका आत्मविश्वास देखिए –

ज़माने का मिले सहयोग गर तो ठीक वरना मैं
अकेले ही सजाऊँगा हँसी महफ़िल सितारों की।

इस प्रकार कवि–कर्म की वफ़ादारी और उच्चभावना सराहनीय है।

प्रणय भावना :

ग़ज़ल विद्या के प्रायः इश्के मजाजी और इश्केहकीकी विषय रहे हैं। हमारे आलोच्च कवि तिवारी कृत 'फल खाए शजर' ग़ज़ल संग्रह में आधे हिस्से के आसपास लौकिक प्रणय संबंधी ग़ज़लों का आलेखन हुआ है। तदनुसार ग़ज़लकार व्यक्ति के जीवन में प्रेमिका के महत्त्वपूर्ण स्थान की प्रतिष्ठा करते हैं। साथ ही साथ प्रणयभाव छिपाने पर भी छिपता नहीं है। कवि अपनी प्रियतमा के प्रणयभाव में बंधकर उनकी अदाओं से मदमस्त हो जाते हैं। तो कहीं श्रृंगार–परिधान को कातिल बतलाते हुए कहने लगते हैं –

यूँ भी अदा तुम्हारी क़ातिल बहुत है जानम ,
निकलो न यार तिस पर, सजधज के और बन के।

आगे अपनी प्रेमिका की अदाओं के ख़्यालों को भूलना चाहते हैं लेकिन भूल नहीं पाते हैं। तो कहीं प्रियतमा की सिर्फ दृष्टि ही तीर के समान प्रतीत होती है। अपनी प्रियतमा के चेहरे की सुंदरता को तुलनात्मक ढंग से चित्रित किया है –

घूँघट पर हटते ही जगमग यूँ हो गई ,
मावस में लगता है पूनम की रात।

प्रेमिका के इस सौंदर्य को ईश्वर की अनुपम सौगात के रूप में स्वीकारा गया है। सौंदर्यपूर्ण अपनी प्रेमिका को गले लग जाने और ग़म को भूला देने की विनंति की गई है। साथ ही साथ हीर–रांझा, लैला–मजनु जैसे ऐतिहासिक प्रेमी चरित्रों के हवाले से अपने प्रेम की कमी का इकरार किया गया है। प्रेमिका की ओर समर्पण तथा कल्पना की भावना से ग़ज़लकार के रूप में महफ़िल का आयोजन करना चाहते हैं –

सजा दूँ जमीं पे सितारों की महफ़िल ,
करुँगा मैं ये भी कहें तो मगर वो।

इस प्रणयी ग़ज़लकार ने प्रेम की अवस्थाओं रूठना, तन्हाई, गमगीनी, दीवानापन, मृत्यु, त्याग, एवं बलिदान से अपने पाठकों को परिचित करवाना चाहा है। आगे कवि ने सांसारिक प्रेम की असफलता से पाठकों को परिचित करवाया है –

शजर लगाये थे हमने तो प्यार के लेकिन,
कभी ख़ुशी का न उसमें से एक फल निकला।

यहाँ शीर्षक की सार्थकता भी सिद्ध हो जाती है। हमारे कवि का सांसारिक असफल प्रेम ईश्वरो मुख होकर श्रीराम के मर्यादा के आदर्श को न स्वीकार करके श्रीकृष्ण की रासलीला को विस्तारवादी प्रवृत्ति के रूप में अपनाते हैं। जैसे –

पुरुषोत्तम तुम खूब बनो, पर मुझको रास रचाने दो,
श्याम बनूँ बस चाह यही है मुझको बनना राम नहीं है।

इस प्रकार 'इश्केहकीकी' का तो संकेत है, 'इश्केमजाजी' का विस्तृत आलेखन हुआ है।

चिंतन :

हमारे ग़ज़लकार ने निजी वैचारिकता को प्रकट करना चाहा है। तदनुसार मानवजीवन को ईश्वर की सौगात के रूप में बताया गया है। दुःख की अनिवार्यता के साथ–साथ सुख–दुःख के क्रम को स्वीकार किया गया है। कवि के शब्दों में –

दर्द के सौयाद ने जिस पर नज़र डाली न हो,
इस चमन में कोई भी ऐसी कली मिलती नहीं।

रुक नहीं सकता कभी भी आएगा सुख एक दिन,
जैसे तय है दिन का आना और जाना रात का।

अन्य स्थान पर आध्यात्मिक विचारों के रूप में मृत्यु की शाश्वतता, स्वर्ग और नर्क, पाप–पुण्य तथा भाग्यवाद पर चर्चा अवश्य ही हुई है। व्यावहारिक दृष्टिकोण भी बड़ा प्रशंसनीय है। हर बार व्यवहार बदलनेवाले लोगों का एतबार न करने की सलाह दी है –

नहीं उसका भरोसा वो हर इक पल रुख बदलता है,
जताकर प्यार ऊपर से करेगा वो शरारत फिर।

साथ ही साथ आत्मबल और आशा को महत्त्व दिया गया है। तो ख़ुशामदखोर व्यक्ति को अपनी किस्मत बिगाड़नेवाला कहा है। उनके प्रति व्यंग्य भी किया है –

तू बहुत नादान है तू बन नहीं पाएगा कुछ भी,
देख मुझको मैं ख़ुशामद का हुनर भी जानता हूँ।

राष्ट्रप्रेम भी अभिव्यक्त हुआ है। वे ऐतिहासिक दृष्टिकोण से मीर, जफर और जयचंद को पहचानने की सलाह देते हैं। उन्हें लगता है कि इस देश के गद्दारों ने ही अधिक नुकसान पहुँचाया है –

जब बगावत कर उठेगी इस चमन की हर कली,
बागवां उस दिन 'विजय' रोयेगा औ' पछतायेगा।।

वैश्विकविचारधारा के रूप में ग़रीबी निवारण और शत्रु के कल्याण की बात सोची गई है। कवि की विचारधारा ऊँचे दर्जे की है।

सामाजिक विचार :

ग़ज़लकार ने अहमदाबाद महानगर में रहकर समाजजीवन–संबंधी अनुभव को प्रस्तुत किया है। आत्मीय लोग धोखा देते हैं। कवि सामाजिक विषमता से अपनी उदासी को रोकना चाहते हैं लेकिन रुकती नहीं है। सामाजिक स्वार्थपरकता नज़र अंदाज नहीं हुई है। नकली वफ़ादारी दिखानेवालों पर भी करारा व्यंग्य किया है –

हमारी मौत ने ये राज एक खोल दिया,
वफ़ा के प्याले में भी दोस्तो गरल निकला।

औपचारिकतापूर्ण व्यवहार से सामाजिक जीवन में फैली अशांति का जीक्र किया है–

आग लगी है हर इक घर में दर्द भरा है हर दिल में,
कैसे फिर मैं गीत ख़ुशी के महफ़िल में हँसकर गाउँ।

साथ ही साथ सामाजिक ईर्ष्या, धोखेबाजी, ग़रीबी, किश्तवृत्ति, रूढिवादिता, अमीरों की मूर्तिपूजा का चित्रण किया है। तो शिल्पकारों की ग़रीबी का चित्रण बडा ही करूण है –

बनता है महल जिसके हाथों से वही अक्सर,
आकाश तले जीवन करता है बसर देखो।

इन्सानों की ईर्ष्यावृत्ति ज़हर के रूप में सामने आई है –

साँपो की न हो बातें विषधर न वही केवल,
इस दौर का इन्सां भी उगले हैं ज़हर देख़ो।

सामाजिक चिंतन गहन और अनुभव पर तराशा हुआ है।

प्रकृति चित्रण :

वर्षाऋतु की प्रकृति के सौंदर्य का यथातथ्य रूप से चित्रण करते हुए पानी के महत्त्व को स्थापित किया गया है। प्रियतम के प्रकृति पर मानवीयकरण रूप से प्रभाव को चित्रित किया है –

हर एक कली ख़ुश है औ' नाच रही तितली,
लगता है कि गुजरे हैं वो आज बहारों से।

इसी ऋतु में प्रियतम और प्रियतमा की मुलाकात हुई है। ईश्वरप्रदत्त रोशनी से प्रभावित होते हैं। यहाँ पर ही नारी सौंदर्य की स्मृति हो आती है। ग़ज़ल में लोगों की भौतिक एवं स्वार्थवृत्ति के सामने प्रकृति की परोपकारिता के दर्शन किये हैं। लोग केक्टस के वृक्ष आँगन में लगाते हैं और दूसरे वृक्षों की कटाई करते हैं। जैसे –

कैक्टस घर में लगाना है नई तहजीब अब तो,
इसलिए वटवृक्ष आँगन का पुराना काटता हूँ।

प्रकृति के सौंदर्य एवं प्रेम के साथ कटाई की हक़ीक़त सामने आई है।

समसामयिक समस्याएँ :

रचनाकार जिस राष्ट्र में रहते और दौर से गुजर रहे हों उनकी समस्याओं से कैसे अछूते रह सकते हैं ?

धार्मिक समस्या :

धर्माचार्यों की धोखेबाजी का जिक्र ग़ज़ल में पाया जाता है। यह हक़ीक़त का बयान किया है कि धर्मसंस्थाओं का द्रव्य शासक के पास पहुँच जाता है। जैसे –

मस्जिद की चादर धन मंदिर का लूटकर
चरणों में अर्पण करते हैं गुलफाम के।

दूसरी ओर धार्मिक रूढिवादिता ने हिन्दू मुसलमान, ईसाई, सरदार जैसे विभाजनकर दिये हैं। धर्म के नाम पर लड़ाई हो रही है। धर्मांध कट्टरतावादी लोग धरती पर अपना ख़ून

बहाते हैं। हमारे ग़ज़लकार ने केवल कौमी–जातिगत झगड़े की समस्या ही नहीं उसका समाधान भी पेश किया है –

अगर नफ़रत मिटाना चाहते हो तुम दिलों से तो,
ये हिन्दू वो मुसलमां है मिटा दो ऐसे नारों को।
लगी है ईट ही सबमें शिवाला हो या मस्जिद हो,
रगों में दौड़ता है तो लहू में होगी चाहत फिर।

हमारे राष्ट्र में प्रशासन के स्तर पर स्वर्णयुग की अपेक्षा रखी गई है लेकिन यह सरकारी कागज पर ही निष्ट हो जाती है। इसके लिए जिम्मेदार नेताओं पर व्यंग्य किया है –

जिसे लटकाया जाना चाहिए फाँसी के फँदे से,
सुशोभित फूलमाला से वही हंजर नज़र आया।

इन्हीं राजनेताओं में पाई जानेवाली भ्रष्टाचार की प्रवृत्ति को भी उद्घाटित किया गया है। राजनेता और भ्रष्टाचार जैसे एक सिक्के के दो पहलू हो गये हैं। कवि के शब्द देखिए–

खा सके चारा, क़फ़न बेचे औ' घोटाले करे जो
मैं उसे अपने वतन का असली नेता मानता हूँ।

राष्ट्र के यक्ष–प्रश्नो पर भी नज़र केन्द्रित की गई है। आमवर्ग में अविश्वास, स्वार्थ, कृतघ्नता, नकलीपन और धोखेबाजी जैसी कमजोरियाँ पाई जाती हैं। लोगो में प्रतिशोध की भावना से प्रेरित एक–दूसरे की हत्या करने जैसी निर्मम प्रवृत्ति पाई जाती है जैसे –

सुनहरी इस धरा को लाल कर डाला है ख़ूँ से
मगर कहते हैं सीनातान हम निर्मम नहीं हैं।

पाश्चात्य संस्कृति के अंधानुकरण से भौतिकवाद जन्मा है। जिससे शाम की रौनक और सबेरे की ताजगी अदृश्य हो गई है। इस परिवर्तन से भारतीय गाँव नहीं बच पाया है। गाँव नये युग का शहर बन गया है। जहाँ ईर्ष्यारूपी विष हाथ, निगाह और दिल में ख़राबी है। नगर में बसनेवाले लोगों की हिंसात्मक प्रवृत्ति को उद्घाटित किया गया है –

कभी चलते हैं ख़ंजर, कभी उड़ते हैं पत्थर,
लहू नाली में बहता बड़ा सुंदर नगर हैं।

आगे कवि ने समझाया है कि शहरों में व्यवसाय की दौड़ा–दौड़ी, आपाधापी में लोग एक–दूसरे से मिल भी नहीं पाते हैं। अतः उनके मन में प्रश्न होता है कि शहर की इर्ष्या के विष को लेकर गाँव में कैसे जाया जाये ?

यह हक़ीक़त नज़रअंदाज नहीं हुई कि धार्मिक रूढि, ईर्ष्या ने प्रांत–भाषावाद की समस्या को जन्म दिया है। जिससे विभाजन की करूणता पैदा हुई है –

था एक किन्तु टूट के हज़्ज़ार हो गया।,
शीशे की तरह आज बिखरते हुए सवाल।

शिल्पकला : भाषा–शैली :

आलोच्य ग़ज़ल–संग्रह शीर्षक 'फल खाए शजर' हिन्दी–उर्दूप्रधान है। ग़ज़ल काव्यविद्या मूल उर्दू से उत्पन्न हुई होने के कारण अपने स्वभाव के साथ हिन्दी की प्रकृति को स्वीकार कर लिया है। अतः दोनों भाषाओं का प्रभाव देखा जा सकता है। जैसे – बग़ावत क़लम, ज़माना, एतबार, गुलफाम, नफ़रत, कज़ा, सितम, दुआ, शिकश्त, ख़फ़ा, फासला जैसे उर्दू शब्दों का प्रयोग किया है। खडीबोली–प्रयोग को भी महत्त्व दिया है – मंडी, दुनिया, नहला, नारा, आपाधापी, गाँव, शहर, नयन, गुलामी, ज़हर, नसीब, पत्थर, नाली, फाँसी, फंदा, मिसाल आदि। कहीं कहीं उर्दू–खड़ीबोली मिश्रित 'अल्लाराम' जैसे शब्द का प्रयोग किया है। पनारा, रण, हुनर, कीमत जैसे गुजराती–शब्द, तो न्यायालय, फूलमाला जैसे यौगिक शब्दों ने ग़ज़ल–संग्रह को चार–चाँद लगा दिये है।

कल्पना :

कवि–कल्पना बड़ी ही मार्मिक है। आरजू–इच्छा को उदासीनता की अग्नि में तपता हुआ दिखाया है। फिर भी कभी पिघल नहीं सकती है। जैसे –

आरजू सोने सी चमकेगी ग़मों की आँच से,
मोम जैसे ये कभी यारो पिघल सकती नहीं।[40]

लक्षणा–प्रयोग :

सनम आपका है ये कैसा शहर, गुलाबों के अंदर भरा है ज़हर।

प्रेमिका में ईर्ष्या का बोध होता है।

ध्वन्यात्मकता :

'थिरक थिरक लहर लहर रिमझिम बरसात है।'

गद्यात्मकता :

कवि की ग़ज़लो में कहीं कहीं गद्य पढ़ रहे हों ऐसा अहसास होता है। जैसे –

चैन से दो घडी जी सकूँ इस लिए,
जाम पी ले ग़मों के भुलाता रहा।

फूलों को तोड़ दिया नोची हर इक कली,
बनते हैं बन्दें फिर अल्ला के राम के।

मुहावरों का प्रयोग :

भाषा को जनसामान्य की बनाने के लिए मुहावरों का प्रयोग किया है – फन निखरना, कुत्तों को दूध से नहलाना, घास गधे चरना, थूंक चाटना, रोड़े बिछाना, राह में काँटे बिछाना, धुएँ के नाग काले, नहले पे दहला होना, ख़ून पीने का हुनर, बाल बाँका न कर सकना, रेत में नाव चलना, लाठी जिसकी भेंस उसीकी।

सुक्ति–वाक्य :

1. कुदरत की नज़रो में कोई खास नहीं और आम नहीं।
2. ज़िंदगी तो नाम है सबसे हसीं सौगात का।

3. जैसे तय है दिन का आना और जाना रात का।
4. गुलाबों के अंदर भरा है ज़हर,
5. गई शांति गांधी के गुजरात से।
6. वक्त तमाचा मारेगा तब निकलेगी सब अकड़ी
7. अपनी अपनी किस्मत है लीद मिले या फिर रबड़ी
8. हंस फिर सोने की थाली में ही मोती खायेगा।

शैली :

कवि की ग़ज़ल–लेखनशैली अत्यंत ही सरल है। हाँ इतना अवश्य है कि इसे समझने के लिए उर्दूभाषा के ज्ञान की आवश्यकता है। संवादशैली का बड़ा ही सहज प्रयोग किया है–

घनघोर घटा छाई पुरजोश में बारिश है,
पानी ये तेरे बिन तो लगता है कि आतिश है।

तो कही व्यंग्य के द्वारा दिल की नफ़रत को व्यक्त किया है –

न्यायालय बहरा अँधा है न्याय यहाँ अब तो सोता है।

पत्रात्मकशैली के अंतर्गत ख़ून से लिखा खत किसी को पहुँचाना चाहते हैं। परिगणनात्मक शैली से नाम की परिगणना करवाते हैं : चम्पा, चमेली, कचनार, गैंदा, रातरानी, गुलमुहर गेयता के लिए गीतशैली का प्रयोग हुआ है।

अलंकार :

ग़ज़ल रचनाओं में आकर्षण लाने के लिए एकाधिक अलंकारों का प्रयोग किया है–

अनुप्रास :

हुई कभी भी किसी रौशनी की हार नहीं।
पदक पुरस्कार पाऊँ कैसे।
हमसे ही मुहब्बत है हालात बताते हैं।
कहूँ किससे किसे हमराज मैं समझूँ
हँस हँसकर हम सहते हैं।

उपमा :

चाँद सा मुखड़ा, / फूलो सा चेहरा, /
खूश्बु से तरबदन / पायलिया सी खनकाती है।

उत्पेक्षा :

घूँघट पट हटते ही जगमग यूँ हो गई
मावस में लगता है पूनम की रात है।

रूपक :

दिल–पपीहा भी पियू के स्वर में कुछ गाता नहीं।

काव्यरूप :

कवि की छंदयोजना को समझने के लिए उनके काव्यरूप को समझना अनिवार्य है। ग़ज़ल की शिल्पगत या संरचनागत विशेषताओं में बहर (छंद) और वजन (मात्रा) के अलावा रदीफ़ (समांत) और क़ाफ़िया तुकांत का विशेष महत्त्व होता है। इन सबके संतुलन में ही ग़ज़ल को आकारगत पूर्णता प्राप्त होती है। ग़ज़ल के पहले शेर की दोनों पंक्तियो के अंत तथा बाद के प्रत्येक शेर की दूसरी पंक्ति के अंत में बार बार आनेवाले समान शब्दसमूह को रदीफ़ (समांत) कहते हैं। इसी प्रकार ग़ज़ल के पहले शेर की दोनो पंक्तियों बाद के प्रत्येक शेर की दूसरी पंक्ति में 'रदीफ़' से पहले आनेवाला शब्द 'क़ाफ़िया' तुकांत कहलाता है।

फारसी, उर्दू और हिन्दी के शब्द जब एक विशिष्ट छंदशास्त्र में बंधकर आते हैं तो उन्हें शेर की संज्ञा दी जाती है। किसी कवि की ओर से एक ही छंद के सांचे में प्रस्तुत किये गये क़ाफ़िया और रदीफ़ शेरों के विशिष्ट संगठन को ग़ज़ल कहते हैं। इन्ही विशेषताओं के दर्शन कवि विजय तिवारी की ग़ज़लो में कर सकते हैं। कवि ने इस संग्रह की भूमिका 'मन की बात' शीर्षक से स्पष्ट किया है कि – 'ग़ज़ल को भाषाई खेमे में बांधने की कोशिश नहीं की है। साथ ही साथ उन्होने स्पष्ट किया है कि गीत, कविता, दोहा, सवैया, कवित्त आदि में अपनी अनुभूति को प्रकट किया है।' इसी प्रसंग में ही ग़ज़लकार और श्रोतावर्ग में आगे हुए परिवर्तन को अच्छी तरह से महसुस किया है – 'साज हैं बिखरे हुए वो छोड़कर जब से गये अब नहीं है वो ग़ज़ल भी और वो श्रोता नहीं।' इसके अंतरिक्त अपनी ग़ज़ल रचना के लेखन के बारे में भी स्पष्टता की है –

फ़क़त ख्यालों में होती है बात उनसे विजय,
नसीब ऐसा कहा ? हो जो सामना उनका।

ग़ज़ल को अपनी साकी मानते हैं। जो लेखन रुपी शराब का नशा करवाती है। जैसे–

पिला ही दिया आज साकी ने इतना खराबात में कुछ बचा भी नहीं है।

लेखन के प्रति इस समर्पणभाव से आलोच्य ग़ज़ल संग्रह की 58 ग़ज़लों में रदीफ़ और क़ाफ़ियो से निर्मित शेर का लेखन हुआ है। रदीफ़ का एक उदा. देखिए –

रामनामी ओढ़कर वह शख़्स मुझको छल रहा,
स्वार्थ–साधन के लिए ही साथ मेरे चल रहा।

प्रांत भाषावाद में आतंक चारों ओर है,
हर दिशा में आग है यह देश मेरा जल रहा है।

उपर्युक्त उदाहरण में रदीफ़ से पहले आनेवाले तुकांत छल और जल क़ाफ़िया कहा जायेगा। इस प्रकार रदीफ़ और क़ाफ़िया से निर्मित शेर छंद के एकाधिक उदा. 58 ग़ज़ल–कविताओं में पाये जाते हैं। अन्य 10 ग़ज़ल की पहली दो पंक्ति के अंत में तुक मिलती है। वही हर ग़ज़ल की केवल दूसरी पंक्ति में पाई जाती है। जो कलात्मकता है। उदा. देखिए –

आप माने या न माने पर वो दिन भी आएगा,
मंच पर सम्मान से सच को नवाजा जाएगा
जो ख़ुशामद में लगा है एक दिन पछताएगा
कर्मयोगी ही अलौकिक सुख जहाँ में पाएगा।

कवि का यह ग़ज़ल-संग्रह शास्त्रीय नियमों के अनुसार है। जिससे गेयता और संगीतत्त्व का अनायास ही समावेश हो गया है।

उपसंहार :

हिन्दी–साहित्य में अमीर खुसरो से शुरु हुई ग़ज़ल परंपरा को आधुनिककाल में निराला एवं दुष्यंत कुमार ने प्रश्रय दिया है। पिछले तीन दशक में तो ग़ज़ल–लेखन में बाढ़ सी आ गई है। इसी परंपरा में विजय तिवारीजी का नाम हमारे सामने प्रस्तुत होता है। आपने बहु मुखी प्रतिभाशाली कवि के रुप में अपने ग़ज़ल–संग्रह 'फल खाए शजर' में वैविध्यपूर्ण विषयों पर ग़ज़लें लिखीं हैं। सामाजिक और धार्मिक रूढियों पर कबीर की तरह व्यंग्य किया है। उर्दूप्रधान खड़ीबोली को अपनाते हुए ग़ज़लविद्या के शास्त्रीयरूप को प्रस्तुत किया है।

हमारा मानना है कि आलोच्य ग़ज़लसंग्रह अपने विषयवैविध्य को लेकर विभिन्न जल–प्रपातों की तरह प्रणयधारा से प्रेम का प्रवाह सहृदय के दिल में प्रवाहित होता है । तो प्रपात का पत्थर पर किया गया प्रहार व्यंग्य के जरिये छेद भी कर देता है। लेकिन कवि का भाव और कला सौंदर्य जल प्रपात की भाँति साहित्य में सौंदर्य का निर्माण करने में अपनी महती भूमिका अदा कर सकता है।

निष्कर्षतः हम कहेंगे कि सामायिक ग़ज़ल परंपरा में श्रीमान विजय तिवारीजी और उनका यह ग़ज़लसंग्रह 'फल खाए शजर' अनन्य स्थान के अधिकारी है। कवि का भाव और कला–जगत विशाल और वैविद्यपूर्ण है। भावजगत के स्तर पर विषयवस्तु धाराप्रवाह न होकर मुक्तककाव्य की तरह भाववैविध्यपूर्ण है।

संदर्भ–ग्रंथ–सूचि :

1. उर्मिलेश का कथन।
2. गोपालदास निरज की परिभाषा।
3. फल खाए शजर – विजय तिवारी, ध्रुवप्रकाशन अहमदाबाद सन 1999, पृ. 96

- प्रो. किरीट गुणवंतराय जोशी
आसि. प्रोफेसर
श्री एस. एम. जाडेजा आर्ट्स–कोमर्स कोलेज, कुतियाणा, जि. पोरबंदर

❖

'फल खाए शजर' – विजय कुमार तिवारी के ग़ज़ल संग्रह का अवलोकन

–डॉ. सतीन देसाई 'परवेज'

'साफ़गो – ग़ज़लगोई'

हिन्दी ग़ज़ल की संहिता को जिन आधुनिक ग़ज़लकारों ने संयोजे रखने की तपस्या की है, उनमें गैर हिन्दी जुबान गुजरात के दरमियान रहकर ग़ज़ल का विजयी परचम लहराने वाले शायर है विजयकुमार तिवारी। हिन्दूस्तान ही नहीं दोनों आलम में ग़ज़लगरिमा को जदीद मोड़ देकर नई मंज़िलें सर कराई हैं। इस फनकार के सृजन कारनामे को विस्तृत बयान करने से पहले इनकी शख़्सियत का इज़हार ज़रूरी है। विजय तिवारी ब–नाम विजय जो एक नामवाचक और गुण में अंजामवाचक शब्द है। इन्होंने हिन्दूस्तानी ग़ज़ल को पूरी कायनात में पेश करने के जुनून में कई सालों की मेहनत और कोशिशों के बाद 'धरा से गगन तक' अंतरराष्ट्रीय हिन्दी काव्य संग्रह को मंज़रेआम पर रक्खा। जिनमें ग्यारह विभिन्न राष्ट्र के कवि को स्थान दिया गया है।

इस से ये बात जाहिर है कि विजय अपनी निजी पहचान बनाने की गर्दिश में कैद नहीं हैं। बल्कि जोके–फ़न को फ़रोग देने अन्य हिन्दी कवियों को भी प्रगट कर अपनी धड़कने जवां रखते हैं। उनके प्रथम ग़ज़ल संग्रह 'निर्झर' ने वो बहाव पैदा किया कि 1999 में दूसरा संग्रह 'फल खाए शजर' हमें फल देने लगा। जिसके फलस्वरूप इनको हिन्दी साहित्य अकादमी ने पुरुष्कृत किया। वहाँ तक की आज 2019 में उनका दूसरा संस्करण हिन्दी के विद्वान कवि डॉ. किशोर काबरा की मौजूदगी में बड़ी ही शानोशौकत से अहमदाबाद में प्रगट हुआ। यही विजय की अखंड लोकप्रियता की दावादारी है।

ख़ैर उनकी शख़्सियत को और लफ्फाजी न करते हुए, उनके कलाम की गहराईयों में गोता लगाकर, गौहर पिरोकर आपको पेश करना चाहते हैं।

विजय की 69 ग़ज़लों का सफ़र हमें धरा से आकाशी करता है। वे दम–ब–दम और कदम-कदम इस तरह ऊपर को उठते हैं कि जिन ऊँचाईयों पे वो हों, हमें साफ नज़र आते हैं। ये नहीं कि ग़ालिब, मीर, या इक़बाल की तरह तसव्वुफ़ में खोने के बाद नज़र न आएं। इनकी ग़ज़लें वैसे तो आज के युग की विकट वास्तविकता का बेनमून नमूनाई हैं। जो हरेक शेर में भाक्कुता से जुड़कर ही संवाद करती हैं। नमूना के तौर पर...

छूले जो ग़ज़ल मेरी तू अपने लबों से तो,
आकाश को छू लूँगा मैं तेरी सदा होके।

(पृ. 45)

विजय एक ऐसे ही नाज़ुक शेर से इन्सान से लेकर वो गैबवासी तत्व से रिश्ता जोड़ते हैं। 'छूले तू ग़ज़ल मेरी' कहके महबूब के होंठों की मीठी छूअन से रूहानी परवाज़ पाके

आसमानी सायुज्य रचते है। जहाँ छूअन का लम्स नाद में परिवर्तित हो के नादब्रह्म पैदा करता है। वो अपने अंतरतम समर्पण की ही भावनाओँ से, आलमी अनासिर में महव हो के अपनी मंज़िलें तय करते हैं।

विजय का नज़रिया ज़ियादातर आधुनिक जीवन शैली की कशाकश, बेवफ़ाई और धौखेबाजीओं पे व्यंग्यात्मक या बोधात्मक रहा है। जिनके बारे में इनके कई देश–विदेश के प्रस्तावनाकार ने बखूबी चर्चाएं की हैं। पर यहाँ मेरी खोज इनके कलाम में खास है। जो उनकी बेलोस पुख्ता खुद्दारियों के तत्वसंविधान मैंने पाए हैं उनकी झनकती सोच ही मेरी नक्श निगारी है। में उन्हीं को नुमाया करना चाहता हूँ।

ये धागा प्रेम का जुड़ जाए इस कोशिश में हूँ लेकिन,
यहाँ से जोड़ता हूँ तो वहाँ से टूट जाता है।
हँसी के बाँध से सैलाबे–ग़म तो रोकता तो हूँ,
मगर तनहाई में ये बाँध अक्सर टूट जाता है।

(पृ. 64)

हादसे कितने ही जाने रोज़ सहती है धरा,
आसमां के गड़गड़ाने से दहल सकती नहीं।

(पृ. 67)

विजयजी की कुव्वतों का बख़ूब अंदाजा इन अशआर से आ ही जाएगा। वे स्व से लेकर विश्वब्रह्म के अनुसंधान में पाने सेतूबद्ध जुड़ने में कामियाब तो होते हैं। पर बदनसीबी से मीराई ईश्क जो आज के जीवन की कबीराई होनी चाहिए उससे वो मायूस होते हैं। इसी वजह से वो प्रीत के धागों को पिरोते–पिरोते ही ख़ुद ही हजारहा टूट बिखर जाते हैं। इसलिए की आजका मानव सताहिया मरासिम निभाने की चाल में गहराई की बुनाई से निस्बत न कर पाता है।

आगे चलके वो अपनी तन्हाई को बजाए रोने–सिसकने के 'हंसी के बाँध' का रूप देता है। छायावादी प्रतीक सैलाबे–ग़म का निर्माण कर ग़ज़ल को नया रुख देता है। लेकिन अंजाम में फिर वही विफलता से अपने हाथ मल चुप हो जाता है। लेकिन इनके ये शेर अभी तक बोल रहे हैं।

इक ओर वो अनुभव संवादिता में लगे रहते हैं। तो दूजी ओर ग़ज़लगोई के लिए ज़रूरी ऐसे हैरतअंगेज़ अनासिर को भी आज़माया करते हैं। नमूना के तौर पे ये पांच शेरों का गुलदस्ता पेश है।

हर तरफ़ अचरज के ही बस सिलसिले हैं,
परबतों पर भी मुझे दल–दल मिले हैं।

(पृ. 95)

हर वक़्त देखिये तो उफनते हुए सवाल,
चारों तरफ़ हैं अब तो सुलगते हुए सवाल।

(पृ. 83)

था एक किन्तु टूट के हज़्ज़ार हो गया,
शीशे की तरह आज बिखरते हुए सवाल।

(पृ. 71)

हरिक शै की तह में नज़र जा रही है,
मेरी सोच आख़िर किधर जा रही है।
पतन की भयानक है खाई जहाँ पर,
डगर ये उसी मोड़ जा रही है।

(पृ. 71)

इन पांच शेर की पंचेन्द्रीयों से हमें पता चलता है कि ये शायर होनी–अनहोनी के दरमियान उलझते नहीं हैं। पर अपने ध्यानत्व और ज्ञानत्व के तप से अंजाम की तासीर पाकर हैरत अंगेज़ शेरियत के शिल्प बताते हैं।

ये कायनात रहस्यों से भरी पड़ी है। उसका चित्रण उन्होंने 'सवाल' रदीफ़ की ग़ज़लनिर्माण कर अछूता किया है। विजय की ख़ासियत ये है कि वो ख़ुद से सवाल कर उसका जवाब ख़ुद ही देते हैं। शब्दों के पेचीदा खेल खेलने में वो माहिर हैं। इनके कलाम पढते हुए इल्म की नदीयाँ बहने लगती हैं। वो हर किसी शै की गहराई में उतर अपनी खोज समाधियाँ लगाते हैं। सरसरी तौर पे दिल बहलाने को यूँ कह भी देते हैं "मेरी सोच आखिर किधर जा रही है।" रहस्यवादी शेर कहने के बाद भी वो चेतावनी देने से चूकते नहीं हैं। अपने कलाबोध को ऋषिकर्म समझ के उपदेश भी देते हैं। की आज का युग जहेनी और कारनामी तौर पर पतन की गहरी खाई में उतर रहा है। जैसे संस्कार की ख़ुदकुशी हो रही है।

उनके अध्यात्म अभिव्यक्ति पर ग़ौर फरमाने से पहले उनकी मानवीय चेतना की दो बातें ज़रूरी हैं।

उन्होंने जिगर मुरादाबादी की तरह जो भुगता है वही कहा है। जिसमें बनावट या दिखावा और औपचारिकता का कोई अंदेशा नज़र नहीं आता है।

तक़ल्लुफ़ से तसन्नो से बरी है शायरी अपनी।
हक़ीकत शेर में जो है वही है ज़िन्दगी अपनी।

(जिगर साहब)

विजय इसी वजह से अपनी सादगी की ख़ुद्दारियों से हर लम्हा विजयी रहे हैं। अपनी साफ़कोई की निशानाबाज़ी वो कभी चूके नहीं हैं।

आज के मक़्क़ार परस्त दौर, जो कि हक़ीक़त बयानी से दूर भागता है उसपे बड़ी शिद्दत से वार करते हुए वो ये फ़र्माते हैं।

हमारी साफ़गोई दोस्तो उनको न रास आई,
ख़री कह दी भरी महफ़िल में तो झंझला रहे हैं वो।

(पृ. 37)

ग़ज़ल में रम्ज़ यानी भेदी मानी को पिरोनेवाला ये शायर अध्यात्म दर्शन की लीलाओं में भी खो जाता है। रहस्यवाद ख़ुद ही अध्यात्म का प्रथम चरण है। जो पर्दे हटते ही

अध्यात्मरंगीनियाँ दिखाने लगता है। विजय में वही अनासिर लबालब भरे पडे हैं। आप ही से कठोर वास्तव से जूझनेवाला ये शायर सूफ़ियाना दरकार को भी अपना अहम पहलू मान कुछ बेनमून ऐसे शेर भी कहते हैं। जो यकबयक हमें चौंका देते हैं।

कठपुतली से नाच रहे, डोरी तो उसने पकड़ी।
झूला हो या हो अरथी, खूब सुलाती है लकड़ी।

(पृ. 88)

तब से चैन सुकून नहीं जब से तुझ संग आँख लड़ी।
बहुत दूर तक यूँ तो तनहाईयाँ हैं,
मगर पास तू है ये क्यों लग रहा है।

(पृ. 65)

हर क़दम हर पल वो मेरे साथ है,
फिर भी उसकी जुस्तजू होने लगी।

(पृ. 48)

इन अशआर में शायर की वो अध्यात्मदर्शना है जिसके मूल प्रमाण से लोग वाक़िफ़ हैं। लेकिन इनका अंदाज़े–बयां दिलचस्प है। इनका कहन छोटी बहर के झूले में हमें हर कड़ी और लडियों से जोड़ झुला रहा है। जब से आँख लड़ी है, रूह को चैन नहीं है। ये इश्क़ीया शेर इश्क़े हक़ीक़ी का हमें पैगाम दे रहा है।

आख़री शेर में गो वो ग़ायबाना तत्व अपनी हिस से हर तरह छके हमें गुदगुदाता है। फिर भी उसकी खोज हर लम्हा जारी है। ये मंज़र खड़ा कर शायर हमें अध्यात्म कडियों में बाँध देता है। ज़िन्दगी का मक़सद ही तो "मालूम से नामालूम का सफ़र है।" जब तक ज़िन्दगी है उसको होने का एहसास है। और मौत के बाद वो ही एहसास उसके दीदार को हू–ब–हू ला खड़ा करता है। ऐसे अध्यात्म परा अध्यात्म के ही बलबूते पर विजय अपनी खुद्दारीयों के साथ आत्मसन्मान की मिसालें ग़ज़लों में देने में कामियाब रहे हैं।

मुझे तो चाहिए यह आसमां पूरा का पूरा ही,
नहीं लिख पाऊँगा मैं नाम गर थोड़ी जगह होगी।

(पृ. 94)

ख़ुदा से भी लड़कर चला आऊँगा,
अगर तेरी आहों में होगा असर।

(पृ. 78)

ठान ले तो काल को भी तू हरा देगा 'विजय',
जान तेरी बिन तेरी इच्छा निकल सकती नहीं।

(पृ. 67)

क़लम छोड सकता नहीं वो कभी
'विजय' का तू करदे भले सर क़लम।

(पृ. 46)

ये शायर काग़ज़ की मिट्टी में अपने ग़ज़ल का पैकर नहीं तराशता है। उनकी सोच

का, तसव्वुर का, तसव्वुफ का, आलम बेहद है। इसलिए वो बाहक़ ख़ुदा से ये कह माँगता है कि "मुझे मेरी लिखावट के लिए सारा आसमान अता कीजिए।"

ख़ुदा से लड़कर वापस लौटने की शर्त में वो अपने मेहबूब की आहों का इन्तिहाई इश्क़िया असर चाहते हैं। यहाँ वो इक़बाल और ग़ालिब की 'आह' से बनिस्बत शेर से अलग पड़ते हैं।

आह को चाहिए इक उम्र असर होने तक,
कौन जीता है तेरी ज़ुल्फ़ के सर होने तक।

(गालीब)

आह जो दिल से निकलती है असर रखती है,
पर नहीं ताक़ते–परवाज़ मगर रखती है।

(इकबाल)

आप इन दो शेरों से विजय के आह विषयक शेर की बराबर कर ये एहसास कर पाएँगे कि वो फलकपार की छलांग एक ही लम्हे में कर पाते हैं। मुझे ये कहते हुए फक्र होता है कि 'फल खाए शजर' के उनबान का दीवान विजय ने चाहे रचा हो। उन्हें पूर्ण विश्वास है कि ख़ुद अपने ही अपनों को चाहे निगल जायें, अगर आप में रूहानी छूअन है तो यक़ीनन आप औरों में भी सकारात्मकता पैदा कर, आसमां पार उड़ सकते हैं।

हमें भी विजयभाई के लिए दुआएँ करने में झिझक न होगी कि...

बुलंदी पर तू पहुँचेगा मिलेगी आख़री मंज़िल,
झटक कर फेंक दे दोस्त पस्ती औ' हरारत फ़िर।

(पृ. 85)

विजयभाई ग़ज़ल के वो शजर हैं जिनके फल उनके जन्मदाता शजर को नहीं खाते या निगलजाते। पर उनका ये शजर विशाल कबीरवड हो के साबरमती के किनारे पावन ग़ज़ल की वडवाईयाँ में झूल रहा है।

आख़िरकार विजयकुमार की तारीफ में अंसार कंबरी ने सही कहा है।

है तुम्हारी ग़ज़ल न हमारी ग़ज़ल,
सबको लगने लगी आज प्यारी ग़ज़ल।
कहते होंगे कभी मीर ग़ालिब मगर,
आजकल कह रहे हैं तिवारी ग़ज़ल।

- डॉ. सतीन देसाई 'परवेज'
(वरिष्ट साहित्यकार)
A/3, अभिलाषा फ्लेट्स, पारिजात सोसायटी के पास, फतेहपुरा–पालडी,
अहमदाबाद–7 (M) 942890005

❖

बेहतरीन ग़ज़लों का ऐतिहासिक दस्तावेज है – 'फल खाए शजर'

डॉ. सुमन कमल मिश्र

किसी विषय वस्तु या पुस्तक की समीक्षा करने से पूर्व 'समीक्षा' शब्द का शाब्दिक अर्थ समझना अपेक्षित है। अतः समीक्षा दो शब्दों के संयोजन से बना है – सम अर्थात् अच्छी तरह से, ईक्षा अर्थात् देखना। इस प्रकार समीक्षा का शाब्दिक अर्थ हुआ किसी भी विषय–वस्तु के गुण–दोषों का अच्छी तरह से विवेचन–छानबीन, जाँच पड़ताल। इसे समालोचना, आलोचना, सूक्ष्म परीक्षण, जाँच, मीमांसा या अनुसंधान आदि विभिन्न नामों से भी जाना जाता है।

जिस पुस्तक की समीक्षा करने का एक लघु प्रयास मैं कर रही हूँ उसके रचनाकार हिन्दी साहित्याकाश में देदीप्यमान सप्तऋषि तारामण्डल की भाँति प्रकाशवान, ग़ज़लकार, पूर्व उच्च शिक्षक, जिन्हें अनेक प्रकार के पदक एवं पुरस्कारों से समय–समय पर नवाजा गया श्री विजय तिवारी की पुस्तक 'फल खाये शजर' है। इस पुस्तक की समीक्षा हेतु मैं स्वयं को बहुत ही क्षुद्र समझ रही हूँ। क्योकि जिस साहित्यकार ने विश्व स्तर की प्रथम हिन्दी पुस्तकालय निर्मिक की, इसी तरह के साहित्य से जुड़े अन्य अनेक सराहनीय कार्य किये उनके द्वारा लिखे पुस्तक की समीक्षा तो मैं क्या कर सकती हूँ फिर भी समीक्षा लिखने का जो यह अवसर प्राप्त हुआ है इसे मैं अपना सौभाग्य ही समझती हूँ।

सर्व प्रथम प्रस्तुत पुस्तक "फल खाये शजर" जब मैने हाथ में लिया तो "शजर" शब्द को देखते ही मनस्पटल पर अनेक प्रश्न एक साथ कौंध गये जैसे शजर का तात्पर्य क्या है ? पुस्तक के नामकरण में "शजर" शब्द प्रमुख क्यों हैं ? आदि–आदि। इस शब्द को ही केंन्द्र में रखकर मैं ने भिन्न-भिन्न पुस्तकों का अध्ययन किया तदन्तर "शजर" शब्द का शाब्दिक अर्थ पता चला "वृक्ष" तक्षण वह पंक्ति याद आई –

"वृक्ष कबहुँ न फल भखै, नदी न संचै नीर।
परमारथ के कारने साधुन धरा शरीर॥"

अर्थात् वृक्ष अपने फल को स्वयं नहीं खाता, नदियाँ जल को स्वयं के लिए संग्रह नहीं करती हैं और जो साधु लोग होते हैं वह समाज में दूसरों के कल्याण हेतु ही अपना सम्पूर्ण जीवन साधु रूप में समर्पित कर देते हैं।

कहने का तात्पर्य यह है कि प्रस्तुत पुस्तक "फल खाये शजर" इस बात का द्योतक है कि जो नहीं होना चाहिए वही हो रहा है। का प्रस्तुतीकरण इसमें रचनाकार ने किया है। "फल खाए शजर" नामक ग़ज़ल संग्रह का जब मैने सांगोपांग अध्ययन किया तो मुझे व्यक्तिगत रूप से इस बात का एहसास हुआ कि ग़ज़ल के शब्दों में वह सामर्थ्य है जो बड़ी ही सहजता एवं सरलता के साथ अपनी बात कह कर चोट पहुँचाना। चाहे वह मनोविश्लेषणात्मक रूप में हो या सामाजिक विश्लेषण का ही या फिर व्यक्तिगत विश्लेषण हो सभी जगहों पर करारी

चोट पहुँचाने के लिए सिद्धहस्त साबित हुए हैं। जिसके कुछ दृष्टान्त मेरे मन की गहराईयो में उतर गये हैं जिसका ज़िक्र करना यहाँ अपेक्षित लग रहा है।

एक बड़ी प्रचलित उक्ति है – जान है तो जहान है। अर्थात् इस खूबसूरत संसार का आनंद भी हम तभी ले पायेंगे जब जीवन स्वस्थ रहेगा और जीवन को स्वस्थ्य रखने के लिए आशावादी दृष्टिकोण अपनाना होता है। इसका एक बड़ा ही सटीक और सरल शेर है कि –

आप माने या न माने पर वो दिन भी आयेगा।
मंच पर सम्मान से सच को नवाजा जायेगा॥

यहाँ स्पष्ट होता है कि श्री विजय जी ने यह निश्चित रुप से अनुभव के साथ एहसास किया है कि जब कोई कार्य किया जाता है तब वह भले ही हमारे अपेक्षित समय सीमा में न मूल्यांकित किया जाय किन्तु उसका समय अवश्य आता है। यहाँ यह द्योतित होता है कि जब व्यक्ति एक आशावादी दृष्टिकोण को अपनाकर जीवन जीता अथवा जीवन यात्रा तय करता है तब उसकी जीजिविषा घनात्मक सोच के साथ व्यतीत होती है। प्रस्तुत ग़ज़ल-संग्रह "फल खाए शजर" को पढ़ने के बाद ऐसा एहसास होता है कि इसमें कोई भी पहलू ऐसा नहीं है जिसे एहसास करके शब्दबद्ध न किया गया हो। जब हम ग़ज़ल की परिभाषा देखते हैं तो स्पष्ट होता है कि ग़ज़लें अर्थपूर्ण छंदों में अर्थपूर्ण शब्दों के सूक्ष्म उपयोग के माध्यम से हमारे भीतर गहरी भावनाओं को जगाती हैं। अतः ग़ज़लों को जिस तरह गाया जाता है उसमें एक मधुर और लयबद्ध प्रवाह होता है, जो छंदों की संरचना और उसकी तरलता की प्रशंसा करता है। अतः संक्षेप में कहें तो ग़ज़ल एक सहृदय प्रेमी दिल की शब्द युक्त अभिव्यक्ति होती है जो कि श्री विजय जी की सम्पूर्ण ग़ज़लों में पूर्ण रुप से परिलक्षित होती है। इस परिप्रेक्ष्य में मैं इतना अवश्य कहना चाहूँगी कि यदि सच्चे अर्थो में ग़ज़ल रस का पान करने वाला कोई वक्ता या श्रोता है तो वह इस ग़ज़ल संग्रह "फल खाये शजर" के ग़ज़ल को पढ़ने या सुनने के बाद वह एक अलग ही समय और स्थान में पहुँच जाता है। ग़ज़ल से एक पृथक तात्पर्य यह भी है कि बात करने का एक मीठा और चुलबुला अंदाज, जो कि श्री विजय जी की प्रत्येक ग़ज़ल में दृष्टिगत होता है। ग़ज़ल एक ऐसी सशक्त विद्या है जो कविता और साहित्य के दायरे से निकलकर संगीत की एक मनमोहक दुनिया को अपनाता है। ग़ज़ल को सूफी संगीत का एक हिस्सा भी माना जाता है। यहाँ पर "फल खाए शजर" नामक ग़ज़ल संग्रह का उद्देश्य श्रोताओं या पाठकों को हर शब्द में भावनाओं की गहराई में डूबोना है। जिसमें रचनाकार श्री विजय जी पूरी तरह सफल हुए हैं। इसके कुछ मर्म स्पर्शी दृष्टांत इस प्रकार हैं –

ख़ुशी के नाम पर इतने फ़रेब खाए हैं,
कि अब ख़ुशी का मुझे कोई इंतजार नहीं।

ये कहने के पश्चात् श्री विजय जी अपने एक हरफ़न मौला अंदाज़ का बयान करते हुए कहते हैं कि –

हर ख़ुशी दोस्तों में लुटाता रहा,
मैं गमों को धुँए में उड़ाता रहा॥

इनकी ग़ज़लों में यथार्थ की ठोस एवं सटीक पुट देखने को मिलता है यथा–मतलब की दुनिया है रिस्ते हैं नाम के, मिलता है सब कुछ ही बदले में दाम के॥

ऐसे भी लोग यहाँ देखे हैं बाग़ मे खाते हैं केला, गुण गाते हैं आम के॥

इस प्रकार उपर्युक्त ग़ज़ल के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि श्री आदरणीय तिवारी जी ने प्रत्येक पहलुओं पर कितनी पैनी निगाह डाली है जिसके फलस्वरुप उन एहसासों को इस प्रकार के अनुभूति युक्त शब्द दिये हैं।

सर्वे भवन्तु सुखिनः की सोच को साकार करते हुए भी विजय जी की यह ग़ज़ल मेरे अंतस्तल में उतर जाती है –

दूसरों की ख़ुशी से न जल जाइए ।
उनकी ख़ुशियो में खुद आप ढल जाइए॥

ग़ज़ल के सन्दर्भ में कहा जाता है कि ग़ज़ल में हर शब्द का सही उच्चारण प्रस्तुति का एक महत्त्वपूर्ण पहलू है। हर शब्द का उच्चारण जिस तरह से किया जाता है उससे कविता इच्छित भावनाओं, अर्थो, बारीकियों को श्रोताओ तक पहुँचाने में मदद मिलती है। यही कारण है कि पाठक या श्रोता ग़ज़ल के भावों से जुड़ पाते हैं। अतः "फल खाये शजर" की प्रत्येक ग़ज़ल इन समस्त मानदण्डों पर पूर्ण रुप से खरी उतरती हैं और पाठक या श्रोता के अन्तःकरण में स्वतः उतरकर घर कर लेते हैं, यथा

विधाता के नियम को पलट दे एक पल में,
सुना है दिल से निकली दुआओं में असर है।

इसी प्रकार एक गहन एहसास का जीवन्त उदाहरण इस तरह है –

हो सके तो कभी याद करना हमें ज़िंदगी के सफ़र में मिले थे कभी
ख़ुशनुमा वादियों में टहलते हुए, हाथ में हाथ लेकर हँसे थे कभी॥

बातों बातों में यदि किसी की सुन्दरता का बयान करना है तो एक सटीक ग़ज़ल की रचना की है विजय जी ने, यथा –

फूलों सा चेहरा औ' ख़ुश्बू से तर बदन,
कुदरत की तुझको ये अनुपम सौगात है॥

शब्दों के संयोजन का एक सुन्दर उदाहरण ये भी है –

हादसा बीत गया याद दुबारा न करो।
याद आ जाये तो तुम अश्क बहाया न करो॥

इस प्रकार उपर्युक्त समस्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि "फल खाये शजर" की जितनी भी ग़ज़ल हैं सबमें ग़ज़ल के जितने भी प्रकार हैं सब किसी न किसी ग़ज़ल में अवश्य समाहित है। यदि तुकान्त के दृष्टि से देखे तो वह भी है यथा –

बताएँ क्या ग़रीबी में यूँ गीला हो गया आटा,
किये हैं गाल अपने लाल खुद ही मारकर चाँटा।

भाव के आधार पर भी ग़ज़लें बहुत ही हृदयस्पर्शी होती हैं जो यहाँ पर दृष्टिगत है–

बड़े अपनत्व से हँसकर गले जिसको लगाया था,
उसी ने साँप बनकर आज मेरे मर्म पर काटा॥

स्वानुभूति में शब्दों का चयन –

विधाता के नियम को पलट दे एक पल में
सुना है दिल से निकली दुआओं में असर है।

ग़ज़लें जिसमें प्रत्येक शेर का भाव स्वतन्त्र होता है। अतः इस समस्त ग़ज़ल संग्रह का अवलोकन करने के पश्चात् हम यही कह सकते हैं कि यदि इसे मानव मन के लिए प्रेरणास्रोत, नायिका के मन के लिए चाँदनी रात की अनुभूति, युवा मन के लिए गीत कहा जाय तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। यथा —

छँट जायेगी घटाएँ, औ' चमकेगा सूर्य भी,
जिस दिन दिखाई देंगे सुलझते हुए सवाल॥

इसी ग़ज़ल के साथ मैं अपनी लेखनी को विराम देने की अनुमति चाहूँगी क्योंकि असीमित को सीमित करना मुझ जैसे के लिए मुश्किल है –

दिलों में दर्द होगा तो जवाँ होगी मुहब्बत फिर,
अगर बुनियाद बाकी है खड़ी होगी इमारत फिर॥

अंत में मैं इतना ही कहना चाहूँगी कि इस पुस्तक ग़ज़ल संग्रह "फल खाये शजर" के अध्ययन से जो गहन अनुभूति का एहसास हुआ है वह समीक्षा नहीं बल्कि एक अनोखे एहसास को शब्द देना है।

डॉ. सुमन कमल मिश्र
व्याख्याता
सेवन्थ–डे एडवेन्टिस्ट आर्ट्स एण्ड साइंस कालेज,
मणीनगर, अहमदाबाद

❖

अवलोकनार्थ संग्रह "आक़ा बदल रहे हैं"

– डॉ. सुनील कुमार

विजय तिवारी का तीसरा ग़ज़ल संग्रह "आक़ा बदल रहे हैं" गुजरात साहित्य अकादमी के सहयोग से प्रकाशित होकर सुधी पाठकों के हाथ में है। संग्रह की 89 ग़ज़लों में अभिव्यक्ति और विषय वस्तु का कलेवर बहुमुखी और व्यापक सामाजिक सरोकार के साथ उपस्थित है। लेखक ने जीवन और समाज से जुड़े विभिन्न पक्षों और अनुभूतियों को अपनी ग़ज़लों में सहज भाव से उकेरा है। सामाजिक सरोकार से जुड़े विभिन्न पक्षों पर उनका चिंतन दर्शाता है कि समाज के साथ उनका लगाव और जुड़ाव बहुत गहरा है। पाठकों द्वारा इन्हीं जीवंत अनुभूतियों के सौंदर्य को उनकी ग़ज़लों में अनुभूत किया जा सकता है।

यूँ तो हिंदी में ग़ज़ल लेखन की एक लंबी परंपरा है, लेकिन जो लोकप्रियता दुष्यंत की ग़ज़लों को मिली वह अपूर्व रही है। इसका प्रमुख कारण है, ग़ज़ल का इश्क-ओ-मुश्क से उठकर सामाजिक सरोकार के साथ जुड़ना और समाज के समस्त संदर्भों में उसकी व्याप्ति। हिंदी ग़ज़ल में हम इसे एक बड़े घटनाक्रम के रूप में देख सकते हैं। जब ग़ज़ल ग़रीब से, भूख से, मजदूर से, छल-कपट, धर्म, धंधे और राजनीति के संदर्भों से जुड़ती है। इसका परिणाम यह हुआ कि समाज का बहुत बड़ा वर्ग सीधे रूप से ग़ज़ल के साथ जुड़ता गया। इसके बाद का इतिहास स्वयं गवाह है कि इस दिशा में किस तरह रचनात्मकता के नित नए क्षितिज निर्मित हुए। निरंतर व्यापक होती लोकप्रियता के चलते बड़ी संख्या में रचनाकारों ने ग़ज़ल को अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया। शायद ही ऐसा कोई कवि हो जो ग़ज़ल लेखन से न जुड़ा हो। ग़ज़ल की लोकप्रियता को आज भाषिक संदर्भों की सीमा में बांधकर नहीं देखा जा सकता। अब ग़ज़ल जितनी उर्दू की है, उतनी ही हिंदी की भी है। बल्कि हिंदी ग़ज़ल का दायरा कहीं ज्यादा व्यापक हो चुका है। जब हम साहित्यिक सांस्कृतिक कार्यक्रमों, कवि सम्मेलनों की ओर देखते हैं तो सहज ही बोध हो जाता है कि, इन कार्यक्रमों में ग़ज़ल की भाषाई सीमा कोई मायने नहीं रखती। केवल लिपि भर का भेद है। ग़ज़ल को अरबी-फारसी लिपि में लिखें तो उर्दू की और देवनागरी में लिखें तो हिंदी की। जहाँ तक सम्प्रेषणीयता और श्रोता व पाठक वर्ग का प्रश्न है तो जितनी व्यापकता और लोकरंजना हिंदी में संभव है उतनी उर्दू में संभव नहीं। कारण है राष्ट्रीय अंतरराष्ट्रीय फलक पर जितना बड़ा दर्शक, पाठक, और श्रोता वर्ग हिंदी में है उतना उर्दू में नहीं है। इसीलिए अधिक से अधिक दर्शक, पाठक और श्रोता तक पहुँचने के विचार से उर्दू ग़ज़लकार भी अपनी ग़ज़लों का प्रकाशन हिंदी में करवाने लगे हैं।

आज लगभग कोई भी बड़ा कवि सम्मेलन हो या मुशायरा, उसमें ग़ज़ल पढ़ने वाले और सुनने वालों की बड़ी संख्या रहती है। इस पृष्ठभूमि पर विजय तिवारी का सद्य प्रकाशित ग़ज़ल संग्रह "आक़ा बदल रहे हैं" सामयिक सार्थकता के साथ पाठकों के सामने आया है। संग्रह में सामाजिक, वैयक्तिक, संदर्भों को, राग अनुराग को, प्रेमाभिव्यक्ति को बड़े सहज और

स्वाभाविक रूप में रखने का प्रयास हुआ है। ग़ज़ल संग्रह का शीर्षक उनकी ही ग़ज़ल के शेर से उधृत है जो अपनी सार्थकता स्वयं सिद्ध करता है

आज़ाद हो गए हैं इस भ्रम में पल रहे हैं,
हम तो गुलाम ही हैं आक़ा बदल रहे हैं।

ग़ज़ल के शेर में हम देख सकते हैं कि देश काल और परिस्थिति को लेकर बहुत ही संवेदनशील बात को लेखक ने प्रभावी ढंग से उठाया है। स्वाधीनता के बाद देश में जिस प्रकार का राजनैतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और औद्योगिक परिदृश्य होना चाहिए था वह देखने को नहीं मिला। आज भी जनता ग़रीबी, बेरोजगारी, भुखमरी से पीड़ित और बदहाल है। आम जनता के सामने सुनहरे सपने तो परोसे जाते रहे, मगर कुछ भी उसके हिस्से में नहीं आ पाया। लोकतंत्र के नाम पर चुनाव, फिर सरकार का गठन, उसके बाद बड़ी बड़ी पंचवर्षीय योजनाएँ और भारी भरकम अमले के साथ कार्यक्रम क्रियांवयन की कवायद चली जरूर, लेकिन इसके बाद भी हासिल क्या रहा, वही ढाक के तीन पात, जनता की दशा वही की वही। ये सब कुछ बहुत व्यवस्थित और नियोजित रूप से तमाम ताम झाम, शोर-शराबे के साथ चलाया तो गया पर जमीनी धरातल पर उतरा हुआ दिखाई कभी नहीं दिया। जिसके नाम पर सारी योजना-परियोजनाएँ चलाई जाती रहीं उनका भी कुछ भला हो जाता तो कोई बात बनती। जबकि इस दौर में सरकारी तंत्र के आला अफसर, सांसद, विधायक, पार्षद, से लेकर सरकार के नुमाईंदे, सत्ताधारी पार्टी के सदस्य, मंत्री सहित सभी राजनैतिक दल-बल वालों की पाँचों घी में दिखीं, और सर कढ़ाई में मिला। रही जनता जनार्दन की तो उसके हितों का नाम लेवा पानी देवा कोई था ही नहीं। हाँ उनके नाम पर राजनैतिक रोटियाँ सेकने वाले जरूर फड़फड़ाते रहे। इसमें कोई संदेह नहीं कि आम जनता का जितना बुरा हाल पराधीन काल में था कमोवेश स्वाधीन भारत की संवैधानिक सरकारों के समय में भी वैसा ही है। मतलब ये कि लोग परतंत्र भारत में भी दुर्दशा के शिकार थे और स्वतंत्र भारत में भी उनकी वही स्थिति बनी रही। अंतर केवल विदेशी सत्ता की जगह स्वदेशी सत्ता के आरूढ़ हो जाने भर का रहा। जनता का शोषण तो बदस्तूर तब भी जारी था अब भी जारी है। तिवारीजी की पीड़ा यही है कि केवल सत्ता के केंद्र बदलते रहे लेकिन जनता का हाल नहीं बदला। उनके रचना कर्म में यही सामाजिक सरोकार उद्दात रूप में आता हैं। इसी का निरूपण देखिये :–

अब मिलेगी ज़िंदगी सदियों से सुनते हैं मगर,
हम मिटायेंगे ग़रीबी बस यही नारा मिला।

स्वाधीनता के पश्चात एक आशा जनता को थी कि अब एक व्यवस्था बनेगी, नागरिकों को उनके मौलिक अधिकार और मूलभूत सुविधाएँ प्राप्त हो सकेंगी, संवैधानिक अधिकार मिलेंगे, काम मिलेगा, घर गृहस्थी सामाजिक तथा आर्थिक व्यवस्था भी ठीक से पटरी पर आएगी। लेकिन जनता के पल्ले कुछ नहीं पड़ा, सब के सब खाली हाथ मलते हुए रह गए। जनमानस अपनी छोटी-छोटी आवश्यकताओं को पूरा करने में हल्कान होता रहा और उसके हिस्से में निराशा जस की तस पसरी रही। ग़रीबों को आजीविका के साधन उस रूप में

उपलब्ध नहीं हो सके जिससे कि वह घर गृहस्थी, संतान आदि के लालन-पालन, और शिक्षा-दीक्षा का जुगाड़ किसी ढंग से कर सके। सरकारें आती जाती रहीं हर 5 वर्ष के बाद चुनाव होते रहे, ग़रीबी दूर करने के राजनैतिक खोखले नारों से जनता को भरमाने का प्रहसन चलता रहा। विडम्बना देखिए कि हालात आज भी ज्यों के त्यों बरकरार हैं। जनता के लिए अभी भी भुखमरी और जीवन को जीने की विकराल समस्याएँ यथावत बनी हुई हैं। कहने का अभिप्राय राजनीति ने जनता को सिवाय नारों के कुछ नहीं दिया। इन छलावी नारों का झुनझुना बेचारी जनता आज तक बजा रही है। नागरिकों का सामाजिक उत्थान सुनिश्चित हो पाएगा ऐसा कभी दिखा ही नहीं। तिवारीजी का क्षोभ इसी पर है :–

इक नया सूरज मिला है इस जहाँ को अब,
देखिए ऊर्जा मिलेगी या जलेगा सब।

हर बार नई सरकार के गठन पर बेचारे नागरिक उम्मीद की किरण ढूँढ़ते रहते हैं। साथ ही मानने लगते हैं कि इस बार का शासन उसके लिए कुछ सार्थक करने का प्रयास अवश्य करेगा। सम्भव है कि व्यवस्था में शायद कुछ आमूलचूल परिवर्तन दिखने लगे। लेकिन बीते अनुभवों और परिस्थितियों के संदर्भ में यह आशंका भी स्वाभाविक रूप से उभरती है कि सत्ता के नए सूर्य से कुछ सृजनात्मक ऊर्जा मिलेगी अथवा दाहक आग जलाएगी। अभिप्राय स्पष्ट है कि इस बार की सत्ता जनता के लिए कुछ करेगी या जनता को मरता खपता छोड़कर अपने स्वार्थ साधती रहेगी, जैसा कि अब तक देखा गया है। इन्हीं उबलते प्रश्नों के साथ तिवारीजी के रचना कर्म में सामाजिक सरोकार मुखर होकर उभरते हैं। कटु अनुभव बताते हैं कि राजनैतिक संदर्भों सहित समाज भी असहिष्णुता के मार्ग पर है। संवेदनाएँ भी विकृती की राह पर अग्रसर, लम्पटता चारों ओर पसरी पडी है। दूसरों के प्रति संवेदनहीनता अब स्तब्ध कर जाती है :–

तुम गोली छाती पर दागो और करो मुझसे उम्मीदें,
बात अहिंसा की दुहराऊँ कब तक आख़िर आख़िर कब तक।

आदर्श और मूल्यों को लेकर चिंताजनक स्थिति बन चुकी है। अहिंसावाद को लेकर उनकी चिंता स्पष्ट है, कि यह एक पक्षीय कैसे सम्भव है? ऐसे में सामाजिक और राजनैतिक मुद्दों सहित तिवारीजी की क़लम विकृतियों पर तीक्ष्ण कटाक्ष करती है। सही गलत पर उनका बोध यही दर्शाता है :–

मानना ना मानना उसकी समझदारी पे है,
है ग़लत उसकी नज़र अब कह दिया तो कह दिया।

उचित - अनुचित को लेकर उनका दृष्टिकोण स्पष्ट है, जो जैसा है, उसे वैसा कहने, समझने में झिझक कैसी? सही को सही के रूप में लेना ही उचित धर्म हैं। फिर कोई उसको माने या न माने यह सब समझने वाले के ऊपर निर्भर है। एक प्रबुद्ध नागरिक के लिए सकारात्मक विचार और कर्तव्य का बोध अपरिहार्यतः होना ही चाहिए यही उनकी अवधारणा है। दायित्व से विमुख होते समाज और परिजनों, बुजुर्गों के प्रति संवेदनहीनता को लेकर भी

तिवारीजी की चिंता सम्यक हैं :–

मरने पे जिसके कर रहे हैं स्वर्ग की दुआ,
जीते जी उसको चैन से रहने नहीं दिया।

समाज में इस प्रकार की संवेदन हीनता सोचने समझने को विवश करती है। संवेदनशील सामाजिक पक्षों पर तिवारीजी की दृष्टि दूरगामी है। उनके द्वारा उठाए गए मुद्दों का अपना अर्थ है। इसी परिप्रेक्ष्य में कर्मण्यता को लेकर उनकी दृष्टि को समझा जा सकता है :–

वह नहीं पाएगा मंजिल जो सहारे ढूँढ़ता है,
गर्जना लहरों की सुनकर जो किनारे ढूँढ़ता है।

अभिप्राय साफ है, निठल्ला चिंतन किसी काम का नहीं। आत्म विश्वास, उद्यमशीलता, साहस, दृढ़ता और निर्भीकता लक्ष्य प्राप्ति के लिए आवश्यक है। दूसरों के सहारों से कार्य सिद्धि संभव नहीं। जिसको अपने पर विश्वास नहीं वह सफल नहीं हुआ करता। इसी तरह भौतिकवाद में डूबे हुए लोकाचरण और छल-कपट वाली मानसिकता भी उनको कचौटती है। झूठ, फरेब, स्वार्थ सिद्धि, मिथ्याचार, चाटुकारिता ये सब आश्चर्यजनक रूप से समाज में इस कदर व्याप्त है कि कुछ कहा नहीं जा सकता। अब किसी पर किसी भी दशा में विश्वास करना कठिन तो है ही, कौन क्या चाहता है, ये समझना भी बहुत मुश्किल हो गया :–

उसके हंसी अंदाज से वाक़िफ़ नहीं हो तुम,
ले लेगा तेरी जान भी वह सादगी के साथ।

सत्य, अहिंसा, सहजता, सरलता और सादगी आज के उपभोगवादी युग में अपने अर्थ खो चुकी हैं। सच्चाई, विश्वसनीयता, प्रतिबद्धता सब कुछ 'आउट आफ डेट' (Out of Date) समझिए। आपसी व्यवहार अब 'बी प्रैक्टिकल' (Be Practial) हो गए। सब कुछ पूरी तरह 'बैनिफीसियर' (beneficiar) चस्मे की ज़द में है। इस मुआमले में परिपक्व स्याणपत वाला ये मॉडल है तो काबिले गौर है। इसीलिए तिवारीजी लिखते है :–

सादा जीवन प्यार बाँटना,
मेरे लिए अभिशाप हो गया।

इस दौर में जिसने भी सादगीपूर्ण गुस्ताखी की, सीधा धोबी पाट उसके हिस्से में पक्का समझिए। देखने-सुनने वालों का ऐसी उपलब्धि पर दाँत निपोरना अलग से सौगात में। इन्हीं सब वस्तु स्थितियों का विजय तिवारी की ग़ज़लों में बड़े सलीके से निरुपण हुआ है। साथ ही उन्होंने सहज स्वाभाविक रूप से मानवीय भावनाओं, संवेगो तथा राग-अनुराग को अपनी अभिव्यक्ति में पिरोया है। रूहानी अहसास, अतींद्रिय अनुभूति, प्रेमाभिव्यंजना, स्नेहासिक्त मनोभावों को भी सुंदर वाणी दी है :–

उनको गए हुए तो ज़माने गुजर गए,
लेकिन महक वही है अभी तक फिजाओं में,

सामाजिक बोध, आदर्श, स्वाधीनता, पराधीनता, आत्मबल, साहस, निर्भीकता, दृढ़ता,

उत्तरदायित्व, कर्तव्यबोध, धैर्य, हिंसा-अहिंसा, उत्थान, पतन, स्वार्थ, छल-कपट, मानवीय मनोवृति, वैचारिक रुग्णता, भूख, ग़रीबी, संघर्ष, चाटुकारिता, अवसरवादिता, जैसे अनेक सामाजिक मुद्दे तो उनकी ग़ज़लों का विषय हैं ही, इसके साथ-साथ नैसर्गिक मानवीय संवेगों का अनुभूतिजगत भी है। राग–विराग, रूप-रंग, सौंदर्य अनुभूति, प्रेम, प्रणय, आसक्ति, विरक्ति, ऐंद्रीय, अतेंद्रीय, दैहिक, आत्मिक, भावबोध भी ग़ज़लों में अपने औदात्य के साथ अभिव्यक्त हुआ है। प्रासंगिक और समसामयिक ग़ज़ल संग्रह का पाठक भरपूर रसास्वादन लेंगे, इसी आशा के साथ विजय तिवारी को आत्मीय साधुवाद।

- डॉ. सुनील कुमार
(क्षेत्रीय निदेशक)
केंद्रीय हिंदी संस्थान, आहमदाबाद केंद्र
(गुजरात विद्यापीठ, आश्रम रोड)
अहमदाबाद, गुजरात

❖

मानव पीड़ा का अद्भुत दस्तावेज है "आक़ा बदल रहे हैं"।

– डॉ. राजीव कुमार पाण्डेय

अहमदाबाद गुजरात से हिन्दी ऊर्दू ग़ज़ल के बड़े शायर श्री विजय तिवारी के 'आक़ा बदल रहे हैं' ग़ज़ल संग्रह का द्वितीय संस्करण प्रकाशन की दृष्टि से बहुत आकर्षक बन पड़ा है। 121 पृष्ठ के इस संग्रह को आद्योपांत अवलोकन करने के उपरान्त ऐसा लगा कि कुछ शब्द अवश्य लिखने चाहिए। श्री विजय तिवारी जी की ग़ज़लों का मूल कथ्य मानवतावादी है।

वर्तमान व्यवस्था पर कटाक्ष किया है, भारतीय संस्कृति के क्षरण पर अफ़सोस जाहिर किया है। गिरते मानव मूल्यों पर चिंतित प्रतीत हुए, अंतिम व्यक्ति के पैरोकार बनकर सामने आये हैं। पीड़ा का दंश लिखा है, वेदना को स्वर मिला है। विसंगतियों पर प्रहार करने से भी नहीं चूके हैं। सामाजिक विद्रूपताओं को रेखांकित किया है। विडम्बना पर प्रहार करने से गुरेज़ नहीं किया है। लेखक के धर्म को बखूबी निभाया है। ग़ज़ल में इश्क हक़ीक़ी से निकलकर दुष्यंत कुमार की परिपाटी को आगे बढ़ाने में समर्थ हुए हैं। हिंदुस्तान की तहज़ीब को जिंदा रखने के लिए मुकम्मल प्रयास किया है। शब्दों के बाजीगर के रूप में श्री तिवारी जी नए रूप में अवतरित हुए हैं। ग़ज़ल के पैरामीटर में बंधे हुए स्वर हैं। वास्तव में युगीन लेखन कर श्लाघनीय कार्य किया है। इस ग़ज़ल संग्रह की अंतर्यात्रा में जो मैंने पाया उसे आप सभी के समक्ष रखने का लघु प्रयास किया है।

शायर विजय तिवारी ने अपने ग़ज़ल संग्रह का प्रारम्भ माँ शारदा की वन्दना से किया है उनके द्वारा लिखी गयी पंक्तियाँ वसुधैव कुटुम्बकम के लिये हैं :–

हे माँ मुझे वरदान दे।
जग में अपरिमित ज्ञान दे।
दुःख दर्द सबके हर सकूँ,
ऐसा अमर इक गान दे।

ग़ज़ल में इश्क़ की बात न हो तो ग़ज़ल का महत्व ही क्या लेकिन ग़ज़लकार ने अपनी ग़ज़लों में इस विषय को कम छुआ है। पृष्ठ 23 की ग़ज़ल के कुछ शेर दृष्टव्य हैं :–

मैं चेहरे को उनके कमल लिख रहा हूँ,
वदन को मैं स्वर्णिम महल लिख रहा हूँ।
दिलों का मिलन था औ' बारिश का मौसम,
वो भीगा हुआ एक पल लिख रहा हूँ।

पृष्ठ 31 पर भी देख लीजिए :–

वो कनखियों से देखके जुल्फों को झटकना,
उनकी हरिक अदा है जवाँ आज बेहिसाब।
कुछ बात है जरूर हैं तीखे नज़र के तीर,
भौहें बनी हुई हैं कमाँ आज बेहिसाब।

भारत की युवा पीढ़ी का आह्वान करते हुए शायर के स्वर पृष्ठ 16 पर अंकित कुछ इस प्रकार हो जाते हैं :–

बागड़ोर अब देश की तू थाम ले ऐ नौजवां,
बूढ़ी उँगली को पकड़कर, तू चलेगा कब तलक।
मार पंजा शेर सा भाषा यही समझेगा वो,
भैंस के आगे यूँ ही गीता पढ़ेगा कब तलक।

भैंस के आगे बीन बजाना, जैसे मुहाबरे को नया प्रतिमान दिया है।

अपनी प्राचीन कहावतों को भी नए अंदाज़ में कहने में सिद्धहस्त है श्री विजय तिवारी जी, जो सभ्यता के गिरते स्तर पर चिंता व्यक्त करते हैं। पृष्ठ 82 की ग़ज़ल के अशआरः–

बदनज़र थी इसलिए आँखों में जाले हो गये,
झूठ वो बोला तभी तो मुँह में छाले हो गये।
पश्चिमी तहजीब से इतनी तरक्की हो गई,
तन पे कपड़े कम हुए औ' मन के काले हो गये।

रामराज्य का सपना दिखाने वालों पर कटाक्ष किया है पृष्ठ 29 पर :–

लायेंगे रामराज्य यहाँ फिर से भेड़िए,
भेड़ें मगन हैं सुनके समाचार इन दिनों।

वर्तमान व्यवस्था में दोहरी मानसिकता के लोग हैं। दिखावे की ज़िंदगी जी रहे हैं। अपने मानबिंदु को भूल गए हैं। पृष्ठ 37 के कुछ शेर देख लीजिए :–

चारों तरफ़ हैं कैक्टस, काँटे, बबूल ही,
उस बाग़बाँ ने फूल इक खिलने नहीं दिया।
वो नीम था कड़वा मगर था काम का बहुत,
गमलों के इस युग ने उसे बढ़ने नहीं दिया।

जब व्यक्ति के जीवन में लगातार दिक्कतें आयीं हों तो वह उसका आदी हो जाता है किसी घटना विशेष का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। एक शेर 17 वें पेज से हाजिर है :–

अभी तक हादसों में ही जिया हूँ इसीलिए ही तो,
किसी घटना से मेरे दिल को अब धक्का नहीं लगता।

कवि शायर का हमेशा प्रयास रहता है कि अपने वतन में इंसानियत जिंदा रहनी चाहिए। पृष्ठ 99 से एक मतला एक शेर उठाकर लायें हैं देख लीजिए :–

किसी के ज़ख्म पर तू भी कभी मरहम लगाके देख,
ज़माने को रुलाया है बहुत अब गुदगुदा के देख।
निराशा के भंवर में डूबते उतराते चेहरों को,
नया जीवन मिलेगा आस का संबल बंढा के देख।

पृष्ठ 47 की उस ग़ज़ल के कुछ अशआर प्रस्तुत हैं जिसके नाम पर पुस्तक का नामकरण हुआ है :–

आज़ाद हो गये हैं इस भ्रम में पल रहे हैं।
हम तो गुलाम ही हैं आक़ा बदल रहे हैं।
अलगाव के विषैले पौधे लगा गये वो,
है परवरिश हमारी वो ख़ूब फल रहे हैं।

वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था से संतुष्ट नहीं हैं शायर तभी उनको ऐसी ग़ज़ल लिखने को बाध्य होना पड़ा। पृष्ठ 13 पर सामाजिक ताने बाने का सच लिख रहे हैं श्री विजय तिवारी जी :–

फिर इक सुहाना सपना हमको दिखा रहे हैं।
सुई की नोंक पर वो हाथी बिठा रहें हैं।
जीवन के खण्डहरों की हर ईंट गिर रही है,
ऐसे समय में भी वो मल्हार गा रहे हैं।

ये उसी कहावत को चरितार्थ कर रहा है, जब रोम जल रहा था तब नीरो वंशी बजा रहा था।

भावना के हाथ काटे स्वार्थ की तलवार ने,
ज़ख्म इक दूजे के कैसे कौन अब सहलाएगा।
सिद्धियां पाकर के भी जो लाँघता सीमा नहीं,
सख़्श रत्नाकर वही इस विश्व में कहलाएगा।

उपरोक्त दो शेर पृष्ठ 102 से व्यक्तिवादी व्यवस्था के लिये लिखे हैं शायर ने।

कहने को तो कानून के हाथ बहुत लंबे होते हैं। लेकिन कहीं न कहीं गिरावट जरूर है जिसे हर कोई महसूस करता है। शायर भी बहुत ख़ुश नहीं है। पृष्ठ 24 पर उसके तेवर देखे जा सकते हैं :–

कातिल बना है मुंसिफ तो फ़ैसला क्या होगा,
तुहमत लगाके मुझ पर मेरा बयान लेंगे।
मैं जानता नहीं था रणभूमि में गुरुजन,
मुझसे ही छीन मेरा तीरो कमान लेंगे।

श्री विजय तिवारी ने अपनी ग़ज़लों को रोज़मर्रा के जीवन से उठाया है। कहने को बहुत सारे शेर के उद्धरण लिखे जा सकते हैं। लेकिन ये चुनिंदा शेर पाठक की जिज्ञासा को

शांत नहीं कर सकते उन्हें "आक़ा बदल रहे हैं" कृति को पढ़ना ही पड़ेगा। उक्त ग़ज़ल संग्रह न केवल पठनीय है बल्कि संग्रहनीय भी हैं। शायर श्री विजय तिवारी का यह ग़ज़ल संग्रह एक नया मुकाम हासिल करें ऐसी शुभकामनाएँ व्यक्त करता हूँ।

- डॉ. राजीव कुमार पाण्डेय
कवि, कथाकार, हाइकुकार, सम्पादक
"राष्ट्रीय अध्यक्ष"
काव्यकुल संस्थान (पंजी.)
1323 / भूतल, सेक्टर 2
वेबसिटी, गाजियाबाद
उत्तर प्रदेश

❖

"आक़ा बदल रहे हैं"

– डॉ. रामगोपाल भारतीय

साहित्य में अपनी बात कहने के लिए और अपने भाव स्पष्ट करने के लिए प्रायः गद्य का सहारा लिया जाता है किंतु जब हमें बात हार्दिक संवेदना के साथ करनी होती है और अपने भाव अप्रत्यक्ष भावात्मक और प्रभावी रूप से प्रकट करने होते हैं तो हम कविता का सहारा लेते हैं। अतः कविता साहित्य की वह विधा है जिसमें कवि अपने भाव प्रकट करने के लिए कल्पना, व्यंजना, रूपक, बिंब, अलंकार अथवा अन्य साहित्यिक व्यंजनों का सहारा लेता है। कविता हृदय से निकली कोमल भावना है जबकि गद्य हृदय और मस्तिष्क से उपजा विचार है जो दूसरों के समक्ष अभिव्यक्त किया जा सकता है। हिंदी काव्य विधा में भी ग़ज़ल एक बेहद नाजुक विधा है जिसमें 2 पंक्तियों में अपने भाव कुशलता से प्रकट किए जाते हैं। यद्यपि ग़ज़ल का शाब्दिक अर्थ महबूबा से बातचीत माना गया है जिससे पहले महफ़िलों, राजा महाराजाओं के दरबारों में इश्क मोहब्बत की बातें करके लोगों का मनोरंजन किया जाता था किंतु कालांतर में ग़ज़ल के विषयों में इतनी वृद्धि हुई कि उसे जनसाधारण की समस्याओं से और व्यक्तिगत परेशानियों से जोड़कर लिखा जाने लगा। इसमें ग़ज़ल सम्राट माने जाने वाले दुष्यंत कुमार का विशेष योगदान है जिन्होंने ग़ज़ल को महलों और रजवाड़ों से निकालकर आम आदमी के सामने सड़क पर ला खड़ा किया और इश्क और मोहब्बत की जबान को आम आदमी की रोजमर्रा की परेशानियों से जोड़ दिया। यही कारण है कि आज ग़ज़ल हिंदी काव्य साहित्य की प्रमुख विधा बन गई है। बहुत सारे नवोदित ग़ज़ल लिख रहे हैं और साहित्य अकादमी उन्हें पुरस्कृत कर ग़ज़ल विधा को प्रोत्साहन भी दे रही हैं।

साहित्य समाज का दर्पण है तो समाज में व्याप्त विसंगतियाँ और बुराइयों को दूर करने के लिए साहित्य का सृजन करना साहित्यकारों का कर्तव्य है। वह समाज की विसंगतियों पर अपनी रचनाओं में चोट भी करते हैं और उसका समाधान भी प्रस्तुत करते हैं। आजकल हिंदी भाषी प्रदेशों के अलावा अन्य अहिंदी भाषी प्रदेशों में भी बड़ी संख्या में लोग हिंदी साहित्य की रचना कर रहे हैं। यह सुखद है और भविष्य के लिए अच्छा संकेत भी क्योंकि हिंदी भाषा को राष्ट्रभाषा के पद पर आसीन करने के लिए जहाँ हिंदी भाषियों का हिंदी भाषा के प्रति अनुराग आवश्यक है वही अन्य प्रदेशों की क्षेत्रीय भाषाओं का सीखना व समझना भी जरूरी है। इस कड़ी में अहमदाबाद के शिक्षक व साहित्यकार विजय तिवारी हिंदी काव्य विधा में अपना एक विशेष स्थान रखते हैं। इसका प्रमाण उनका सद्य प्रकाशित ग़ज़ल संग्रह, आक़ा बदल रहे हैं', का पाठकों के सामने आना है। यूँ तो विजय तिवारी को हिंदी साहित्य की अनेक विधाओं में पुरस्कृत व सम्मानित किया जा चुका है किंतु यह संग्रह हिंदी साहित्य अकादमी ने प्रकाशित कराके न केवल विजय तिवारी को समुचित सम्मान दिया है वरन हिंदी साहित्य की ग़ज़ल विधा में, 'आक़ा बदल रहे हैं', ग़ज़ल संग्रह को शामिल कर साहित्य में श्री वृद्धि की है। विजय तिवारी जी की ग़ज़लों में व्यवस्था को बदलने की छटपटाहट स्पष्ट दिखाई देती है। उनकी इस पुस्तक की प्रस्तावना लिखते हुए सुप्रसिद्ध शायर अंसार कंबरी ने

उनकी ग़ज़ल लिखने की क्षमता और काव्य कौशल की भूरी भूरी प्रशंसा की है। विजय तिवारी जी की ग़ज़लें पढ़ने पर लगता है कि उन्हें ग़ज़ल व्याकरण की जानकारी है और उनका शब्द चयन अत्यंत सरल, सामयिक और सहज है जो पाठक या श्रोता के हृदय पर सीधा दस्तक देता है और उसे प्रभावित करता है। अपने भाव संप्रेषण करने में यह ग़ज़ल संग्रह पूर्णता सफल हुआ है। बानगी के लिए उनके इस ग़ज़ल संग्रह से कुछ शेर यहाँ प्रस्तुत हैं।

विजय तिवारी अपनी संस्कृति और सभ्यता के पोषण की वकालत करते हुए कहते हैं:

पश्चिम की सभ्यता से विज्ञान सीख करके,
मावस की कलिमा को पूनम बना रहे हैं।

इसी प्रकार वह समाज में व्याप्त मानवीय मूल्यों के पतन और लोगों के दोहरे चरित्र को उजागर करते हुए कहते हैं :–

मुखौटे पर मुखौटा है कोई सच्चा नहीं लगता,
किसी से बात करना आजकल अच्छा नहीं लगता।

उनकी बेबाकी और स्पष्ट वादिता इस शेर में स्पष्ट हुई है –

काम पर उसके पुरस्कृत मैं हुआ हूँ,
और हर इल्जाम उसके सर गया है।

कवि ने स्वार्थ और अवसरवादिता की राजनीति को लक्ष्य करते हुए लिखा है –

लाएँगे रामराज्य यहाँ फिर से भेड़िए,
भेड़ें मगन हैं सुन के समाचार इन दिनों।

कवि विश्व में बढ़ती परमाणु अस्त्रों की प्रतिद्वंदिता पर दुखी है जब वह कहता है–

इस आधुनिक जहान में एटम की बात कर,
रोटी की औ' मकान की चर्चा फिजूल है।

कवि समाज के दबे कुचले और वंचित समाज की व्यथा की बात करता है और उनके मानवीय अधिकारों का समर्थक है इसलिए वह कहता है –

यहाँ पे दूध की नदियाँ थी खेत सोने के,
गया कहाँ पे वो जाहो जलाल पूछेंगे।

कवि को मानवीय मूल्यों के क्षरण के साथ ही पर्यावरण की चिंता भी सताती है और प्रकृति बचाने के लिए वह अपने शेर में कहता है –

जंगल पहाड़ और नदी सब हैं लापता,
चारों तरफ़ बने हैं मकां आज बेहिसाब।

कवि को लोगों के चुप रहने और अत्याचार सहने पर आपत्ति है और वह चाहता है कि लोग मुखर होकर व्यवस्था परिवर्तन की माँग करें, जब वह कहता है –

ख़ुश हैं यहाँ पे लोग अपनी तीरगी के साथ,
ये चल नहीं पाए किसी भी रोशनी के साथ।

कवि नेताओं के दोहरे और बदलते चरित्र से व्यथित है और जनता को आगाह करते हुए कहता है –

सीढ़ी बना के हमको पहुँचे हैं जो शिखर तक,
उनको ही सबसे ज्यादा हम आज खल रहे हैं।

कवि भारत की वर्तमान बिगड़ी हुई अवस्था के लिए अंग्रेजी सरकार और उसके बाँटो और राज करो के सिद्धांत को जिम्मेदार मानता है और उन ताकतों को आगाह करता है जो आज़ादी के बाद भी लोगों को बाँटने में लगे हैं वो कहता हैं –

टुकड़े जमीं के करके गुलामी चलो गई,
जाते हुए वो बीज मगर विष के बो गई।

इन सब विसंगतियों और बिगड़ी हुई व्यवस्थाओं के बावजूद कवि आशा का दामन नहीं छोड़ता है और उम्मीद को कायम रखने की बात अपनी पंक्तियों में कहता है देखिए –

आएँगे फिर से लौट के मेरे ही पास वो,
हमको इसी उम्मीद ने मरने नहीं दिया।

कवि इस व्यवस्था के लिए नेताओं के साथ-साथ ख़ुद लोगों को भी जिम्मेदार मानता है जब वह कहता है –

खुद चुना है सफ़र यह अपना तो,
अश्क कैसे मलाल कैसा है।

कवि बाजारीकरण से दुखी है और कहता है आज हर तरफ़ विध्वंसकारी औजारों का निर्माण हो रहा है जिससे बचना बहुत आवश्यक है उनकी पंक्तियाँ देखिए

हर और हैं संहार के औजार इन दिनों।
दुनिया तो बन गई है अब बाजार इन दिनों।

कवि सादगी, ईमानदारी और सच्चाई को मानवता के मूल्य मानता है। जिसकी आजकल कमी होती जा रही है एक शेर देखिए –

सादगी सच्चाई मानवता सभी कुछ बेच दी,
आदमी के नाम पर हर कोई बंजारा मिला।

कवि का मानना है कि हम राजनीतिक रूप से आज़ाद तो हो गए हैं लेकिन व्यवस्था में अभी भी राजनीतिज्ञ लोग जो स्वार्थ की राजनीति में संलग्न हैं अभी भी हम पर अंग्रेजों की भाँति ही अपना वर्चस्व जमाए हैं यह शेर उनकी इस ग़ज़ल संग्रह का शीर्षक भी समाहित किए हुए हैं देखें –

आज़ाद हो गए हैं इस भ्रम में पल रहे हैं।

हम तो गुलाम ही हैं आक़ा बदल रहे हैं।

कवि की दृष्टि में नेताओं से जो हमारी उम्मीद थी वह पूरी नहीं हुई जो उनके इस शेर में स्पष्ट है जिनसे थी उम्मीद अब वही किनारा कर गए दूर से जलते मकान का बस नजारा कर गए। इसी स्थिति का एक और शेर देखें–

मोतियों से अश्क हैं बरसात पे भारी बहुत।
हो गया है आज का दिन रात पे भारी बहुत।

कवि वर्तमान व्यवस्था और तनाव के माहौल से दुखी है। जहाँ हर तरफ़ बेचैनी संप्रदाय वाद, जातिवाद, क्षेत्रवाद, भाषावाद और अन्य किसी बात पर लोग आपस में रोज उलझते हैं और वातावरण को प्रदूषित कर देते हैं। ऐसे में गीत और ग़ज़लें कैसे लिखें और कैसे गाएँ अपनी इस व्यथा को कवि इस प्रकार प्रकट करता है

लगेगा मन यहाँ पे कैसे अपना,
ग़ज़ल गीतों की ये महफिल नहीं है।

यद्यपि कवि ने बिगड़ी हुई व्यवस्थाओं के लिए अधिकांश राजनीति और लोगों की स्वार्थपरता को जिम्मेदार ठहराया है किंतु उसका मानना है कि इस स्थिति के लिए हम भी कम जिम्मेदार नहीं हैं जब वह कहते हैं।

लग गई मेरी नज़र मेरे ही घर को।
दोष कैसे दूँ किसी की भी नज़र को।

इस प्रकार हम देखते हैं कि विजय तिवारी की ग़ज़लों में व्यवस्था के विरुद्ध स्वर है जो हमें दुष्यंत के तेवर की याद दिलाता है और एक छटपटाहट है एक उम्मीद भी है इस व्यवस्था को बदलने की। क्योंकि कवि का स्पष्ट मत है कि इन व्यवस्थाओं को हम आपसी भाईचारे निस्वार्थ राजनीति और मानवीय मूल्यों पर आधारित सार्वजनिक जीवन को प्रतिस्थापित करके एक नई सुखद कल्याणकारी समतावादी व्यवस्था ला सकते हैं जो न केवल हमारे समाज के लिए अपितु संपूर्ण मानवता के लिए कल्याणकारी सिद्ध होगी। कुल मिलाकर डॉ. विजय तिवारी जी का संग्रह, आक़ा बदल रहे हैं, पाठकों को विचारोत्तेजक भाव तो देगा ही उनको इस बिगड़ी हुई व्यवस्था और बेचैनी के माहौल को बदलने के लिए एक नैतिक समर्थन भी प्रदान करेगा। मुझे आशा है, यह ग़ज़ल संग्रह हिंदी जगत में अपना विशिष्ट स्थान बनाएगा और विजय तिवारी जी का परिश्रम और मंतव्य अपनी मंज़िल पाने में सक्षम सिद्ध होगा। मेरी अनंत शुभकामनाएँ उनके साथ हैं।

- डॉ. रामगोपाल भारतीय
वरिष्ठ साहित्यकार
128 शील कुंज रुड़की रोड मेरठ
(उ.प.)

❖

यह सनातन सत्य है – आक़ा बदल रहे हैं

– डोली तिकू अरवल

गुजरात प्रदेश से हिन्दी की अद्वितीय, अद्‌भुत दिव्य ज्योति प्रज्ज्वलित करनेवाले श्री विजय तिवारी जी का यह ग़ज़ल संग्रह **आक़ा बदल रहे हैं** यक़ीनन अतुलनीय और बेमिसाल है। इस संग्रह में 89 ग़ज़लों का बेहद करिश्माई गुलदस्ता है। विश्व की तमाम मनोभावनाओं को विजय जी ने बेहद खूबसूरत अंदाज़ में अपनी विविध ग़ज़लों में अद्‌भुत ढंग से अभिव्यक्त किया है। यह उक्ति विजय जी पर बिलकुल सटीक बैठती है कि–

इनका है अंदाजे बयां और

ग़ज़ल के इतिहास के विषय में, उसके छंद विधान पर और उसकी सुदीर्घ साहित्यिक यात्रा पर चर्चा करना यहाँ अनुकूल नहीं है। ग़ज़ल चाहे आयातित विधा है किन्तु **आक़ा बदल रहे हैं** के संग्रह में सबसे पहली ग़ज़ल माता शारदे पर है। उनके श्री चरणों में नतमस्तक होते हुए विजय जी ने पूरी श्रद्धा से प्रार्थना की है और ऐसा लगता है कि माता सरस्वती ने उनकी प्रार्थना सुनते हुए उन्हें पूर्ण सफलता का वरदान भी दिया है। विजय जी का इससे पूर्व प्रकाशित ग़ज़ल संग्रह **फल खाए शजर** शीर्षक से प्रकाशित हुआ है और उसमें भी शायर ने सबसे पहली ग़ज़ल माता शारदे की वंदना करते हुए रखी है। विजय जी के ये दोनों ग़ज़ल संग्रह **फल खाए शजर** और **आक़ा बदल रहे हैं** हिन्दी साहित्य अकादमी, गुजरात द्वारा पुरस्कृत हैं।

इनकी ग़ज़लों में सामाजिक सरोकार की ग़ज़लें, सम्बन्धों के टूटते बिखरते मार्मिक चित्र, राजनीति के गिरते मूल्य और साँस्कृतिक ह्रास, पारिवारिक बिखराव, अपनों से विश्वासघात, नफ़रत और ईर्ष्या के दृश्य तथा राष्ट्र को पतन की ओर ले जाने वाले कुरूप चेहरे आदि चित्र इतनी सटीकता और प्रभावोत्पादकता से प्रस्तुत हुए हैं कि ये पाठक के मन मस्तिष्क पर अपनी अमिट छाप छोड़ जाते हैं। माँ से प्रार्थना करते हुए वे सिर्फ अपने लिए नहीं बल्कि अपने देश और विश्व के समस्त प्राणी के लिए आशीर्वाद माँगते हैं –

हे माँ मुझे वरदान दे।
जग में अपरिमित ज्ञान दे॥

दुःख दर्द सबके हर सकूँ,
ऐसा अमर इक गान दे,

संसार में सर्वोपरि,
इस देश को सम्मान दे,

राजनीति पर तो लगभग सभी साहित्यकारों ने कलम चलाई है और गीत, ग़ज़ल तथा कविता में तो राजनीति पर बिम्ब और प्रतीकों के माध्यम से बहुत कुछ कहा गया है। लेकिन विजय जी के तेवर यक़ीनन सबसे अलग हैं। राजनीति पर व्यंग्य में बात कहने का इनका निराला अंदाज़ है। उदाहरण देकर जब विजय जी राजनीति पर करारा व्यंग्य करते हैं, जबरदस्त

प्रहार करते हैं तो ग़ज़ब का दृश्य प्रस्तुत हो जाता है। साथ ही विजय जी उन लोगों पर भी चोट करने से नहीं चूकते हैं जो पाश्चात्य संस्कृति को सर्वोपरि मानते हुए, उसे श्रेष्ठ मानते हुए अपनी भारतीय श्रेष्ठ सनातन संस्कृति को हेय दृष्टि से देखते हैं। इन चार पंक्तियों में विजय जी द्वारा प्रस्तुत दृश्य अत्यंत मार्मिक बन पड़ा है –

फिर इक सुहाना सपना हमको दिखा रहे हैं।
सुई की नोक पे वो हाथी बिठा रहे हैं॥
पश्चिम की सभ्यता से विज्ञान सीखकर ये,
मावस की कालिमा को पूनम बता रहे हैं।

आज के इस अत्याधुनिक युग में, इस जेट युग में, इस नेट युग में, इस तेज रफ्तारी के युग में प्रत्येक व्यक्ति दौड़ते-दौड़ते हाँफ रहा है। जीवनयापन और ख़ुशी के लिए दूसरों की देखा-देखी और भौतिक सुख की अत्यधिक चाह ने मनुष्य को मशीन बना दिया है। इसीलिए प्रत्येक व्यक्ति मन से थका हुआ, हारा हुआ महसूस करता है। कहीं न कहीं निराशा और हताशा के गर्त में गिरता चला जाता है। सन्तोष का सुख उसे प्राप्त ही नहीं हो पाता है। विजय जी के कवि मन ने इस मनोभाव और मनुष्य की प्रवृत्ति को रोकते हुए प्रत्येक थके हारे और निराश-हताश मनुष्य को प्रेरणा देते हुए, उनका उत्साह वर्धन करते हुए यह शेर लिखा है, जो यक़ीनन उर्जा का अजस्र स्रोत सा लगता है –

नहीं है ज़िन्दगी मायूस होकर बैठने लायक।
अभी दुनिया में है बाकी बहुत कुछ देखने लायक॥

अहिंसा का संदेश समस्त विश्व में प्रसारित करना और अहिंसा की बातों पर अमल करना बिलकुल सही है। क्योंकि प्यार, प्रेम और स्नेह ही सनातन है। इसी से सभी को सुख प्राप्त हो सकता है। लेकिन सिर्फ अहिंसा से सबकुछ सम्भव नहीं है। अहिंसा से बात बन जाती तो महाभारत का युद्ध नहीं होता। राम को शस्त्र नहीं उठाने पड़ते। इसलिए अहिंसा का महत्व तभी है जब वह शक्तिशाली, बलशाली भुजाओं में रक्षित हो। इसी बात को शायर विजय ने इस तरह कहा है –

तू अहिंसा प्रेम की बातें करेगा कब तलक।
दोस्ती के नाम पर घातें सहेगा कब तलक॥
मार पंजा शेर सा भाषा यही समझेगा वो,
भैंस के आगे यूँ ही गीता पढ़ेगा कब तलक।

आज के इस भौतिकवादी युग में भौतिक संसाधनों और उसके नश्वर सुख के पीछे मनुष्य ने अपनत्व और दया, ममता की हत्या कर दी है। ऐसा लगता है कि मनुष्य अपने मुख पर और कयी मुखौटे लगाये हुए है। अपने स्वार्थ और लालच के अनुकूल अपने चेहरे पर मुखौटा बदलता रहता है। अत्यंत मार्मिक और सटीक चित्रण किया है विजय जी ने देखिए–

मुखौटे पर मुखौटा है कोई सच्चा नहीं लगता।
किसी से बात करना आजकल अच्छा नहीं लगता॥

इस युग ने दो-दो विश्व युद्ध देखें हैं और इन दोनों युद्धों की विनाशकता को भी देखा है, भोगा है। इतना ही नहीं हमारी सनातन संस्कृति में महाभारत जैसे महाविनाशक युद्ध का वर्णन है। राम-रावण के भयंकर युद्ध का वर्णन है। युद्धों के परिणाम से समस्त विश्व परिचित है। इसीलिए इस विश्व में शांति स्थापना के बार-बार प्रयास होते रहे हैं। दो-दो विश्व युद्ध के भयंकर विनाशक परिणाम देखने और भोगने के बाद विश्व शांति के प्रयास हुए और उसके परिणाम क्या निकले इसपर विजय जी कहते हैं –

विश्व शांति के नये हल का असर भी देखिए।
हर तरफ़ होने लगीं हैं जंग की तैयारियाँ॥
हर ओर हैं संहार के औजार इन दिनों।
दुनिया तो बन गयी है अब बाजार इन दिनों॥

विजय जी का यह ग़ज़ल संग्रह 'आक़ा बदल रहे हैं' अत्यंत बेहतरीन ग़ज़लों का बेहद नायाब दस्तावेज है। विजय जी ने सामाजिक और राजनीतिक कुरूपता को ही उजागर नहीं किया है। बल्कि प्रेम और प्यार की सनातन अनुभूति को अत्यंत शिद्दत से महसूसा है और जिस तरह से अपने महबूब से प्यार करते हुए उन्होंने अपने प्रेम की अभिव्यक्ति की है वह यक़ीनन अद्वितीय है –

इन हवाओं पे तेरा नाम लिखा करते हैं।
दूर तक साथ में फिर उसके उड़ा करते हैं॥
मयकदा जाम की कोई भी ज़रूरत ही नहीं,
जाम बातों के ही कानों से पिया करते हैं।

अपने महबूब की ख़ूबसूरती का वर्णन करते हुए शायर विजय जी सारे उपमानों को पीछे छोड़ देते हैं –

मैं चेहरे को उनके कमल लिख रहा हूँ।
बदन को मैं स्वर्णिम महल लिख रहा हूँ॥
उन्हें सिर्फ उनको असल लिख रहा हूँ,
औ' परियों को उनकी नकल लिख रहा हूँ।

आज के युग में परिश्रम से ज्यादा महत्व ख़ुशामद और सिफ़ारिश का हो गया है। वे लोग जो हुनरमंद हैं, जो योग्य हैं उन्हें स्थान नहीं मिल पाता है, उन्हें मौका नहीं मिल पाता है और जो चापलूस हैं, ख़ुशामदखोर हैं, जो सिफ़ारिश करवा सकता है ऐसे लोगों को पद प्राप्त हो जाता है। हुनर और योग्यता के अभाव में मात्र ख़ुशामद और सिफ़ारिश के जोर पर पद प्राप्त करने वाले फिर व्यवस्था को बरबादी की ओर ही ले जाते हैं। यह दर्द इन पंक्तियों में अत्यंत सटीकता और प्रभावोत्पादकता से अभिव्यक्त हुआ है –

यहाँ रुकने से कुछ हासिल नहीं है।
ज़रा सी छाँव है मंज़िल नहीं है॥
सिफ़ारिश है न आती हो ख़ुशामद,
समझ ले तू किसी काबिल नहीं है।

इसी तरह के बेमिसाल शेरों और ग़ज़लों से यह ग़ज़ल संग्रह 'आक़ा बदल रहे हैं' भरा पड़ा है। इस युग की बेहद बेहतरीन ग़ज़लों का यह संग्रह है। ऐसा कहना बिलकुल अतिशयोक्ति नहीं है। परिवार, समाज, देश और विश्व के तमाम रंगों को शायर ने यहाँ बेहद खूबसूरती से चित्रित किया है। इस संग्रह को देख कर यह निसंदेह कहा जा सकता है कि विजय जी की शायरी दुष्यंत, ग़ालिब और मीर के समकक्ष की शायरी है। इस ग़ज़ल संग्रह ने हिन्दी साहित्य को और हिन्दी ग़ज़ल को नयी ऊचाइयाँ प्रदान की है। विजय जी की इसी तरह की शायरी और ग़ज़ल के हुनर को देखकर सन् 1999 में बेहद मशहूर और उस्ताद शायर जनाब अंसार कंबरी ने कहा है –

है तुम्हारी ग़ज़ल न हमारी ग़ज़ल।
सबको लगने लगी आज प्यारी ग़ज़ल॥
कहते होंगे कभी मीर, ग़ालिब मगर,
आजकल कह रहे हैं तिवारी ग़ज़ल।

विजय जी को हृदय से शुभकामनाएँ और ईश्वर से प्रार्थना है कि हिन्दी साहित्य में दैदीप्यमान सूर्य की तरह हमेशा प्रज्ज्वलित रहें। अपनी स्वर्णिम तेज रौशनी से साहित्य को सदा राह दिखाते रहें, मार्ग प्रशस्त करते रहें।

Dolly Tiku Arrwal
Advisory board member sahitya Academy New Delhi
H.no. 111-c sec 2
Durga Nagar Talab Tilloo Bohri Jammu
Pin 180002

❖

'आक़ा बदल रहे है' अत्याधुनिक ग़ज़ल संग्रह

–दीपशिखा 'दीप'

आज़ाद हो गये हैं इस भ्रम में पल रहे हैं।
हम तो गुलाम ही हैं आक़ा बदल रहें हैं।

काव्य हृदय की दस्तकारी है, मन के भावों को शब्दों में पिरोने की कलाकारी है। और यदि वो ग़ज़ल के रूप में हो तो सोने पे सुहागा हो जाता है। मूलत: ग़ज़ल अरबी भाषा की काव्य विधा है। फ़ारसी और उर्दू के उपवन को सुसज्जित करती हुई जब हिन्दी की बगिया में पहुँची तो इसे यहाँ भी वही आदर सम्मान और प्यार मिला। ग़ज़ल किसी भी भाषा में कही जाए, अपने रंग-रूप तथा सौन्दर्य से वह ग़ज़ल ही कहलाती है और प्रत्येक भाषा के काव्य-प्रेमियों के हृदयों में बसती चली जाती है।

सेतु प्रकाशन द्वारा प्रकाशित विजय तिवारी का ग़ज़ल संग्रह "आक़ा बदल रहे हैं" की ग़ज़लें विभिन्न शेड्स लिए हुए हैं। इनमें समाज की मृत होती चेतनाएँ, सम्बन्धों के टूटते - बिखरते मार्मिक चित्र, राजनीति के कुत्सित चेहरे, पारिवारिक, सांस्कृतिक, नैतिक मूल्यों का पतन का चित्रण बहुत ही प्रभावशाली ढंग से हुआ है। एक तरफ़ प्रकृति से बतियाते सुन्दर शेर हैं तो दूसरी ओर प्रिय की सुन्दरता का बखान करते शेर भी मिल जाएँगे। तिवारी जी की ग़ज़लों में कमाल का आकर्षण और सादगी है, जो सहज ही पाठक के हृदय तक जा पहुँचती है।

निःसन्देह, हिन्दी के पाठकों के लिए विजय तिवारी का यह ग़ज़ल संग्रह एक मशाल की तरह काम करेगा। कुछ ग़ज़लों के बहुत ही ख़ूबसूरत अशआर आप सब साहित्यानुरागियों की नज्र कर रही हूँ।

शाइर ज़िन्दगी की परेशानियों से कभी मायूस नहीं होता, मायूसियों में रास्ता ढूँढ़ते कुछ अशआर देखिए –

नहीं है ज़िन्दगी मायूस होकर बैठने लायक,
अभी दुनिया में है बाकी बहुत कुछ देखने लायक।

कटे हैं पैर जब से हो गया मसरूफ़ मैं इतना,
कि यूँ लगता है जैसे अब हुआ हूँ दौड़ने लायक।

मौत से शर्त लगाकर वो मज़ा आया की,
ज़िन्दगी और भी मस्ती में जिया करते हैं।

मेरी तक़दीर में कालिख भी अगर है तो 'विजय',
उसके चेहरे पे बनूँ तिल ये दुआ करते हैं।

आई अगर है शाम तो करता है क्यूँ अफ़सोस,
होगा नया सूरज नई फिर ताजगी के साथ।

तूफ़ान में बेख़ौफ़ जला दीप फिर नया,
आख़िर कभी तो रात की होगी नई सहर।

वर्तमान समय में हमारा हर गाँव, शहर, आंतकवाद, अलगाववाद से ग्रस्त है और कोई भी इंसान इसके प्रभावों से अछूता नहीं रह सकता और यदि वो एक संवेदनशील शाइर हो तो उसके दिल का दर्द शब्दों के रूप में कागज़ पर उतर ही आता है देखिए –

बारूद को शरर से रक्खा था दूर हरदम,
लेकिन भड़क के दोनों सब कुछ जला रहे हैं।

हरिक पौधे में विष अलगाव का इतना भरा है की,
गुलों का अब किसी भी शाख पर गुच्छा नहीं लगता।

कहीं काँटे कहीं डाली कहीं पर फूल बिखरे हैं।
उजाड़ो और मत बगिया ये अपने ही बसेरे हैं।

बहशी हुआ है इन्साँ दहशत में है ज़माना
ख़ूँ से है लाल परचम कैसी ग़ज़ा है तेरी।

नई उम्मीद लेकर के जगा था देश ये मेरा,
अंधेरा हर तरफ़ फैला है ये कैसे सबेरे हैं।

बागवाँ ने ही लगा दी आग जब फुलवारी में,
सिसकियों को कौन फिर बदलेगा अब किलकारी में।

काटना तुम ख़ूब लाशों की फसल अब के बरस,
मौत ही बोई गई है खेत की हर क्यारी में।

काढ़ते थे बेल बूटे और सुन्दर फूल ही,
अब तो बस बन्दूक औ' बम दिखते हैं फुलकारी में।

तिवारी भोली-भाली जनता को बहकाने वाली झूठी, ओछी राजनीति का पुरज़ोर विरोध करते दीखते हैं, देखिए कुछ अशआर

फिर इक सुहाना सपना हमको दिखा रहें हैं।
सूई की नोक पे वो हाथी बिठा रहे हैं।

अब मुल्क में कोई भी भूखा नहीं रहेगा,
वो फिर से बीरबल की खिचड़ी पका रहे हैं।

अब मिलेगी ज़िन्दगी सदियों से सुनते हैं मगर,
'हम मिटायेंगे ग़रीबी' बस यही नारा मिला।

आज़ाद हो गये हैं इस भ्रम में पल रहे हैं।
हम तो गुलाम ही हैं, आक़ा बदल रहे हैं।

राहें पतन की हमको गैरों ने जो दिखाई
हम आज भी उन्हीं पे अफसोस चल रहे हैं।

सत्ता की बकरी के आगे,
शेर को भी तो झुकना पड़ा है।

जनता को ठगता नहीं,
नेता हो सकता नहीं।

ये राजनिति क्षेत्र कपट छल है न आना,
रस्ते बडे खराब हैं इस ओर सफ़र के।

शाइर ऐसी पश्चिमी सभ्यता का विरोधी है जो आधुनिकता के नाम पर हमारी संस्कृति को चोट पहुँचाती है, और हमारी सनातनी सभ्यता का क़त्ल करती है–

पश्चिम की सभ्यता से विज्ञान सीख कर के,
मावस की कालिमा को पूनम बता रहे हैं।

तुलसी जला के घर में लगायेंगे कैक्टस,
अब तो यही जहाँ का है व्यवहार इन दिनों।

आधुनिक ढंग से सजाया जा रहा है बाग को
ख़ून से ही हैं लबालव बाग़ की सब क्यारियाँ।

पश्चिमी ठण्डी हवा का है असर ये,
संस्कृति की नब्ज़ भी ठण्डी हुई है।

पश्चिमी तहज़ीब से इतनी तरक्की हो गई,
तन पे कपड़े कम हुए औ' मन के काले हो गये।

तिवारी जी प्रकृति प्रेमी हैं और ऐसे किसी कार्य की हिमायत नहीं करते, जिससे पर्यावरण की हानि होती हो, देखिए कुछ अशआर

जंगल पहाड़ और नदी सब हैं लापता,
चारों तरफ़ बने हैं मकाँ आज बेहिसाब।

कुदरत को आदमी ने तमाशा बना दिया,
पर्वत ज़मीन और नदी हो गई है तंग।

अब भरोसा उठ गया कुदरत का भी इन्सान से,
है यही सदमा मेरे सदमात पे भारी बहुत।

इस दौर के विज्ञान की सौगात है सन्देह,
ज़मज़म में भी इन्सान ज़हर ढूँढ़ रहा है।

इस भौतिकी युग में भी शाइर मुहब्बत का नगर ढूँढ रहा है, वह प्रेम को ही सर्वोपरी मानता है, प्रेम की चाँदनी उनकी ग़ज़लों में छिटकी पड़ी है–

भौतिक है, मशीनी है ज़माने में सभी कुछ,
ऐसे में मुहब्बत का नगर ढूँढ रहा है।

सरापा उन्हें और क्या मैं कहूँ बस,
मुसलसल मुकम्मल ग़ज़ल लिख रहा हूँ।

चेहरे पे खेलती हुई लगती है ज़ुल्फ़ यूँ
जैसे कि कोई चाँद घिरा हो घटाओं में।

यादें जुड़ी हैं इससे शायर हमें बनाया,
वो ज़िंदगी है मेरी जिसका रुमाल है ये

इस विश्व में मिलेगा कण कण में प्यार ही बस,
लाली उसी की है ये जिसका गुलाल है ये।

संसार में सबसे बड़ी नेमत है प्यार की,
जो पा गया इसको वही आकाश हो गया।

वो हमसफ़र है मेरा हमदर्द, हमनवा है,
वो ज़िन्दगी में मेरी बनकर ग़ज़ल रहा है।

आज चहुँ ओर रिश्तों का पतन हो रहा है, सभी रिश्ते स्वार्थी-से लगते हैं, दिलों में दूरियाँ आ गई हैं। आज के परिवेश में रिश्तों की परिभाषा ही बदल चुकी है

धोखे मिले हैं राह में हर इक कदम पे ख़ार,
होता यही है नेक नीयत आदमी के साथ।

हमदर्द मेरा ज़ख़्म यूँ सहला रहा है कि,
उसने कभी भी ज़ख़्म को भरने नहीं दिया।

जाता नहीं है आज कोई राम अब बनवास,
जाते हैं वृद्धाश्रम में दशरथ कैकयी के साथ।

छल, कपट स्वार्थ के घोर जंगल में अब
प्यार का तो कोई रास्ता ही नहीं।

सहते सहते सभी सर्द इतना हुआ
जिस्म में अब लहू खौलता ही नहीं।

किस प्रकार कुछ मतलबपरस्त लोग दूसरों की मेहनत का फल चुरा कर दूसरों की बनाई सीढ़ियों पर चढ़कर मंज़िल तक पहुँच जाते हैं, गिद्ध की भांति दूसरों के फल पर झपट्टा मारने वालों पर तिवारी जी ने कई शे'र कहे हैं। ऐसे लोगों पर उन्होंने करारा व्यंग्य किया है। प्यार के नाम पर लोग क्या-क्या षड्यंत्र रचने लगे हैं।

काम पर उसके पुरस्कृत मैं हुआ हूँ,
और हर इल्जाम उसके सर गया है।

मैं जानता नहीं था रणभूमि में गुरुजन,
मुझसे ही छीन मेरा तीरो - कमान लेंगे।

क़ातिल बना है मुंसिफ तो फैसला क्या होगा
तुहमत लगा के मुझ पर मेरा बयान लेगें।

पहुँचा शिखर पे चढ़ के सिफारिश की सीढ़ियाँ,
फिर भी उसे हुआ है गुमाँ आज बेहिसाब।

बाग की किस्मत में जाने क्या लिखा है ऐ 'विजय',
बागवाँ हर इक यहाँ ले हाथ में आरा मिला।

योग्यताएँ सब ख़ुशामद के बिना बेकार है,
झूठ को सच और सच को झूठ कहना सीख ले।

नाम होगा इस जहाँ में पाएगा सम्मान भी,
तू भी गिरगिट की तरह अब रंग बदलना सीख ले।

प्यार के नाम पर कह के आबे हयात,
दे रहा है वो मुझको ज़हर देखिए।

वो ख़ुशामद, चापलूसी और धन के जोर से,
शीर्ष का सम्मान पाकर के निराले हो गए।

शाइर देश विरोधी ताकतों को ललकारता है, वो कायरता का सख़्त विरोधी है। सदा दूसरों की उंगली पकड़कर चलने वालों को भी वह सावधान करता है

यूँ अगर पैड़ों के साये में सदा पलता रहा,
तो 'विजय' पौधे से तूबरगद बनेगा कब तलक।

तान कर सीना तू वीरों की तरह कर सामना,
कायरों की मौत तू बेबस मरेगा कब तलक।

इस धारा की धीर को समझो न तुम ख़ामोशियाँ,
इसके भीतर हैं उबलती पौरूषी चिनगारियाँ।

तुम गोली छाती पर दागो और करो मुझसे उम्मीदें,
बात अहिंसा की दुहराऊँ कब तक आख़िर आख़िर कब तक।

शाइर धरती और लड़की की स्थिति समान मानता है, दुनिया अपने लाभ के लिए इनका इस्तेमाल करती है। ये दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू लगती है।

धरती को कहता है माँ भी,

मूल्य लगा के ख़ुश भी हुआ है।

दिशा शून्य है सोन चिरइया,
हर रस्ते सैयाद खड़ा है।

भँवरे ये वो नहीं हैं सौंदर्य के उपासक,
कलियों को अब संभालो मौसम बदल रहा है।

तू दरख़्तों को गिराता तो भला कुछ बात थी
क्या मिला तूफाँ तुझे नाज़ुक कली को तोड़कर।

तिवारी धोखे से सावधान करते हैं, आज के समय में कदम कदम पर धोखा मिलता है। वह आम आदमी की सादगी पर मुग्ध तो है परंतु उसे सचेत करते उनके कई अशआर हैं।

तू संभल कर बात करना, छोड़ दे ये सादगी,
हर किसी ने एक मुखौटा अब यहाँ पहना ही है।

सँभल कर ही उतरना तुम 'विजय' मैदाने उल्फ़त में खिलाड़ी हैं बड़े कोई यहाँ कच्चा नहीं लगता।

चालाक धूर्त है तो वो सम्मान पाएगा,
है सादगी जीवन में तो उपहास हो गया।

विजय तिवारी की शायरी साधारण आदमी के दुःख दर्द, रोज़मर्रा की चक्की में पिसने की कहानी बयान करती है—

हर ओर बँट रहा है फिर भी सवाल है ये,
मिलता नहीं किसी को कैसा बवाल है ये।

तुम मौज में रहोगे तुम खास आदमी हो,
ये आम आदमी है होता हलाल है ये।

नेक नीयत के सभी पासे सदा उल्टे पड़े,
दुष्ट को हर बार ही चौसर में पौबारा मिला।

हिंदी साहित्य अकादमी (गुजरात) द्वारा पुरस्कृत ग़ज़ल संग्रह "आक़ा बदल रहे हैं" के शाइर विजय तिवारी इतना कुछ पा लेने के बाद भी ख़ुद को इस साहित्यिक जगत का एक राही मानते हैं। उनके लिए क़लम की ताकत कुबेर के खज़ाने से भी बड़ी है, इस बात का प्रमाण उनके ये अशआर हैं।

राहे अदब में मुझको मिला है मुक़ाम वो,
मेरे लिए कुबेर की दौलत भी धूल है।

यहाँ रूकने से कुछ हासिल नहीं है,
ज़रा सी छाँव है मंज़िल नहीं है।

तुमको नहीं मालूम है तुम हो अभी नादान,
जन्नत से भी ज्यादा मज़ा है शायरी के साथ।

हम यही दुआ करते हैं विजय तिवारी जी का यह ग़ज़ल संग्रह हर पाठक के दिल की गहराइयों में उतर जाए, वक्त उनके क़लम को और भी अधिक शक्ति दे और शीघ्र अति शीघ्र उनका अगला ग़ज़ल-संग्रह पाठकों के हाथों में हो

मीर, गालिब - सा 'विजय' तुम नाम पाओ
ये दुआ दिल से मेरे निकली हुई है।

- दीपशिखा 'दीप'
वरिष्ट साहित्यकार
सिंध वैली बेकरी
तवाहीड चौक, गाँधरबल, श्री नगर
जम्मू एंड कश्मीर
शिक्षा विभाग में पदस्य

❖

संवेदनाओं की मौन पुकार है - "आक़ा बदल रहे हैं"

–श्रीमान्नारायणाचार्य "विराट"

साहित्य को जीवन की आलोचना कहा गया है, इसमें कवि अपने जीवन में जिये गये हर क्षण, भोगे गये सुखों-दुखों की अनुभवात्मक गठरी को पाठकों के समक्ष खोलकर अनुभूतियों की भाव-व्यंजन मस्तक की थाली में परोसता रहता है। बहुधा साहित्यकार अपनी ही बात को विभिन्न पात्रों व बिंबों के माध्यम से कहलवाते हैं। प्रायः कवि ही स्वयं को प्रतीक बना लेता है और समग्र जीवन का विश्लेषण करता चलता है। ऐसा कहा जाता है कि, "कवि अरु जोगी एक समाना" अर्थात साहित्यकार और सन्यासी दोनों संसार को हमेशा परख कर बुराइयों पर कटाक्ष करने के लिए अग्रसर हो जाते हैं और उसका उपचार खोजने में अपने जीवन को समर्पित कर देते हैं। कवि अपने मन में उठी उलझनों को संघर्षों की भावाभिव्यक्ति के लिए विधा रूपी पंख पहनकर विशाल आकाश में उन्मत्त होकर उड़ान भरता है और अपने आप में खोकर संसार हित सोचता रहता है। साहित्य की अनेक विधाएं है- छंद, गीत, मुक्तक, ग़ज़ल, नवगीत, समीक्षा, कहानी,नाटक, आत्मकथा व संस्मरण आदि।

वर्ष 1950 के पूर्व तक ग़ज़ल एक मनोरंजन का साधन बनी हुई थी। वर्ष 1960 के पश्चात ग़ज़ल जीवन की अभिव्यक्ति एवं रसास्वादन का माध्यम बनीं, तब से ग़ज़ल का नगर से गाँव-गाँव तक जनतंत्रीकरण हो गया। आधुनिक हिन्दी की ग़ज़ल विधा, विशेषकर उसके भाषा, पक्ष, बिंब-प्रतीक के संबंध में ज्ञान का विस्तार हुआ है। इसी समय भारत में स्वतंत्र चेतना के उदय का युग आरंभ हुआ है, आज हिन्दी ग़ज़ल वास्तविक जनजीवन के बीच आकर खड़ी हो गई है।

हिन्दी ग़ज़ल की बात आती है तो दुष्यंत जी को स्मरण किये बिना हम आगे बढ़ नहीं सकते क्योंकि इन्होने ग़ज़ल के सांचे में साकार होने वाले श्रृंगारिक मनोरंजन साधन को, सामाजिक उपचार का माध्यम बनाया। उनके पथ पर हिन्दी ग़ज़लों की परंपरा को अपने मन की न्यास पर सुशोभित किए हुए कवि व्यक्तित्व मनीषी विजय कुमार तिवारी जी है। उन्होंने इस परंपरा को भावी पीढ़ी हेतु मार्ग प्रशस्त करने का दायित्व अपने कंधों पर लिया है।

गुजरात के लब्ध प्रतिष्ठित कवि आलोचक, समीक्षक ग़ज़लकार श्री विजय कुमार जी के द्वारा कई पुस्तक प्रकाशित हुई हैं। "निर्झर", "फल खाए शजर", "आक़ा बदल रहे हैं" आदि ग़ज़ल संग्रहों ने तिवारी जी को अंतरराष्ट्रीय कवि के रूप में यश प्रतिष्ठा दिलायी है। साहित्यकार विजय तिवारी जी द्वारा रचित "आक़ा बदल रहे हैं" ग़ज़ल संग्रह में आधुनिक ग़ज़ल विधा के परंपरागत अनुशासन का पूर्णतः निर्वाहन हुआ और वस्तु बिंब - प्रतीकों में नवीनतम संस्करण करने का प्रबल प्रयास पाठकों को आकर्षित करता है। इनकी लेखनी से विविध विषयों पर अनेक ग़ज़ल हैं जिनमें - सामाजिक सरोकार, आध्यात्म, श्रृंगार, नीतिपरक, राष्ट्रीय चेतना, सांद्र अनुभूतियाँ, विरल संवेदनाएँ, मानवीय मूल्य, राज्याधिकार, युग की अंतर्ध्वनि, जागरुक पीढ़ी के लिए आविष्कृत हुईं हैं। हर ग़ज़ल एक नया संदेश लेकर आती है। शायर के द्वारा शीघ्रता से पन्नों को भरने का तनिक प्रयास भी इस संग्रह में नहीं दिखाई

पड़ता। इस ग़ज़ल संग्रह से गुजरते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि ये ग़ज़लें मन और प्राण से लिखी गई हैं और भावों की गहराई लाजवाब है। प्रत्येक ग़ज़ल में बहुलतम फ़ारसी शब्दों का प्रयोग न करते हुए ग्रामीण आम व्यक्ति के दिल तक पहुँचने के लिए सुगम एवं मानक हिन्दी भाषा को बड़े रोचक ढंग से प्रस्तुत किया है। यह इस संग्रह की सबसे बड़ी विशेषता है कि कवि की सृजनशीलता का कैनवास विस्तृत है, वह सदा विश्व कल्याण की कामना लिए अपनी लेखनी को चलाता है।

मैं कहता हूँ, "संवेदनाओं की मौन पुकार ही ग़ज़ल है"। कवि का हृदय संवेदनशील होता है और उसका जगत व्यवहार पर निक्षेप विशिष्ट होता है। कवि / शायर अंतर्निहित अनेक भीषण झंझावतों को झेलता है और उससे ऊपर उठने की आदर्शवादिता अपनी लेखनी के माध्यम से दिखाता है। इस ग़ज़ल भाषा शैली से विजय जी ग़ज़ल के क्षेत्र में अपनी विशिष्ट छवि बना ली है। उनके भीतर संवेदना की अक्षय सरिता निरंतर बहती रहती है व्यवस्था के भीतर घाव की गहराइयों को तक जाकर विश्लेषण करना इस ग़ज़लकार का लक्षण है। राजतंत्र पर प्रश्न संधान करने की हिम्मत एवं साहस क़लम में होनी चाहिए जो श्रीमान विजय तिवारी में है। उषा काल में हिलोरती सूर्य किरणों की शीर्षक पृष्ठ नव उमंग भरने वाली है। विविध विषयों को स्पर्श करती हुई 89 ग़ज़लों से समीकृत ग़ज़ल संग्रह "आक़ा बदल रहे हैं" हिन्दी साहित्य अकादमी (गुजरात) से पुरस्कृत है। "हे! माँ मुझे वरदान दे" संग्रह की पहली ग़ज़ल से लेकर "सीखकर के हाय ये आदाब बेचने लगे" शीर्षक की अंतिम ग़ज़ल तक अद्भुत समागम युक्त रचनाएँ पढ़ने को मिलती हैं।

इसमें कवि मात्र अपने बारे में वर न मांगकर संसार के ज़रूरतमंदों के लिए अपनी झोली बिछाता है–

हे! माँ मुझे वरदान दे, जग में अपरिमित ज्ञान दे,
दुःख दर्द सबके हर सकूँ, ऐसा अमर एक गान दे।

कहकर माँ भगवती से अज्ञान तिमिर को हरने के लिए प्रार्थना की है।

पश्चिमी सभ्यता तेज गति से फैलती जा रही है युवा उसके मोह में अपनी सभ्यता को निम्नतर समझना कवि को आक्रोश दिलाता है–

पश्चिम की सभ्यता से विज्ञान सीख कर के,
मावस की कालिमा को पूनम बता रहे है।

नकाबपोशी मनुष्यों की दोहरे चरित्र पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं–

एक ना इक दिन तो पर्दा ये उठेगा ही जनाब,
खाल में यूँ शेर की गीदड़ छुपेगा कब तलक/
पहचान आदमी की नहीं कर सकेंगे आप
चेहरा हरेक शख़्स का अब है नकाब में।

युवा पीढी को आगे आकर देश का दायित्व संभालने के लिए सलाह देते हुए विजय तिवारी जी कहते हैं–

बागडोर अब देश की तू थाम ले ऐ नौजवाँ,
बूढ़ी उंगली को पकड़कर तू चलेगा कब तलक।
नहीं है आग सीने में न आँखों में कोई सपना,
शहर भर में कोई भी शख़्स क्यों जिंदा नहीं लगता।
गमों का घोर अँधेरा मिटेगा कहते थे
कहाँ गई है वो क्रांति मशाल पूछेंगे

ऐसा कहा जाता है कि कवि स्वान्तः सुखाय के लिए लिखते हैं परंतु आधुनिक कवि या शायर जग की पीड़ा को जानबूझकर आह्वाहन कर लेता है और संसारिक उलझनों से निपटते हुए आनंदमग्न रहता है।

इस ज़िंदगी में सबसे बडा सुख क़लम का है,
अब तो यही विजय का है आधार इन दिनों।
लगेगा मन यहाँ पे कैसे अपना,
ग़ज़ल गीतों की ये महफ़िल नहीं है।
तुमको नहीं मालूम है तुम हो अभी नादान
जन्नत से भी ज्यादा मज़ा है शायरी के साथ।

समाज की विद्रूपताओं पर कवि अपने व्यंग्य बाण चलाते है–

इस आधुनिक जहान में एटम की बात कर,
रोटी की औ' मकान की चर्चा फिजूल है।
कातिल बना है मुन्सिफ तो फैसला क्या होगा,
तुहमत लगा के मुझ पर मेरा बयान लेंगे।
ये नई तहजीब तो देखो सादगी को खा गई,
खो गई है अब शहर में गाँव की अठखेलियाँ।

नेताओं पर अचूक प्रहार करने हेतु नये नये प्रतीकों के साथ आते हैं–

बडे जहरीले सांपों को पकड़ लेते है लेकिन फिर,
इशारों पर उन्हीं के नाचते मूरख सफेरे हैं।

इस ग़ज़ल संग्रह में विप्रलंभ वियोग श्रृंगार के कई प्रतीक मिलते हैं जो जीवित चित्रण किया है वह पाठक के हृदय को गहराइयों तक झकझोर कर रख देता है –

छल कपट स्वार्थ के घोर जंगल में अब,
प्यार का तो कोई रास्ता ही नहीं।
जिसके जीवन में सबकुछ हमीं थे कभी,
आज कल वो हमें जानता ही नहीं।
तुमको दवा ए दर्द मिला ख़ुश रहो मगर,
हम तो तड़प रहे हैं यहाँ आज बेहिसाब।

मैं घाव अपने दिल के तुमको दिखाऊँ कैसे,
तुमने ही तो दिये थे तुमको बताऊँ कैसे।
बाते वो मीठी-मीठी सौगात ले के मिलना,
विश्वास का बहुत ही गहरा सा जाल है ये।
प्यार के नाम पर प्यार से,
यार देते हैं अब तो जहर।
हजारों ज़ख़्म दिल में पालता हूँ,
मगर हाँ आँख मेरी नम नहीं है।
नुमाईश मत लगा जख़्मों की अपनी,
यहाँ पर कोई भी आदिल नहीं है।

एक ग़ज़ल के एक शेर में आज की एकल परिवार की मानसिकता एवं बढ़ती हुई वृद्धाश्रमों की संख्या ग़ज़लकार को चिंतित करती है तब वह कहता है –

जाता नहीं है आज कोई राम अब वनवास,
जाते हैं वृद्धाश्रम में दशरथ कैकयी के साथ।

जब तक जीवित थे तब तक कोई पूछने वाले होते, सिधारने के बाद शोकाकुल होने से क्या मतलब यह प्रश्न अपने ग़ज़ल में कहते हैं –

मरने पे जिसके कर रहे हैं स्वर्ग की दुआ,
जीते जी उसको चैन से रहने नहीं दिया।

सामाजिक मूल्य का पतन होता जा रहा हैं, विश्वास की हीनता पराकाष्ठा तक पहुँच गयी है आज संसार में एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से धोखा खाते हुए अपेक्षाओं का हरण होता दिखाई दे रहा है इसका ही उल्लेख करते हुए कहते हैं–

धोखे मिले हैं राह में हर इक कदम पे खार,
होता यही है नेक नीयत आदमी के साथ।
चारों तरफ़ हैं कैक्टस काँटे बबूल ही,
उस बागबाँ ने फूल इक खिलने नहीं दिया।
हर तरफ़ यह बवाल कैसा है,
अब न पूछो कि हाल कैसा है।

किसी भी देश या समाज की मूलभूत शक्ति मानसिक स्तर पर रुग्ण एवं शक्तिहीन होगी तो निश्चित रूप से वह समाज भी बाह्य रुग्णता का शिकार हो जाएगा इसलिए युवा पीढी को जागरुक करता है पथ प्रशस्त करने का भरपूर प्रयास अपनी अलग-अलग ग़ज़लों के माध्यम से कवि उन्हें समझाता है और आगे बढने के लिए प्रेरित करता है –

ख़ुद चुना है सफ़र ये अपना तो,
अश्क कैसे मलाल कैसा है।

हारना मत तू कभी हिम्मत जला दीपक,
तिलमिलाएगा अंधेरा खत्म होगी शब

परिश्रम के बिना कुछ नहीं पाने का संदेश छोटी बहर में विजय तिवारी जी बड़े रोचक ढंग से प्रस्तुत करते हैं- "मक्खन कैसे पायेगा, दही तो मथता नहीं"

वृन्द जी की "करत करत अभ्यास ते जड़ मति होत सुजान" पंक्ति को विस्तृत करते हुए कहते हैं–

है, खोज मोती की तभी तो, हर बार गोता मारता हूँ
तू छोड़ दे ज़माने के पीछे पीछे चलना,
कोशिश ये कर ज़माने से आगे जाऊँ कैसे।
रात में तो खूब सोये तान कर ख्वाबों की चादर,
और दिन में वो हक़ीक़त के सितारे ढूँढता है।
यहाँ रुकने से कुछ हासिल नहीं है,
ज़रा सी छाँव है मंजिल नहीं है।

राजनीतिक चालाकियों, प्रशासनिक मक्कारियों एवं सामाजिक अन्यायों से आम आदमी सदैव झूझता रहा उन्हें आज़ादी एवं गुलामी में कोई अंतर दिखाई नहीं पडता। अतः एव कवि / शायर हमेशा भीड़ का प्रतिनिधि होकर सिंहासन से सवाल करता है–

आज़ाद हो गये हैं इस भ्रम में पल रहे हैं,
हम तो गुलाम ही हैं आक़ा बदल रहे हैं।
वे तो पराये थे पर ये रहनुमा हैं अपने,
ग़ैरों से भी ज़ियादा जो हम को छल रहे हैं।

प्रकृति व पर्यावरण के प्रति आस्था रखता व्यंग्य बाण चलाते हैं–

जंगल पहाड़ और नदी सब हैं लापता,
चारों तरफ़ बने हैं मकाँ आज से बेहिसाब।
ये दर्द का हिमालय देखो पिघल रहा है,
सैलाब आ गया है दूषण निगल रहा है।

ग़ज़लकार के तीर अलग-अलग चित्रणों को भेद कर उपदेशात्मक लगते हैं –

भंवरे ये वो नहीं हैं सौंदर्य के उपासक,
कलियों को अब संभालो मौसम बदल रहा है।

किसी कवि ने कहा "फीकी पै नीकी लगे, कहिये समय विचारि" इसी को आगे बढाते हुए शायर कहता है कि समय के महत्व को ध्यान में रखकर बातें करना है क्योंकि समय का पुनरागमन नहीं होता –

समय पर ही मजा देती है बातें चूक मत जाना,
उसी अंदाज से फिर बात दुहराई नहीं जाती।

कवि हमेशा सीमावर्ती हालात पर नज़र रखता है और नेताओं की स्वार्थ - छल-कपट एवं कुटिल लब्धि के कारण आज देश बेचने की स्पर्धा बनी है उन पर कटाक्ष करते हुए कहते हैं–

प्यार से समझाने की भी खत्म सीमाएं हुई,
मानजा वरना मेरा हथियार अब तन जाएगा।

ग़ज़ल संग्रह "आक़ा बदल रहे हैं" में आरंभ से अंतिम ग़ज़ल तक गहन संवेदनशीलता, मानवीय मूल्य, संघर्षमय जीवन के प्रति आक्रोश, देश के प्रति अपार प्रेम आदि सामाजिक सरोकार एवं भावनाएँ ग़ज़ल संग्रह को नितांत संतुलित बनाती हैं। ग़ज़लकार विजय तिवारी जी के पास भाषा तरल और सरल पर पैनी है और मारक भी है। बिना ठाट-बाट के उनकी रचना लोगों की जुबान पर चढ़ जाती है यह इनकी सबसे बडी विशेषता है। "आक़ा बदल रहे हैं" ग़ज़ल संग्रह में प्रकृति है, प्रेम है, दर्शन है, भक्ति है और समाज के कोणों में दबी छिपी समस्याएँ जो कवि की बारीक नज़र से ओझल नहीं हो पायी हैं। रचना रचनाकार और विषय समन्वय में कवि / ग़ज़लकार का व्यक्तित्व एक महती भूमिका का निर्वाह करता है। विजय तिवारी जी की ग़ज़लों का हर शेर अपनी भूमिका को लेकर समृद्ध है। एक श्रेष्ठ रचनाकार का यही लक्षण होता है कि रचनाकार के अलावा रचना ही सबकुछ बोल सके। सद् साहित्य सृजन अपने आप में ही एक पवित्र कार्य है और कवि ने यह पवित्र कार्य जन कल्याणार्थ करने का प्रण लिया है, तो वह निश्चय ही इसमें सफल हुआ है। ग़ज़लकार विजय तिवारी जी को मेरी ओर से बहुत बहुत बधाई।

- श्रीमान्नारायणाचार्य "विराट"
(वरिष्ट साहित्यकार)
निजामाबाद, तेलंगाना राज्य
3-10-355/f/1
rotary nagar, nyalkal road
Nizamabad,-503001
Telangana state

❖

आक़ा बदल रहे हैं गागर में सागर

डॉ. अलका पाण्डेय

इस पुस्तक को जब मैंने देखा तो कुछ नाम की वजह से, कुछ उसके कलेवर की वजह से पढ़ने का मन हुआ और फिर पूरी किताब पढ़ डाली, फिर अपने को रोक नहीं पाई सो लिखने बैठ गई।

इनकी ग़ज़लों में एक नया तेवर है ! एक बेहतरीन ग़ज़ल संग्रह के लिए "विजय तिवारी"जी और उनके पूरे परिवार को विशेष तौर पर उनकी पत्नी और मित्र गण और परिवार के लोगों को दिल से बधाई और साधुवाद। हिंदी साहित्य जगत में इस संग्रह का बड़ी गर्मजोशी से स्वागत किया जाएगा। इसमें कोई दो राय नहीं है !

इसका शीर्षक ही विजय तिवारी जी के अक्स का बिम्ब प्रस्तुत करता है। कभी धारा के साथ कभी धारा के विपरीत चलते हुए अपने अलहदा होने का एहसास कराता है। अपनी ग़ज़लों में उन्होंने आम आदमी के जीवन से जुड़ी घटनाओं को ग़ज़ल में पिरोया है ग़ज़लों में संबंधों की टूटन, प्रेम, मौत का दर्शन, बिखराव, हताशा, अजनबीपन और धोखा, सत्ता की विद्रुपता, और अलगाव के स्वर, वर्तमान सामाजिक विषमता, पति पत्नी के सम्बंधो का बिखराव, बदलती संस्कृति, उसकी पीड़ा, लोगों की जालसाज़ी, अपनों का विश्वासघात, नफ़रत, देशद्रोह की स्थिति को उजागर करने के साथ साथ लेखक ने बड़ी नफासत तरीके से दिखाया है !

इस ग़ज़ल संग्रह में लेखक ने किसी एक विषय को बांधकर नहीं रखा है, प्रत्येक शेर अपनी कहानी कहता है। इसके साथ ही संकेत के माध्यम से उन्होंने समाज परिस्थितियों व पर्यावरण पर ध्यान आकर्षित किया है। जिसमें समाज और देश के प्रति उनका चिंतन दिखाई देता है। शीर्षक के अनुसार ही मुखपृष्ठ है और उसी तरह है पूरी पुस्तक का कलेवर ! इसकी साज सज्जा, लेआउट और छपाई इत्यादि को देखते हुए लगता है कि किसी सधे हुए जौहरी ने बड़े करीने से इस आभूषण को गढ़ा है। तिवारी जी की ग़ज़लों में प्रकृति और मानव जीवन के विविध पक्षों को उन्होंने समाविष्ट किया है उसमें मानव संवेदनाओं की अनुभूति है। जो उन्हें आम आदमी से जोड़ती है। दूसरी तरफ़ लेखक अपने आराध्य गुरु, मात पिता की भक्ति करना नहीं भूलता। यह उसके कवि होने को दर्शाता है। साथ ही साथ कई जगह अपनी प्रियतमा के सौन्दर्य का वर्णन कर तारीफ़ करना नहीं भूलता !

मित्रों संग्रह की रचनाएँ कई रंगों से होकर गुज़रती हैं। इसमें श्रृंगार रस भी है, मिलन रस, विरह की वेदना, यादों की धरोहर और इसमें खेत, खलिहान, पेड़, पौधे, पक्षी, प्रकृति के चित्रण के साथ कुशल कथा व्यथा - सामाजिक शिकवा - शिकायत जैसे तत्व भी अपनी प्रखर संवेदनाओं के साथ मुखरित होते हैं। इनकी शायरी में विविधता देखने को मिलती है।

बड़े सहज व सरल भाषा में "आक़ा बदल रहे है" अपनी विविधता के लिए जाना जायेगा ! निराशाओं के सीलन और अंधेरों के बीच कभी गोते लगाते हुए सकारात्मकता के फूल खिलाते हुए उम्मीदों के रथ पर कवि सवार हो जाता है और नीयति के चेहरे पर लिखी महीन से महीन इबारत को तथा सूक्षम भावों को व्यक्त करता है,

यह तो सर्वविदित है कि जब शब्द दिल से निकलते हैं तो पाठकों के दिल को छू लेते हैं। यही कारण है कि विजय तिवारी की ग़ज़लें हमारे दिलों में अपना स्थान बनाती हैं और हमारे इर्द गिर्द प्रकृति के इर्द गिर्द घूमती नज़र आती हैं। ऐसे में हमें लगता है कि यह तो मेरा शेर है। मेरी ज़िंदगी की बात है। यही कवि को उसकी पुस्तक को सार्थकता प्रदान करता है।

पश्चिम की सभ्यता से विज्ञान सीखकर के,
मावस की कालिमा को पूनम बता रहें है।

बागडोर अब देश की तू थाम ले ऐ नौजवाँ,
बुढी उँगली को पकड़ कर तू चलेगा कब तलक।

इस क़दर दहशत से बच्चा भर गया,
आदमी को देखते ही डर गया है।

मुखौटे पर मुखौटा है कोई सच्चा नहीं लगता ,
किसी से बात करना आज कल अच्छा नहीं लगता।

मुद्दतों के बाद होंठों पर हंसी आई मगर,
हर गली में जाने क्यूं होने लगी रुसवाईयाँ।

लेखक की ग़ज़लों में गेयात्मकता बिम्बात्मकता, काव्यात्मकता है हर दृष्टि से उत्कृष्ट ग़ज़ल संग्रह है उनकी कई ग़ज़लें ...

वो नीम था कड़वा मगर था काम का बहुत,
गमलों के इस युग ने उसे बढ़ने नहीं दिया।

शब्दों का चयन सरल व सहज है। यह ग़ज़ल संग्रह पाठकों को अपनी और आकर्षित करेगा ! लेखक की मौलिकता उनकी ग़ज़लों में दिखाई देती है ! पढ़ने के बाद पाठक अवश्य गुनगुनाते हुए मनन व चिंतन करेगा ! यह बात तय है लेखक को अपनी बात कहने और लिखने का तरीक़ा बख़ूबी आता है। यह बात उनकी ग़ज़लों को पढ़ कर महसूस होता है ! लेखक ने जगह जगह अपने सामाजिक गहरे चिंतन को व्यक्त किया है बहुत ही आत्ममंथन कर ग़ज़लें लिखी हैं। प्रस्तुत ग़ज़ल संग्रह लेखक को बहुत दूर तक ले जायेगा।

मेरी शुभकामनाये हैं विजय जी और उनके पूरे परिवार को बहुत बहुत मुबारकबाद के साथ आप को शुभकामनाएँ। आप निरन्तर लिखते रहें और हिंदी साहित्य को समृद्ध करते रहें।

- डॉ. अलका पाण्डेय
वरिष्ट साहित्यकार
अध्यक्ष एवं संस्थापक
अग्निशिखा मंच
देविका रो हाऊस प्लांट न. ७४ सेक्टर १
कोपरखैराने नवि मुम्बई ४००७०९

❖

बदलते आक़ाओं की बदलती औक़ात

– बिर्ख खडका डुवर्सेली

यह सामान्य मान्यता है कि काव्यकार या ग़ज़लकार व्यक्तिगत हित या स्वार्थ से ऊपर उठकर समाज, देश, राष्ट्र तथा दुनिया के जन हित में जंग छेड़ते हैं; अल्फ़ाजों से, विचारों से और संवादों से और स्थापित होते हैं जन मानस में। शायद यही वजह है कि 'सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः' का संवाद सदा स्वीकार्य है, स्तुत्य है लेखन संसार में चाहे वह कविता हो या कहानी, ग़ज़ल हो या उपन्यास...।

मेरी अल्प जानकारी अनुसार अरबी–फारसी से उर्दू होते हुए हिन्दी के घराँगन तक पहुँची ग़ज़ल प्रियतमा या माशूक़ा से वार्तालाप या उसकी ख़ूबसूरती की प्रशंसा के बयाँ की हद से निकलकर जनदर्द, मानवीय पीड़ा, सियासती खामियाँ, अहितकारी शक्तियों की वृद्धि महसूस करने लगी है और लोकप्रिय होती रही है। अमीर खुसरो से दुष्यंत कुमार तक आते–आते ग़ज़ल ने कई पड़ाव पार किये।

गोरी सोवे सेज पर मुख पर डारे केस,
चल खुसरो घर आपने रैन भई चहूँ देस।

अमीर खुसरो

यहाँ तक आते–आते सूख जाती हैं कई नदियाँ,
हमें मालूम है पानी कहाँ ठहरा हुआ होगा।

हिन्दी ग़ज़ल की फैलती दुनिया में अपनी अलग और विशिष्ट ज़गह दख़ल करने में कामयाब ग़ज़लकारों में अहमदाबाद के श्री विजय तिवारी भी हैं। उनकी ग़ज़लें गाँव की संकरी गलियों से निकलकर भीड़भाड़ वाले शहरों और विधान–सभा तथा संसदों तक जाती हैं – जीवन–संघर्ष में पीडित, शोषित, वंचित तथा घायल जनजन के दुःख–दर्द के आँकडे लेने के लिए अपने ग़ज़ल–संग्रह 'आक़ा बदल रहे हैं' में।

प्रासंगिक होने के कारण यहाँ उल्लेख करना ही होगा कि लगभग दो दशक पहले काव्य–संकलन 'धरा से गगन तक' का संपादन तथा प्रकाशन सन् 1999 ई. में राष्ट्रभाषा हिन्दी की स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर श्री तिवारी के सत्प्रयास में हुआ था, जो गरिमा और गौरव की बात है कि विश्व का पहला अन्तरराष्ट्रीय हिन्दी काव्य कंकलन था। उसमें भारत के प्रायः सभी प्रान्तों तथा विश्व के दस राष्ट्रों के लगभग तीन सौ कवियों की कविताओं का जगह मिली थी। गर्व की बात यह भी है कि कवियों में देश के तत्कालीन कवि प्रधान मंत्री स्वर्गीय अटल बिहारी बाजपेयीजी हिन्दी के वरिष्ठ कवि डॉ. हरिवंशराय बच्चन भी हैं। मेरे लिए अत्यधिक ख़ुशी की बात यह है कि कवि के रूप में मेरी भी उपस्थिति दर्ज हुई है जिसका गर्वबोध मुझे आज हो रहा है।

यह सच है कि जनोन्मुखी या जनदर्दी विचारधारा के विशाल वटवृक्ष के छाँव तले हिन्दी ग़ज़लों की अविरल धारा को और प्रवाहमय बनाने के प्रयास में ग़ज़लकार विजय

तिवारी ने 'आक़ा बदल रहे हैं' ग़ज़ल–संग्रह भेंट करके देश–दुनिया में आई तबदिलियों, सामान्य जन की मुसीबतों, संकट में बेरोजगारों, उपचाररहित ग़रीबों के पक्ष में जोरदार आवाज बुलन्द की है और साहित्य–संसार को अनुपम उपहार भी दिया है। इतना ही नहीं, जीवन के मूल्यों को तवज्जो दी है और सद्भावना के संदेश को सर्वव्यापी किया है।

पूर्वीय काल–परंपरा का सम्मान करते हुए तिवारी जी ने 'आक़ा बदल रहे हैं' में ग़ज़लों की शुरूआत 'हे माँ मुझे वरदान दे' से माँ शारदे से वन्दना की है और दुःख–दर्द हरने का आशीष माँगकर देश के सम्मान को सर्वोपरी माना है –

दुःख दर्द सब के हर सकूँ,
ऐसा अगर इक गान दे।
संसार में सर्वोपरि,
इस देश को सम्मान दे।

अंतिम ग़ज़ल 'सीखकर के हाय ये आदाब बेचने लगे' में भी देश के लिए शहीद हुए वीर जवानों का सम्मान करते हुए देश का अहित चाहने वालों को अच्छी हिदायत दी है –

जा रहे हैं सागरों से मिलने तो उन्माद में
देखिए घड़ियाल अब तालाब बेचने लगे।

देश की खातिर गवाँ दी जान लेकिन राहबर,
उन शहीदों के भी अब तो घाव बेचने लगे।

15 जून 2020 में लद्दाख में चीन के हमले को रोकने में शहीद हुए हमारे वीर सैनिकों की शहादत पर सियासती षडयंत्र रचने वाले भी निकले थे, उनके लिए ये शेर सीख है। ग़रीबों के मसीहा बनकर घड़ियाली आँसू बहाकर सियासती दुकान चलाने वाले देश में आज सक्रिय हैं –

अब मुल्क में कोई भी भूखा नहीं रहेगा,
वो फिर से बीरबल की खिचड़ी पका रहे हैं।

जिस तरह हिन्दी के प्रतिष्ठित प्राचीन कविगण कबीरदास, सुरदास, तुलसीदास ने आम बोलचाल के उर्दू तथा फारसी शब्दों का व्यवहार करने में परहेज नहीं रखा था उसी तरह विजय की ग़ज़लों में आम बोलचाल के उर्दू या फारसी शब्दों का उपयोग यथोचित स्थान में भरपूर हुआ है।

हिन्दी के वरिष्ठ ग़ज़लकार तथा 'अलाव' के संपादक राम कुमार कृषक ने पत्रिका 'समकालीन हिंदी ग़ज़ल'का आलोचना केन्द्रित विशेषांक के संपादकीय अंतर्गत लिखा है – 'ग़ज़ल निश्चय ही एक कलात्मक विद्या है। लेकिन हमें यथासंभव उसके जनोन्मुख मूल्य और प्रतिरोधी चेतना की रक्षा करते हुए उसे संहारक होने से बचाना है।' ग़ज़लकार विजय ने अपनी ग़ज़लों में कलात्मकता को कायम रखते हुए जनोन्मुख मूल्य की रक्षा करने में अपनी भरपूर काबिलियत दिखाई है। देश की सुरक्षा औ' सुव्यवस्था की ओर नवजवानों को अग्रसर होने का संदेश ग़ज़लकार ने स्पष्ट भाषा में दिया है –

बागडोर अब देश की तू थाम ले ऐ नौजवाँ,
बूढी ऊँगली को पकड़कर तू चलेगा कब तलक।
ख़ुद ही कर कोशिश नहीं तो ख़त्म हो जाएगा सब,
अपनी खाति़र दूसरों का मुँह ताकेगा कब तलक।

देश की आर्थिक परिस्थिति को उभारने का लक्ष्य रखकर वाणिज्यव्यवस्था तथा उद्योग के क्षेत्र में खुद्दारी की समझ रखने की हिदायत विजय ने ख़ूबसूरती के साथ दी है। देश में दहशतगर्दों की गतिविधि तथा हमलों से पीड़ित तथा आतंकित जन–जन और शिशु मन का आभास शायद पहले हो गया था, इसलिए ग़ज़लकार ने परेशानी परोस दी है –

इस कदर दहशत से बच्चा भर गया है,
आदमी को देखते ही डर गया है।
मत परेशाँ हो ख़बर कुछ भी नहीं है,
आदमी का क़त्ल कोई कर गया है।

आपत–विपत तथा संकट के समय लोककल्याण तथा परहित की भावना की कदर करके लोकोन्मुखी मूल्य के संरक्षण और संवर्धन में सदा तत्पर हमारी परंपरा के पक्ष में ग़ज़लों को गति भी दी है –

आप पत्थर मारिये बस ये कभी मत पूछिये की,
आदमीयत का फरिश्ता क्यों यहाँ तनहा रहा है।

अब हमको मारने की तरक़ीब और सोचो,
कह दो ज़माने से हम फिर से संभल रहे हैं।

ग़ज़लों में रचनात्मक तथा सकारात्मक सोच को आक़ाओं के आगे रखकर गद्दारी तथा मक्कारी से दूर रहने का परामर्श ग़ज़लकार संदेश के रूप में देते हैं जो आज के युग में जनहित और देशहित के लिए बहुत जरूरी है। किसी समय आजाद भारत के नए शासकों के चरित्र और चाल को उजागर करते हुए दुष्यंत कुमार ने भी कहा है –

कहाँ तो हम था चिरागाँ हर एक घर के लिए,
कहाँ चिराग मयस्सर नहीं शहर के लिए।

इसी स्वर और संवाद को विजय ने अपने शेर में दूसरे लहजे में कुछ इस तरह रखा है–

जीवन की खीर में तो नमक ख़ुद ही भर दिया,
अब पूछते हैं खीर क्यूँ मीठी नहीं लगती।
राहें कठिन तो हैं ही मगर आजकल 'विजय'
नीयत भी रहबरों की अब अच्छी नहीं लगती।

छलकपट से भरी राजनीति, जनहित के ढोंग, शैतानी फितरत, मुल्क की तकदीर से मज़ाक, दहशतगर्दो का राज, मूर्खों के प्रवचन सुनने की बाध्यता, अव्यवस्थित शासन व्यवस्था से संवरी–सजी खबरें जब टीवी चैनल, प्रतिष्ठित समाचार–पत्र सम्मान के साथ पेश करते हैं तो विजय तिवारी का ग़ज़लकार लिखेगा ही, कुछ ऐसा –

कैक्टस, थूहर, धतूरा बो दिये चारों तरफ,
तू बता इस बाग में कैसे कमल मुस्काएगा।

'वसुधैव कुटुम्बकम्' के तर्ज पर लोकहित से हटकर 'विश्वाकाश' की अवधारणा को पल्लवित–पुष्पित बनाने के लिए जब उदारीकरण–निजीकरण–भूमंडलीकरण का दौर चला तो अमीर–ग़रीब के बीच की खाई और गहरी होती जा रही है, अर्थ सम्पन्न अर्थ का अंबार उठाकर अंबानी और अदानी बनते जा रहे हैं तो कर्ज में डुबे ग़रीब किसान आत्महत्या के हकदार बनेंगे ही। इस बढ़ती आर्थिक विषमताओं की ओर ध्यानाकृष्ट करके ग़रीबों और ग़रीबी के प्रति रहमदिली दिखाने की गुजारिश ग़ज़लकार 'विजय' को भी करनी पड़ी –

किसी के ज़ख़्म पर तू भी कभी मलहम लगाके देख,
ज़माने को रूलाया है बहुत अब गुदगुदाके देख।
मुसीबत के अंधेरे एक पल में काँप जाएँगे,
अगर साहस की तीली एक धीरज से जला के देख।

आज़ाद हो गये हैं इस भ्रम में पल रहे हैं,
हम तो गुलाम ही हैं आक़ा बदल रहे हैं।
राहें पतन की हमको गैरों ने जो दिखाई,
हम आज भी उन्हीं पे अफ़सोस चल रहे हैं।

सत्ताच्यूत हुए रहबर जनप्रतिनिधियों तथा सत्तासीन शासकों को अच्छी सीख देने की स्वातिर ही आज़ाद होने के बाद भी पाल रहे भ्रम को उखाड़ फेंकने की हिदायत के साथ आकाओं को नाउम्मीदी की उम्मीदी में बदलने की भी गुजारिश की है ग़ज़लों में ताकि खुद्दारी बढ़े।

आगे सीमित ज्ञान के भरोसे इतना कहने का हक रखता हूँ कि हिन्दी ग़ज़लों में उर्दू, फारसी, हिन्दी लफ़्ज़ो के साथ संस्कृत के शब्दों का उपयोग करके हमारी विरासतीय सम्पदा को सम्मान दिया है। देश के प्रथम पंक्ति के प्रतिष्ठित ग़ज़लकार जनाब अंसार कंबरी ने विजय की ग़ज़लों के लिये जो चार पंक्तियाँ लिखी हैं उन्हें यहाँ उद्धृत कर रहा हूँ।

है तुम्हारी ग़ज़ल न हमारी ग़ज़ल,
सबको लगने लगी आज प्यारी ग़ज़ल।
कहते होंगे कभी मीर, ग़ालिब मगर
आजकल यह रहे हैं तिवारी ग़ज़ल।

- बिर्ख खडका डुवर्सेली
संपर्क : आभा झडकतम
दुर्गामढी, दार्जिलिंग 734003 (प.बं)

❖

मेरी नज़र में 'आक़ा बदल रहे हैं' ग़ज़ल संग्रह

– डॉ. रामेश्वर सिंह

'आक़ा बदल रहे हैं'- ग़ज़ल संग्रह, श्री विजय तिवारी का एक बहुत सार गर्भित ग़ज़ल संग्रह है। साहित्य और समाज दोनों का चोली दामन का संबंध है, इस लिहाज से भी इन ग़ज़लों में प्रस्तुत भाव, विचार, व्यंग्य, जैसे-जैसे इस ग़ज़ल संग्रह को हम पढ़ते हैं, वैसे वैसे इसमें जीवन और जगत की सूक्ष्म विद्रूपता के अनेक पक्ष उभरते हैं। ग़ज़ल की बारीकियों के बीच, अंदाजे -बयां ग़जब है। अपने मन के भावों को हिंदी ग़ज़ल के रूप में जो प्रस्तुत किया है इसमें 89 ग़ज़लों का एक ऐसा गुलदस्ता उभरकर सामने आता है जिसमें समाज की व्यवस्था और अव्यवस्था के बीच मानव मन के अनंत पक्षी भरकर सामने आते हैं तिवारी जी लिखते हैं।

अब मुल्क में कोई भी भूखा नहीं रहेगा,
वह फिर से बीरबल की खिचड़ी पका रहे हैं।
वह भूख से बिलखता था चीथड़ों में लिपटा,
वो इस तरह हमारे किस्से सुना रहे हैं।

ग़ज़ल का हमारे साहित्य में बहुत गहरा प्रभाव पड़ा है उर्दू के आँचल से निकलकर हिंदी के प्रांगण तक का सफर में ग़ज़ल की यात्रा के महत्वपूर्ण पड़ाव उभर कर सामने आते हैं। समाज के भूखे नंगे शोषित दलित लोगों के जीवन के बारे में जो अल्फाज प्रयोग किए गए हैं वे हिंदी ग़ज़ल को एक नई दिशा देते हैं। समाज की व्यवस्था और जीवन के प्रति संवेदनशील नजरिया ग़ज़ल कार की विशेषता बनकर उभरती है। जीवन के प्रति वह सचेत रहते हुए अपनी एक ग़ज़ल में कहते हैं।

हमेशा दर्द ओ ग़म या ज़ख़्म बनकर ही मिलो हमसे,
तभी तुम बन सकोगे दिल में मेरे बैठने लायक।

तिवारी जी की ग़ज़लों में प्रेम और त्याग की भावना बहुत ही सहज ढंग से उभर कर सामने आई है। उन्होंने समाज के लोगों के मीठेपन में छुपे बैमानी के भावों को पकड़ा ही नहीं उसे शब्दों के दर्द में बहाया भी है। वे समाज के नौजवानों को प्रेरित करते हुए, निरंतर सत्य और अहिंसा के रास्ते का अनुकरण करने की बात कहते हैं, पर एक शर्त के साथ। एक स्थान पर उनका एक शेर मुझे बहुत पसंद आया,

तू अहिंसा, प्रेम की बातें करेगा कब तलक,
दोस्ती के नाम पर घातें सहेगा कब तलक ॥

इसका अर्थ यह नहीं है कि ग़ज़लकार समाज के प्रति विद्रोही हो गया है, नहीं वह

शरीफ़ लोगों को सचेत कर नए आदर्शवाद की स्थापना की बात करता है, जहाँ कम से कम अपनी मर्यादा की रक्षा सभी कर सकें। कहीं कहीं जब निराशा का भाव पैदा भी होता है तो वह 'नहीं है आग सीने में न आँखों में कोई सपना' कह कर बात करते हैं। उनकी ग़ज़लों में माँसल और रुहानियत का भाव भी उभरता नज़र आता है। समाज ही एक ऐसा केंद्र है जहाँ से पारिवारिक रिश्तों की टूटन और अनजान लोगों के अपनत्व का भाव शेरों में यत्र तत्र उभरा है।

काट कर के सर मेरा तू तो बहुत पछतायेगा,
राज मैं भी जानता था राज ये खुल जायेगा।

ग़ज़लकार जब भी समाज की विसंगतियों को नंगी आँखों से देखता है तो राजनीति के कुरूप चेहरे से आहत होता लगता है –

बागबां ने ही लगा दी आग जब फुलवारी में,
सिसकियों को कौन फिर बदलेगा अब किलकारी में।

कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि विजय तिवारी जी ने जीवन के प्रत्येक भाव और पक्ष को बहुत बारीकी से उठा कर मुलायम शब्दों में अभिव्यक्त किया हैं। मैं उनके लिखे प्रत्येक शेर को इस सलीके से पढ़ गया मानों यह मेरी ही पीड़ा या भाव हों। इनकी ग़ज़लों में सामाजिक सरोकार, टूटते रिश्ते, घृणा, ईर्ष्या, मिलना, बिछुडना, राजनीतिक गिरावट, नफ़रत, भ्रष्टाचार, धोखा, प्रेम, फ़र्ज आदि भावों को मुखर किया है। ग़ज़लें निश्चित रूप से पाठकों के मन में उतरने का दम रखती हैं। मैं ग़ज़लकार के प्रति अपनी मंगलकामनाएँ पेश करता हूँ।

- डॉ. रामेश्वर सिंह
अध्यक्ष, रूसी भारतीय मैत्री संघ 'दिशा' मास्को (रूस)

❖

ग़ज़लों में डूबे विजय तिवारी

–श्री सुवास दीपक

फारसी से उर्दू और उर्दू से हिन्दी में आई ग़ज़ल, जो अपने प्रारम्भिक काल में केवल प्रेम की अभिव्यक्ति का माध्यम थी, आज समकालीन परिस्थितियों की अभिव्यक्ति का जीवन्त माध्यम बन गई है। चौहदवीं सदी में अमीर खुसरो ने अपनी कतिपय रचनाओं के माध्यम से हिन्दी ग़ज़ल की संभावनाओं का सूत्रपात किया और कालान्तर में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने उसे सिंचित कर विकसित किया। हिन्दी के प्रारम्भिक कवि प्रेमधन, श्रीधर पाठक, रामनरेश त्रिपाठी, निराला,शमशेर, त्रिलोचन आदि के प्रयोगों से जल-मल प्राप्त किया तो हिन्दी ग़ज़ल को हंसराज हरबर, जानकीवल्लभ शास्त्री, रामदरश मिश्र आदि ने नए सौंदर्यशास्त्र का स्वरूप प्रदान किया।

नए अवतार में ग़ज़ल

हिन्दी ग़ज़ल को आम आदमी की जबान देने का श्रेय 70 के दशक के पूर्वार्द्ध में दुष्यन्त कुमार को जाता है। दुष्यन्त कुमार की ग़ज़लों में उनके समय की परिस्थितियों का वर्णन मिलता है। वह आसपास के परिवेश को अपनी ग़ज़ल का विषय बनाते हैं और सामाजिक परिस्थितियों से सीधी मुठभेड़ करते हुए वह समाज में पनप रही संवेदनहीनता और मानवीय संवेदनाओं के ह्रास पर जबरदस्त प्रहार करते हैं।

ग़ज़लकार विजय तिवारी

बीते तीन दशकों से भी अधिक समय से ग़ज़ल रचना में संलग्न बहुप्रतिभाशाली साहित्यकार विजय तिवारी के अब तक तीन ग़ज़ल संग्रह - 1) "निर्झर" (1991), 2) "फल खाए शजर" (1999) और 3) "आक़ा बदल रहे हैं" (2017) प्रकाशित हो चुके हैं। 1999 में प्रकाशित "धरा से गगन तक" (अन्तरराष्ट्रीय हिंदी काव्य संकलन) का उन्होंने सम्पादन किया है। विश्व के 293 कवियों को एक जिल्द में समेटकर प्रस्तुत करना स्वयं में एक कीर्तिमान कहा जा सकता है।

उनके तीनों ग़ज़ल संग्रह व्यापक चर्चित हो चुके हैं।

मेरे पास "आक़ा बदल रहे हैं" संग्रह से ली गई ग़ज़लकार विजय तिवारी की ग़ज़लें हैं जो भिन्न-भिन्न संदर्भों में ग़ज़लकार की चिन्ताओं को और उनकी प्रतिबद्धताओं की अभिव्यक्तियाँ हैं।

ग़ज़ल पर लिखना मेरे लिए उतना ही दुष्कर है जितना कि मुझसे यह पूछना कि आसमान पर कितने तारे हैं। प्रस्तुत विषय के सम्बन्ध में अपनी अज्ञानता के बावजूद कुछ लिखने के विनीत आग्रह से भी बंधा हूँ।

इन ग़ज़लों में समग्र रूप से जो स्वर उभरते हैं, वे हैं- परिवेश में व्याप्त प्रपंच, अन्याय-अत्याचार, शोषण दमन, मक्कारी, मुखौटों की दुनिया, मजहब, साम्प्रदायिकता और आतंकवाद, दोगलापन, अलगाव, नाउम्मीदी का परिवेश, कर्मठता का अभाव, टूटे सपने, फरेबी ताकतों के षड़यन्त्र और इन सभी से जूझने का अनवरत आहवान।

आज मजहब, साम्प्रदायिकता और आतंकवाद के वैश्विक माहौल ने भारतीय ग़ज़लकारों

को उद्वेलित किया है। स्थानीय विसंगतियों, विद्रूपताओं, पाखण्ड, भ्रष्टाचार, राजनीति का गिरता स्तर, देश की सुरक्षा आदि विविध रूपों से उत्पन्न आसन्न संकटों में यह पहचानना जरूरी हो गया है कि राष्ट्र की अस्मिता को छिन्न-भिन्न करने वाली कौन-कौन सी ताकतें हैं। इन प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष ताकतों की पहचान करना भी रचनाकार का दायित्व है। ग़ज़लकार का यह दायित्व बनता है कि इन विद्रूपताओं को अनावृत्त करे।

ग़ज़लकार विजय तिवारी ने लगातार उपरोक्त तमाम बिन्दुओं पर अपनी तीक्ष्ण नज़र रखी है। बदलते समय में मानव मूल्यों में आ रहे बदलाव पर भी अपना नज़रिया व्यक्त किया है। समय और परिवेश के अनुसार अपनी पैनी दृष्टि से लगातार पड़ताल करते हुए अपना आक्रोश व्यक्त किया है यद्यपि आक्रोश व्यक्त करने का उनका लहजा सौम्य ही रहा है। लगता है कि ग़ज़लकार की आवाज़ में तीक्ष्ण आक्रोश नहीं है - स्वर में धीमापन है, केवल शालीन असहमति है।

"हिंदी ग़ज़ल के नये पड़ाव में डॉ. सेवाराम त्रिपाठी (अभिव्यक्तिहिंदी. ओआरजी, रचना प्रसंग - हिंदी ग़ज़ल, 2003) में लिखा है- "ग़ज़ल रूमानी परम्परा से शुरू हुई, लेकिन इसकी विकास यात्रा ने हमें ज़माने के दुःख-सुख के साथ शामिल किया है। जाहिर है कि ग़ज़ल अब हमारे और समय के साथ है। हिन्दी ग़ज़ल में नए-नए स्वर उभर रहे हैं। नए मानक भी बन रहे हैं। इनके कई रंग हैं, कई मिजाज हैं और कई तासीरें हैं। इन ग़ज़लों ने हमारे ज़माने के पूरे संदर्भों को समेट लिया है।"

ग़ज़लकार विजय तिवारी की ग़ज़लों को भी उपरोक्त संदर्भों में देखा जाना चाहिए।

- श्री सुवास दीपक
पो. बा. 36, गांतोक–737101
(सिक्किम)

❖

'आक़ा बदल रहे हैं' एक जीवन्त आईना

–डॉ. अलका अरोड़ा

ग़ज़ल को नया आयाम देने वाले श्री विजय कुमार तिवारी जी का "आक़ा बदल रहे हैं" का प्रथम संस्करण 2017 और द्वितीय संस्करण 2019 में हमारे सम्मुख आया। इस संस्करण के विषय में जितना कहा जाए उतना ही कम है। तक़रीबन 1000 साल पुराने ग़ज़ल के इतिहास को अगर हम देखें तो उस समय की पाई गई उर्दू, फारसी, खड़ी बोली हिंदी, अपभ्रंश, संस्कृत, शौरसेनी एवं अरबी का मिला जुला रूप जिसने ग़ज़ल के भाषा शिल्प की संरचना की वही स्वरूप हमें आज श्री विजय कुमार तिवारी जी के संस्करण "आक़ा बदल रहे हैं" ग़ज़ल संग्रह में पूर्ण रुप से देखने को मिल रहा है। विजय कुमार तिवारी जी ने अपने ग़ज़ल संग्रह "आक़ा बदल रहे हैं" में ग़ज़ल के क्रमिक विकास को ख़ूबसूरत अंदाज में पेश किया है। समकालीन साहित्य की दृष्टि से शायरी के लहजे का जबान का बदलना लाजमी है इसीलिए यह प्रभाव विजय कुमार तिवारी जी के भाषा शिल्प पर पूर्णतया दृष्टिगोचर हो रहा है। सदियों से ग़ज़लें लिखी जा रही हैं। उनकी भाषा पर काव्यात्मक टिप्पणियाँ भी देखने को मिलती है। परंतु विजय कुमार तिवारी जी के ग़ज़ल संग्रह "आक़ा बदल रहे हैं" की भाषा पर ग़ज़ल की दुनिया में इसके सौंदर्य करण को लेकर सभी आलोचकों एवं साहित्यकारों का एकमत होकर यह कहना कि "आक़ा बदल रहे हैं" की भाषा "स्पष्ट अद्वितीय एवं अनुपम है" कोई अतिशयोक्ति नहीं है।

ग़ज़ल को जिस ख़ूबसूरत अंदाज से आप ने "आक़ा बदल रहे हैं" में प्रस्तुत किया है उसे देखते हुए मैं यह अवश्य कहना चाहूँगी की विजय कुमार तिवारी जी ने ग़ज़ल के शिल्प को पारंपरिक तरीके से जो संप्रेषणीयता दी है वह काव्य की ग़ज़ल विधा में बहुत कम देखने को मिलती है।

विजय कुमार तिवारी जी का "आक़ा बदल रहे हैं" में जहाँ एक तरफ़ भाषा शिल्प का तकनीकीकरण, ग़ज़ल का सौंदर्य करण, काव्यात्मकता, व्याकरणता, अलंकारिकता, लयबद्धता उद्घाटित हो रही है वही श्री विजय कुमार तिवारी जी ने समाज के हर क्षेत्र पर अपना आधिपत्य जमाये रखा है वहीं दूसरी और "आक़ा बदल रहे हैं" में हम समाज की कुत्सित मानसिकता, आत्मीय संबंधों में नफ़रत एवं ईर्ष्या, अपनों का विश्वासघात, पारिवारिक बिखराव, सांस्कृतिक अवमूल्यन का दर्द, विद्रूप चेहरों की विकृति, राजनीति के पतन एवं गिरते मूल्यों का पदार्पण भी बहुत ख़ूबसूरती से देख पा रहे हैं। अहमदाबाद की पावन धरती पर रचित "आक़ा बदल रहे हैं" नामक ग़ज़ल संग्रह श्री विजय कुमार तिवारी जी को ग़ज़ल की दुनिया में महत्वपूर्ण एवं सर्वोपरि स्थान दिलाने के लिए अनुपम एवं अद्वितीय समायोजन है।

श्री विजय कुमार तिवारी जी का यह ग़ज़ल संग्रह का अध्ययन करें तो हम पाएंगे कि ग़ज़ल की विविध और बहुरंगी दुनिया में प्रवेश करने के लिए सबसे पहले उनकी इस प्रतिश्रुति को ध्यान में रखना चाहिए कि जहाँ शब्दों की सीमाएं समाप्त होती हैं वहीं से ग़ज़ल प्रारंभ

होती है। समीक्षा की दृष्टि से देखें तो यह विचाराधीन तथ्य हमारे सम्मुख आता है कि विजय कुमार तिवारी जी का यह ग़ज़ल संग्रह में व्यक्त किए गए विचार और उद्गार कोई मामूली समझ नहीं है बल्कि बहुत ही दूर दृष्टि वाली समझ है। आज जहाँ ग़ज़लों में शब्दों की अधिकता मिलती है वही विजय कुमार तिवारी जी का ग़ज़ल संग्रह के परिप्रेक्ष्य से शब्दों को आत्मसात करने का हुनर श्री विजय कुमार तिवारी जी के ग़ज़ल संग्रह में पूर्णता दृष्टिगोचर हो रहा है। ग़ज़ल संग्रह की बात करते हुए हम पाते हैं कि शब्दों पर इतना उत्तम आधिपत्य और भावनाओं को चरितार्थ करता हुआ यह काव्यात्मक ग़ज़ल संग्रह बुनियादी ज़रूरत के रूप में हमारे सम्मुख उद्घाटित हुआ है।

श्री विजय कुमार तिवारी जी का ग़ज़लसंग्रह काव्य बोध हमें प्रश्नकुलता, संवाद धर्मिता, आश्चर्य - विस्मय, व्यंग्य की खूबियाँ, अपने पराए रिश्तों के उतार-चढ़ाव, इत्यादि मूल्यों का निरंतर विस्तार करती प्रतीत होती हैं।

श्री विजय कुमार तिवारी जी का ग़ज़ल संग्रह का उद्देश्य काव्य जगत में साहित्य के क्षेत्र में नई युवा पीढ़ी को काव्य गोष्ठी तथा काव्य सम्मेलन के कार्यक्रम में वरिष्ठ साहित्यकारों एवं कवियों के अनुभव से युवा पीढ़ी को जागरूक कर अपनी काव्यात्मक शैली में ग़ज़ल के उदाहरण से प्रशिक्षित एवं प्रेरित करना तथा समय-समय पर इस तरह के आयोजन करते हुए साहित्य के क्षेत्र में देश विदेशों में प्रतिभाओं को सामने लाना है विजय कुमार तिवारी जी से आग्रह है कि इस गूंचे की ख़ुशबू बनकर ग़ज़लो की रचनात्मकता से साहित्यिक जगत को और महकाये।

विजय कुमार तिवारी जी का ग़ज़ल संग्रह पढ़ने के बाद मेरा मन पुनः अध्ययन के लिए एक बार फिर मचल उठा है। बेहद ख़ूबसूरत प्रस्तुति के साथ **वह दूर जाकर और दिल के पास हो गया, होते हैं दिल के पार तेरे तीर नज़र के, आइए आप मेरा शहर देखिए, ख़ुशबू नहीं गुलों में सभी उड़ गए हैं रंग या फिर हर पल वही बसे हैं मेरी कल्पनाओं में। अकेले में ही हमने कारवां का लुत्फ पाया है। सुनकर के लोग उसको चले आएंगे इधर वो नहीं पाएगा मंजिल जो सहारे ढूंढता है। काँटो के दरमियान रही ज़िंदगी सदा।**

उपरोक्त सभी ग़ज़लों की हिन्दी भाषा माधुर्यता के कारण मिष्ट है। ग़ज़ल के अन्य सोपान पर हमें बहुत ख़ूबसूरत ग़ज़ल पढ़ने को मिली जैसे –

सभी है साथ फिर भी दिल से तन्हाई नहीं जाती। आइए आप मेरा शहर देखिए। उसकी रहमत लगता है बहरी हुई है। हूर क्या है सवाल होता है '। चुप चुप कर सब सहना पड़ा है। ज़िंदगी जीना है तो ग़म में भी हंसना सीख ले।

विजय कुमार तिवारी जी का "आक़ा बदल रहे हैं" ग़ज़ल संग्रह सत्यम शिवम सुंदरम की श्रेणी में आता है अर्थात माधुर्य हिंदी का शिवम है, सौंदर्य हिंदी का सुंदरम है, सुगंध हिंदी का सत्यम है ग़ज़लों को आकर्षण की दृष्टि से देखें तो हम पाएँगे कि सभी ग़ज़लें जितना राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति मिली है उतने ही अंतरराष्ट्रीय आँगन में भी सम्मानित हुई हैं।

सुख सपने के धन सा मिला है। मैं घाव अपने दिल के तुमको दिखाऊँ कैसे। सभी ग़ज़ल संग्रह के उद्यान में ऐसे पुष्प हैं जो माधुर्य सौंदर्य और सुगंध से भरपूर हैं।

आदरणीय श्रीमान विजय कुमार तिवारी जी की उपरोक्त सभी ग़ज़लें हिंदी साहित्य

के उद्यान में खिलने वाले ऐसे पुष्प हैं जिनकी सुगंध अजर अमर है। श्री विजय कुमार तिवारी जी का ग़ज़ल संग्रह - "आक़ा बदल रहे हैं" रोशनी की तरफ़ इशारा करती हुई पुरातन पंथी धुंध को साफ करके काले घने रंगों को अपनी ग़ज़लों की शमा से रोशन कर देती है।

यह एक ऐसा ग़ज़ल संग्रह है जो सामाजिक सरोकार के ताने-बाने में रची बसी ग़ज़लों की वेणी में गुथी प्रतीत हो रही है। उत्कृष्टता की चरम सीमा पर पहुँचते हुए श्रीमान विजय कुमार तिवारी जी का ग़ज़ल संग्रह वैचारिक दृष्टि से काफी उन्नत है जो पाठकों को उद्वेलित करता है। ग़ज़ल संग्रह पुरातन पंथी सभी मूल्यों को तोड़ती हुई नई पीढ़ी को नवीनतम राह दिखाने का आवाहन करती है। असीम नीलेआकाश में खुली हवा जैसा विचरण का अहसास कराती है कि अपने पंख एवं बाहु पाश फैलाओ - बिना डरे दिन हो या रात कठिनाइयों का सामना करो। ग़ज़ल संग्रह में तैर कर यह एहसास होता है कि व्यक्ति के अंतर्मन के भीतर विचरण करने वाली तमाम तार्किक एवं अतार्किक, लौकिक एवं अलौकिक परिस्थितियों से जूझने की अपार शक्ति मिलती है' हर ग़ज़ल अपने से संवाद और संघर्ष करती प्रतीत होती है।

अधिकतर रचनाएँ आदमी की आशा निराशा जैसी चुनौतियों के बीच मानव संवेदनाओं और उनके अलगाव जैसे तमाम भावों को पाठकों तक पहुँचाती हैं।

श्री विजय कुमार तिवारी जी के "आक़ा बदल रहे हैं" ग़ज़ल संग्रह में प्रेम के विभिन्न पक्षों, संबंधों, विसंगतियों, और अभिव्यक्तियों का चित्रण बेबाकी से किया गया है। विजय कुमार तिवारी जी का ग़ज़ल की दुनिया में अद्वितीय अनुपम एवं अविस्मरणीय ग़ज़ल संग्रह है वही श्री विजय कुमार तिवारी जी स्वयं भी उच्च कोटि के राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त सरल एवं निडर व्यक्तित्व के प्रभावशाली लेखन शैली के स्वामी हैं उनके लिए दो पंक्तियाँ मैं अपनी ओर से देते हुए अपनी लेखनी को विराम देती हूं –

तेरी आज़ज़ी तेरी शायरी तेरी हर अदा कमाल है।
मुझे फक्र है मुझे नाज है कि आप बेमिसाल हैं।

- डॉ. अलका अरोड़ा
"लेखिका एवं थिएटर आर्टिस्ट" प्रोफेसर - बी एफ आई टी देहरादून

❖

'आक़ा बदल रहे हैं' यह विडम्बना है

– डॉ. सुषमा चौधरी

विश्व के मूर्धन्य मनीषियों की यह मान्यता है कि उच्च कोटि की कला एवं उत्तम साहित्य वही है जिसमें न केवल मनोरंजन हो अपितु कोई ऐसा मूल्य अथवा जीवन दर्शन भी हो जिसे वह समाज के लिए संप्रेषित करना चाहता है। 'आक़ा बदल रहे हैं' श्री विजय तिवारी जी का अनुपम ग़ज़ल संग्रह है। इसके पूर्व भी आपके दो ग़ज़ल–संग्रह 'निर्झर' एवं 'फल ख़ाए शजर' प्रकाशित हो चुके हैं।

'आक़ा बदल रहे हैं' 'गुजरात हिन्दी साहित्य अकादमी' द्वारा पुरस्कृत ऐसा अद्भुत ग़ज़ल–संग्रह है जिसमें जीवन के विविध पक्षों को दर्शाती 69 ग़ज़लें है। इन ग़ज़लों को कवि ने किसी एक विषय की सीमा–रेखा में नहीं बाँधा है, अपितु कवि की लेखनी जीवन के तमाम उतार–चढ़ावों पर उतराती हुई कभी पर्वत–शिखरों पर तो कभी समतल भूमि पर प्रवाहित होती दिखाई देती है।

इनकी ग़ज़लों में बड़े ही सुन्दर एवं सादगीपूर्ण ढ़ंग से सम्पूर्ण जीवन–दर्शन को उद्घाटित किया गया है। इनमें कहीं प्यार का अथाह सागर हिलोरे मारता दिखाई देता है तो कहीं प्रकृति की घनी छाँव दिखाई देती है। कहीं पर्यावरण के प्रति चिंतन का भाव दिखाई देता है तो कहीं समाज में फैली विसंगतियों की चिन्ता है। कहीं गिरतें नैतिक मूल्यों की पीड़ा हैं तो कहीं समाज व राष्ट्र में फैले भ्रष्टाचार के प्रति आक्रोश की अलूकता है।

प्रेम प्रत्येक हृदय में प्रवाहित होने वाला आनंद का वह स्रोत है जिसे अंतर्मन ही जाना करता है, जिसके सामने सब कुछ फीका लगता है –

देखा है जब से चाँद सा चेहरा वो यार का,
तब से कोई कमी सी लगी माहताब में।।

पर्यावरण के प्रति लोगों का ध्यान आकृष्ट करते हुए कितना सुन्दर लिखा है –

जंगल पहाड़ और नदी सब हैं लापता,
चारों तरफ़ बने हैं मकाँ आज बेहिसाब।।

आधुनिकता के इस दौर में हमारी संस्कृति कैसे नष्ट हो गई है इसकी मिसाल देते हुए कहते हैं –

ये नई तहज़ीब देखो सादगी को खा गई,
खो गई हैं अब शहर में गाँव की अठखेलियाँ।।

तुलसी जला के घर में लगाएँगे कैक्टस,
अब तो यही जहाँ का है व्यवहार इन दिनों।।

मानव जीवन में संबंधो एवं रिस्तों में कितना परिवर्तन हो गया है –

जाता नहीं है आज कोई राम अब वनवास,
जाते हैं वृद्धाश्रम में दशरथ कैकयी के साथ।

हमदर्द मेरा ज़ख़्म यूँ सहला रहा है कि,
उसने कभी भी ज़ख़्म को भरने नहीं दिया।

जाहिल हमे समझकर रहते थे दूर जो भी,
वो ही 'विजय' हमारे चक्कर लगा रहे हैं।

सामाजिक विडंबना तो देखिए कि कैसे अयोग्य लोग भी कहाँ से कहाँ पहुँच जाते हैं–

पहुँचा शिखर पे चढ़ के सिफ़ारिश की सीढ़ियाँ,
फिर भी उसे हुआ है गुमाँ आज बेहिसाब।।

किन्तु इसके बावजूद कवि हृदय 'ज्ञान की देवी' के चरणों में नतमस्तक होकर 'जन–कल्याण' की कामना करता है –

दुःख दर्द सबके हर सकूँ,
ऐसा अमर इक गान दे।।

जीवन की वास्तविकता को स्वीकार करते हुए बहुत ही सुन्दर 'शेर' है –

ग़म ख़ुशी, शिकवे, शिकायत प्यार से मुँह मोड़कर,
एक दिन जाना है सबको दुनियादारी छोड़कर।।

पूरे संग्रह में एक से बढ़कर एक 'उम्दा शेर' पाठक को अन्त तक बाँधे रखते हैं। अपने मनोभावों को अपनी सशक्त लेखनी से जिस अंदाज में लोगों तक पहुँचाया है उसके लिए उन्हें बहुत बधाई तथा अनन्त शुभकामनाएँ।

- डॉ. सुषमा चौधरी
असिस्टेंट प्रोफ़ेसर
कमला नेहरू कोलेज
दिल्ली. विश्व विद्यालय

❖

'आक़ा बदल रहे है' कठोर यथार्थ

–डॉ. मेघना शर्मा

सामाजिक सरोकार को मूल विषय बनाकर रचनाधर्म की ओर प्रवृत्त होना आज के समय की माँग है क्योंकि कोविड-19 के पश्चात सामाजिक ढाँचे के साथ-साथ आर्थिक व वैचारिक परिदृश्य भी तेजी से बदले हैं, ऐसे में विजय तिवारी जी का ग़ज़ल संग्रह 'आक़ा बदल रहे हैं सेतु प्रकाशन अहमदाबाद से 2017 में सद्य प्रकाशित हुआ किंतु लगता है जैसे वर्तमान परिदृश्य से बेहतरीन सरोकार रखते हुए आज के परिप्रेक्ष्य में मुस्तैदी से कदमताल करता स्वयं को पूर्णता के साथ प्रतिस्थापित करने के प्रयास में अपने पथ पर अग्रसर है।

यूँ तो ग़ज़लकार के शेरों को निश्चित परिधि में बांधना बेहद श्रमसाध्य कार्य है किंतु मोटे तौर पर मैंने संग्रह के कुछ प्रमुख स्वरों को खोजते खोजते पाया कि रचनाकार व्यवस्थाओं पर बखूबी कटाक्ष कर रहे हैं जहाँ वे लिखते हैं कि **"फिर इक सुहाना सपना हमको दिखा रहे हैं/ सूई की नोक पर वो हाथी बैठा रहे हैं।"** यह कटाक्ष अपने चरम को प्राप्त करता है इस शेर के साथ कि **"देखिए घड़ियाल अब तालाब बेचने लगे।"** सत्ता कभी बड़बोली होती है, कभी लोकतंत्र के अपहरण करने के प्रयास करती है, कभी डावांडोल होती है, कभी आवाम को मूर्ख बनाती अपने रथ पर यशस्विता के सोपान तय करने का उपक्रम करती है। इन्हीं भावों को समेटे शेर कहता है **"सत्ता की बकरी के आगे शेर को भी तो झुकना पड़ा है।"** एक रचनाकार का धर्म होता है कि वह अपनी निष्पक्ष क़लम के माध्यम से समाज को सत्य का आइना दिखाए। ऐसे ही जिम्मेदारी का निर्वाह करते शेर हैं - **"दोस्ती के नाम पर घातें सहेगा कब तलक / खाल में यूं शेर की गीदड़ छुपेगा कब तलक।"** और **"पहचान आदमी की नहीं कर सकेंगे आप / चेहरा हर एक शख़्स का अब है नकाब में।"**

वर्णाश्रम में चार आश्रमों कि सुव्याख्या के बीच नवधारणा के बीच रोपता शेर है **"आधुनिक विज्ञान वर्णाश्रम पर छाया इस कदर कि / ज़िन्दगी की दौड़ बस पचपन के भीतर आ गई है।"** एक और शेर देखिए जो कहता है कि **"नुमाइश मत लगा ज़ख़्मों की अपने / यहाँ पर कोई भी आदिल नहीं है।"** सबसे महत्वपूर्ण बात जो इस ग़ज़ल संग्रह में देखने में आई वो यह है कि इसके शेर और क़तए भारतीय इतिहास से उदाहरण उठाते हुए आगे बढ़ते हैं। उदाहरण के तौर पर संग्रह की शीर्षक ग़ज़ल को अगर देखें तो उसका क़तआ कहता है कि **"आज़ाद हो गए हैं इस भ्रम में पल रहे हैं। हम तो गुलाम ही हैं आक़ा बदल रहे हैं।"**

एक अन्य शेर आधुनिक इतिहास की घटनाओं के फ्रेम में पीड़ा को कैद करता है जब ग़ज़लकार कहता है कि **"लॉर्ड डलहौजी मैकाले तो कभी के जा चुके / देश के फौलाद को लेकिन वह पारा कर गए / इतिहास है गवाह कि इतिहास लिखा है / झंडे गडे हैं सच के हर इक और ज़फर के।"**

रचनाधर्मिता और सृजनशीलता चिंतन के स्वरों से बखूबी गुज़रती है जब वह अपनी

आह को शाब्दिक जामा पहनाती है - **"पश्चिम की सभ्यता से विज्ञान सीख कर के / मावस की कालिमा को पूनम बता रहे हैं। अभितक हादसे में ही जिया हूँ इसीलिए ही तो / किसी घटना से मेरे दिल को अब धक्का नहीं लगता।"**

दर्द की दास्तान कहता शेर अपनेआप में मुकम्मल हो जाता है जब कहता है कि **"काम पर उसके पुरस्कृत मैं हुआ हूँ / और हर इल्ज़ाम उसके सिर गया है।"** वृद्धजनों की पीड़ा को परिलक्षित करता शेर महाकाव्य काल से जोड़कर कहता है कि **"जाता नहीं है आज कोई राम अब वनवास / जाते हैं वृद्धाश्रम में दशरथ कैकई के साथ।"** एक अन्य शेर में संघर्ष की पराकाष्ठा को प्रस्तुत करती लेखनी कहती है कि **"लकड़ी का गुणधर्म यही है/ जग की खातिर जलना पड़ा है।"** महाकाव्य काल से ही स्त्री विमर्श के स्वर पुरकशिश अंदाज़ से उठाए गए हैं और कहा गया है कि "काँटो भरा जीवन मिला अपमान औ' संदेह / सोचा भी है की क्यों हुआ ये जानकी के साथ।" संग्रह का एक बेहतरीन शेर **"फूलों की महक पत्तों की खनक झींगुर की मधुर झंकार प्रिय / पानी की टिप टिप धुन सुनकर यह प्रेम कहानी लगती है"** श्रृंगार को सहेजता है तो वहीं दूसरा साहस के सिंहासन पर आरोहित होकर कहने को तत्पर दिखाई पड़ता है कि **"मौत से शर्त लगा कर वह मज़ा आया कि, ज़िंदगी और भी मस्ती में जिया करते हैं।"** अंत में यह कहना समीचीन होगा कि रचनाकार ने अपने आसपास हो रहे घटनाक्रम पर पैनी नज़र तो रखी ही है साथ ही साथ उसने भारतीय इतिहास से भी उदाहरण उठाते हुए अपने दृष्टिकोण को पुष्ट किया है, आशावाद का प्रसार करते हुए इस शेर के साथ कि **"सबको यही लगा था अंतिम ही सांस लेगा / वह चोट खा के देखो फिर से संभल रहा है।"**

यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं है कि ग़ज़ल संग्रह 'आक़ा बदल रहे हैं' ना सिर्फ समाज का खाका बदलने का माद्दा रखता है बल्कि सुधार की परिकल्पना और आमूलचूल बदलाव की भरपूर गुंजाइश की संभावना के साथ साहित्याकाश पर ध्रुव के समान उदित होता है। ग़ज़लकार विजय तिवारी जी को शुभकामनाओं सहित.....

- डॉ. मेघना शर्मा
कवयित्री कथाकार
बीकानेर, राजस्थान

❖

'आक़ा बदल रहे हैं'

–डॉ. वर्षा महेश

आज की सुबह यक़ीनन असंख्य विचारों के दिनकर के साथ आई है, क्योंकि कल पूरी रात विजय जी का ग़ज़ल संग्रह आक़ा बदल रहें हैं पढ़ने में बीत गई।

एक कवयित्री होने के नाते मेरे ज़हन में ग़ज़ल तो प्यार की कहानी के रूप में परिभाषित थी, परंतु विजय जी का ग़ज़ल संग्रह तो एक नीले आसमान की भाँति है, जहाँ हर सितारे की एक अनोखी कहानी है। कभी प्यार का सावन, तो कभी आशा - निराशा, तो कभी रिश्तों की उलझन और गागर में सागर भरते हुए कहूँ तो बेशक विजय जी ने कमाल किया है

शब्दों से मन की हर वेदना का इज़हार किया है। विजय जी की भाषा शैली हमारी गंगा-जमुनी तहजीब की मिठास से सराबोर है, कई ग़ज़लों को पढ़कर लगा की में रिश्तों के त्रिवेणी संगम तट पर आ बैठी हूँ।

कुछ ग़ज़लों में बचपन तो कुछ में जवानी के असल मायने झलकते हैं, कई बार लेखक ने प्रकृति से भी प्रेम करो यह संदेश ग़ज़ल के माध्यम से दर्शाया है।

यूँ तो हर ग़ज़ल खूब, हर शे'र लाज़वाब और हर मिसरा बेहिसाब था, परंतु ग़ज़ल के इस गुलशन में जो फूल रूपी शेर हमनें अपने ज़हन में बसाए हैं वो क़लम लिखे जा रहीं है।

देखा है जब से यार का चेहरा वो चाँद सा,
तब से कोई कमी सी लगी माहताब में।

जंगल, पहाड़ और नदी सब हैं लापता,
चारों तरफ़ बने है मकाँ आज बेहिसाब।

ख़ुशियाँ लिखीं थी जिसपे मेरी ज़िन्दगी बता,
क्यों पेज ही नहीं है वो तेरी किताब में।

कुल मिलाकर विजय जी अपने इस संग्रह के लिए बधाई के पात्र हैं और एक शे'र का ज़िक्र करना चाहूँगी जो एक बार फिर जीने की तमन्ना का तरुन्नम अदा करता है।

नहीं है ज़िंदगी मायूस होकर बैठने लायक,
अभी दुनिया में है बाकी बहुत कुछ देखने लायक।

अंततः आक़ा बदल रहें है के बहाने से बहुत कुछ देख लिया हमने क्योंकि

दुनिया के हर पहलू को दिखाया है विजय जी आपने
जख़्मों पे मरहम लगाया है आपने
ग़ज़ल चंद लम्हों की कहानी नहीं साहिब
ग़ज़लों में संसार बसाया है आपने

अशेष शुभकामनाएँ

- डॉ. वर्षा महेश "गरिमा"
कवयित्री एवं लेखिका, मुंबई

अवसरवाद पर घातक प्रहार का अचूक आयुध, "आक़ा बदल रहे हैं"

–डॉ. अवधेश कुमार 'अवध'

न केवल साहित्य समाज का दर्पण होता है बल्कि समाज की दिशा और मानक भी साहित्य द्वारा ही निर्धारित होता है। इसके साथ ही यह कठोर सत्य भी स्वीकार करना होगा कि समाज के प्रभाव से साहित्य अछूता नहीं रह सकता। वैश्विक संस्कृतियों के घालमेल ने उपभोक्तावाद के चंगुल में मानवतावाद को तड़पने के लिए सौंप दिया है। अवसरवाद को कौशल के रूप में परिभाषित किया जाने लगा है। सामाजिक मूल्य अवनति की ओर निरन्तर अग्रसर है। मानव और पशुओं में फर्क मात्र शारीरिक संरचना में रह गया है। ऐसे में लेखनी द्वारा विद्रोह होना स्वाभाविक और आवश्यक भी है।

भारत में क्रान्ति का अग्रदूत सदैव गुजरात रहा है चाहे क्रान्ति किसी भी संदर्भ में हो। भारतीय समाज में मानवीय मूल्यों के उत्तरोत्तर पतन ने अहमदाबाद, गुजरात के ग़ज़लकार श्री विजय तिवारी के मानस को झकझोरकर रख दिया। हाथों में लेखनी गहकर श्री तिवारी ने 121 पृष्ठीय 'आक़ा बदल रहे हैं' रच डाला। 'आक़ा बदल रहे हैं' का दो आशय निकाला जा सकता है। एक अर्थ यह कि हम अपनी जरूरतों के अनुसार अपने आक़ा बदल रहे हैं और दूसरा यह कि समय के सापेक्ष आक़ा ख़ुद को बदल रहे हैं। इन दोनों ही अर्थों में अवसरवाद की सड़ांध है। क़लमकार ने बहुचर्चित ग़ज़ल विधा का चयन किया है। ग़ज़ल विधा मूलतः अरबी में औरत के साहचर्य में पली-बढ़ी थी। उर्दू से होते हुए हिंदी में आई और दुश्यन्त कुमार, गोपाल दास नीरज, आलोक श्रीवास्तव और विजय तिवारी जैसे लोगों ने इसे व्यापक बनाते हुए समाज के हर मुद्दों से जोड़ दिया। ग़ज़ल को गीतिका या सजल का कलेवर प्रदान किया।

'आक़ा बदल रहे हैं' का रचनाकार जर्जर व्यवस्था पर कभी चोट करता है तो कभी असम्भव को सम्भव बनाने की कागजी नीति पर व्यंग्य करता है। भारतीय संस्कार के वशीभूत माँ से सर्व मंगल हेतु विनय करता है तो खोटी नीयत पर भरपूर प्रहार भी। रामराज्य की संकल्पना का भूतलीकरण करने हेतु बेचैन भी हो जाता है। उहापोह की स्थिति में भी धैर्य नहीं खोता वरन प्रयास जारी रखता है। ग़ज़ल में इश्क की चर्चा स्वाभाविक है किन्तु ग़ज़लकार ने इसे मात्र एक औपचारिकता मानकर निभाया है। मूल विषय प्यार से आगे बढ़कर जीवन की चुनौतियों से दो-दो हाथ करना है।

अत्यन्त मनोरम मुखपृष्ठ से सुसज्जित यह द्वितीय संस्करण बरबस ही चित्ताकर्षण करने में समर्थ है। विषय की विविधता से रोचकता सदैव कायम है। उर्दू के मोह से शायर अनुरक्त नहीं है। यदा-कदा आवश्यकतानुसार सामान्य बोलचाल के शब्द स्वतः आकर यथास्थान व्यवस्थित हो गए हैं। चमत्कार के चक्कर में दुरूह बनाने की बीमारी से रचनाकार पूर्णतः मुक्त है।

माँ की बंदना से आगे बढ़ती हुई पुस्तक इश्क के समंदर में गोते खाती हुई युवापीढ़ी का आह्वान करती है। रामराज्य का आह्वान करती है और फिर जीवन की न केवल प्राकृतिक बल्कि मानव निर्मित विषमताओं (कैक्टस) को ललकारती हुई सर्वे भवन्तु सुखिन: के सुखद स्वप्न को साकार करने हेतु कर्मभूमि में उतर जाती है। परिवर्तन की आस और आत्मनिर्भरता के लिए युवा पीढ़ी का आह्वान करता है शायर–

बागडोर अब देश की तू थाम ले ऐ नौजवाँ,
बूढ़ी उंगली को पकड़कर तू चलेगा कब तलक।
मार पंजा शेर सा भाषा यही समझेगा वो,
भैंस के आगे यूँ ही गीता पढ़ेगा कब तलक।

शीर्षक को सार्थकता प्रदान करने का हुनर इस शायर की विशेषता है। व्यंग्य और सीख से चोली और दामन सा साहचर्य बनाये हुए हैं। हर व्यंग्य का उद्देश्य सीख है। 'पर उपदेश कुशल बहुतेरे' और देश-दुनिया से बेखबर रहने को चरितार्थ करती हुई पंक्तियाँ देखें–

फिर इक सुहाना सपना हमको दिखा रहे हैं,
सुई की नोंक पर वो हाथी बिठा रहे हैं।
जीवन के खंडहरों की हर ईट गिर रही है,
ऐसे समय में भी वो मल्हार गा रहे हैं।

समय की नब्ज को टटोले बिना कोई क़लमकार टिकाऊ नहीं हो सकता। 'आक़ा बदल रहे हैं' के रचनाकार श्री विजय तिवारी जी एक सुलझे हुए आक्रामक क़लमकार हैं। कब और कहाँ कितनी चोट करनी है जिससे परिस्थिति को सुगमता और सहजता से अपने अनुकूल बनाया जा सके, ठीक से आता है। वर्तमान परिवेश को समझने और व्यंग्य में निहित सीख को आत्मसात कर अमलीजामा पहनाने से नि:संदेह ही समाज को उचित दिशा मिलेगी। पाठकों के दिल के किसी कोने में स्थान पाना ही इस कृति का लक्ष्य है। आशा ही नहीं वरन पूर्ण विश्वास है कि प्रबुद्ध पाठक सुखद सानिध्य का सुअवसर अवश्य देंगे।

- डॉ. अवधेश कुमार अवध
समीक्षक, संपादक व अभियंता
मेघालय

❖

'आक़ा बदल रहे है' वैश्विक परिदृश्य में

– डॉ. अन्नदा पाटनी

ग़ज़ल मूलत: फ़ारसी की काव्य विधा है। फ़ारसी से वह उर्दू में आई। ऐसा माना जाता रहा की ग़ज़ल प्रेम की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम थी और प्रेमी और प्रेमिका के बीच एक बातचीत का मोहक अंदाज मानी जाती थी। पर समय बीतते उसमें समाहित प्रेम के अलावा और भी कई विषयों का समावेश कर दिया गया।

हिंदी ग़ज़ल ने भी अपनी पहचान बनाने की कोशिश की है। हिंदी ग़ज़ल को शिखर तक लाने का श्रेय दुष्यंत कुमार को जाता है। उनका योगदान ग़ज़ल के क्षेत्र में अनमोल है। दुष्यंत के अलावा शमशेर बहादुर सिंह, अदम गोंडवी, गोपाल दास नीरज, विश्वनाथ, शेरगंज गर्ग, त्रिलोचन सहित अन्य कवियों ने भी ग़ज़ल विधा पर हिंदी में कार्य किया है। अब नित नए ग़ज़लकार उभर कर सामने आ रहे हैं। ऐसे ही ग़ज़लकार हैं श्री विजय तिवारी। प्रसन्नता की बात है कि अहमदाबाद निवासी श्री विजय तिवारी जी ग़ज़ल की विधा के सभी मापदंडों पर खरे उतरे हैं। वे अपना ग़ज़ल संग्रह 'आक़ा बदल रहे हैं' साहित्य जगत के पटल पर लेकर आए हैं। हिंदी साहित्य अकादमी (गुजरात) द्वारा इस संग्रह को पुरस्कृत किया गया है।

यह प्रशंसनीय है कि श्री विजय तिवारी भारतीय परंपरा को निभाना नहीं भूले हैं। उन्होंने माँ सरस्वती के चरणों में अपने संग्रह को अर्पण कर ग़ज़लों का आग़ाज़ किया है। वे विनती करते हुए कहते हैं :–

हे माँ मुझे वरदान दे,
जग में अपरिमित ज्ञान दे।
दुख दर्द सबके हर सकूँ,
ऐसा अमर इक गान दे।

श्री विजय तिवारी की ग़ज़लों की विशेषता यह है कि वे प्रेम और श्रृंगार तक सीमित नहीं हैं अपितु इनमें अनेक विषयों का समावेश किया गया है। वे सामाजिक परिस्थितियों पर भी अपनी लेखनी चलाते हैं। जिस तरह की मानसिकता लिए लोग फिर रहे हैं उस पर करारी चोट करते हुए वे कहते हैं :–

फिर इक सुहाना सपना हमको दिखा रहे हैं ।
सूई की नोक पे वो हाथी बिठा रहे हैं ।

हर ज़िक्र पे 'विजय' के वो खिलखिला रहे हैं,
मैं जानता हूँ हँसकर आँसू छिपा रहे हैं ।

जीवन के खँडहरों की हर इट गिर रही है,
ऐसे समय में भी वो मल्हार गा रहे है ।

हमारा देश गांधी के सिद्धांतों का सदा से पक्षधर रहा है। पर जैसी परिस्थितियाँ देश में बन रही हैं उसमें गांधी की प्रासंगिकता संदेहों से घिर गई है। उनका पढ़ाया अहिंसा का पाठ बेमानी सा लगने लगा है क्योंकि लोग उसका सही अर्थ ही नहीं समझ पाए हैं॥ तभी तो विजय तिवारी अपने शेरों के ज़रिए संदेश दे रहे हैं :–

तू अहिंसा, प्रेम की बातें करेगा कब तलक,
दोस्ती के नाम पर घातें सहेगा कब तलक ।

बागडोर अब देश की तू थाम ले ऐ नौजवाँ,
बूढ़ी उँगली को पकड़कर तू चलेगा कब तलक ।

गांधी के एक गाल पर चाँटा मारने पर दूसरा गाल आगे करने के प्रसंग पर विजय तिवारी जी अपनी प्रतिक्रिया इन चंद शेरों में ज़ाहिर कर रहे हैं :–

सामने मक्कार हो तो बातकर ललकार कर,
सर झुकाए मौन यों बैठा रहेगा कब तलक ।

तुझमें है सामर्थ तो मुँह तोड़ उसको दे जवाब,
खाल में यूँ शेर की गीदड़ छुपेगा कब तलक ।

गांधी के समय में लोग संवेदनशील होते थे इसलिए उन्होंने हृदयपरिवर्तन पर जोर दिया था। आज स्थिति यह है कि लोग दूसरों की पीड़ा से उदासीन हो गए हैं। संवेदनशीलता और असहृदयता ने उन्हें भावनाशून्य बना दिया है। शहीदों की शहादत को भुनाने से भी वे नहीं चूकते। इसीलिए विजय तिवारी जी व्यथित हो कर कह उठते हैं।

अभी तक हादसे में ही जिया हूँ इसलिए ही तो,
किसी घटना से मेरे दिल को अब धक्का नहीं लगता ।

नहीं है आग सीनों में न आँखों में कोई सपना,
शहर भर में कोई भी शख़्स क्यों ज़िन्दा नहीं लगता ।

फिर आगाह करते हुए कहते हैं—

संभलकर ही उतरना तुम 'विजय' मैदाने उल्फ़त में,
खिलाड़ी हैं बड़े कोई यहाँ कच्चा नहीं लगता ।

चारों ओर डर का ऐसा माहौल फैल गया है कि बच्चे बड़े सब दहशत में जी रहे हैं। हत्या लूटपाट आम बात हो गई है। आदमी ही आदमी के ख़ून का प्यासा हो चुका है। यह दुरूह हालात विजय तिवारी जी अपने इन शेरों में बयां कर रहे हैं :

इस क़दर दहशत से बच्चा भर गया है,
आदमी को देखते ही डर गया है ।

मत परेशाँ हो ख़बर कुछ भी नहीं है,
आदमी का क़त्ल कोई कर गया है ।

हालात हाथ से निकल गए हैं। जब कुछ कहने और विरोध करने का समय था तो आदमी चुप रहा। इसी आशय से तिवारी जी इस शेर में खीज कर कहते हैं–

मौन तू साधे रहा जब बोलना था,
कुछ नहीं होगा कि अब अवसर गया है ।

विजय तिवारी जी की ग़ज़लों में देश के हिंसक और आतंकवाद के प्रति चिंता है जो उनके शेरों में अनेकों बार व्यक्त होती है।

हर ओर हैं संहार के औजार इन दिनों,
दुनिया तो बन गई है अब बाजार इन दिनों ।

वे महसूस करते हैं कि कुछ न कर पाने की असहाय स्थिति में अपनी भावनाओं को मूर्त रूप देने के लिए लेखनी ही सशक्त माध्यम बन सकती है ।

इस ज़िन्दगी में सबसे बड़ा सुख क़लम का है,
अब तो यही 'विजय' का है आधार इन दिनों ।

एक जागरूक नागरिक के नाते देश की चिंता होना स्वाभाविक है। तिवारी जी की अनेक ग़ज़लों में यह चिंता मुखरित हुई है। पर ग़ज़लों की प्रमुख विशेषता श्रृंगार को वह नहीं भूले हैं। उनके बहुत से शेरों में अपनी माशूका के लिए तरह तरह से अपने प्रेम के बड़े रूमानी अंदाज देखने को मिलते हैं। हर प्रेमी या प्रेमिका अपने इश्क का इज़हार चाँद और सूरज के प्रतीकों का सहारा लेकर करते आ रहे हैं। विजय तिवारी जी भला पीछे कैसे रहते। वह कहते हैं :–

देखा है जब से यार का चेहरा वो चाँद-सा,
तब से कोई कमी-सी लगी माहताब में ।

मैं बात दिल की उनको सुनाऊँ तो किस तरह,
रुक जाती है ज़ुबाँ, वो कशिश है जनाब में ।

मयकदा जाम की कोई भी ज़रूरत ही नहीं,
जाम बातों के ही कानों से पिया करते हैं ।

इन हवाओं पे तेरा नाम लिखा करते हैं,
दूर तक साथ में फिर उसके उड़ा करते हैं ।

यह शेर भी प्यारा है

मैं चेहरे को उनके कमल लिख रहा हूँ,
बदन को मैं स्वर्णिम महल लिख रहा हूँ ।

इनके अलावा और न जाने कितने प्यारे प्यारे शेर हैं जहाँ प्रेम में दीवानगी नज़र आती है। कहाँ कहाँ क्या क्या क़सीदे पढ़ रहे हैं ग़ज़ल के इन शेरों की बानगी देखिए :

सरापा उन्हें और क्या मैं कहूँ बस,
मुसलसल मुकम्मल ग़ज़ल लिख रहा हूँ ।

हमें छेड़ना और खुद रूठ जाना,
शरारत तभी वो पहल लिख रहा हूँ ।

लोग बरसात में जन्नत-सा सुकूँ पाते हैं,
और इक हम हैं कि बारिश में जला करते हैं ।

विजय तिवारी जी की प्रेम और श्रृंगार से प्रेरित ग़ज़लों की ख़ूबसूरती यह है कि कहीं भी प्यार के इज़हार में अश्लीलता नहीं है। एक मासूमियत है जो उसे शालीनता की श्रेणी में खड़ा कर देती है। तभी तो वह कहते हैं :–

माना कि लाजवाब नशा है शबाब में,
लेकिन न पाँव बहके इसे रख हिजाब में ।

विजय तिवारी जी मानते हैं कि कभी कभी आदमी भूल कर बैठता है पर उसे ग़लती का भान हो जाए और वह स्वयं को संभाल ले, यह बड़ी बात है । अपने इस शेर में उनका कहना है :

ग़लती सुधार लेना भी अपना उसूल है,
माना तुम्हें ख़ुदा ये हमारी ही भूल है ।

किसी भी व्यक्ति के मन में अपने आस–पास घटित होती घटनाओं से संबंधित अनेक प्रश्न घुमड़ते हैं। ऐसे ही प्रश्न तिवारी जी की ग़ज़लों में मचलते हैं

बुरा न मान तू हम तो सवाल पूछेंगे,
हुआ है चार सू कैसा ये हाल पूछेंगे ।

ग़मों का घोर अँधेरा मिटेगा कहते थे,
कहाँ गई है वो क्रान्ति मशाल पूछेंगे ।

यहाँ पे दूध की नदियाँ थीं, खेत सोने के,
गया कहाँ पे वो जाहोजलाल पूछेंगे ।

दिया खिताब अगर आपने 'विजय' को तो,
उसी के यार हजारों सवाल पूछेंगे ।

हमारे देश में राजनीति कब से दाँव पेंच खेलती आ रही है। मज़हब और राजनीति के मसले अलहदा थे पर आज राजनीति मज़हब में दख़लन्दाज़ी कर उसका रूप बिगाड़ रही है। हमारे मानवीय और पारिवारिक मूल्यों में तेज़ी से गिरावट आई है। विजय तिवारी जी की ग़ज़लों में यह विसंगति उभर कर आई है।

आदमी के बीच बेहद बढ़ रही हैं दूरियाँ,
आज कैसी हो गई है मज़हबी गहराईयाँ ।

दूर मुझको ले गई माँ से मेरी मजबूरियाँ,
गूँजती है आज भी कानों में मीठी लौरियाँ ।

ये नई तहज़ीब देखो सादगी को खा गई,
खो गई हैं अब शहर में गाँव की अठखेलियाँ ।

आधुनिक ढंग से सजाया जा रहा है बाग़ को,
ख़ून से ही है लबालब बाग़ की सब क्यारियाँ ।

प्रकृति की ताक़त को भी विजय जी कम न समझने की चेतावनी देते हैं :

इन धरा की धीर को समझो न तुम ख़ामोशियाँ,
इसके भीतर हैं उबलती पौरूषी चिनगारियाँ ।

आदमी कितना भी व्यस्त रहे, कहीं भी रहे, भौतिक चकाचौंध में रहे, यादें कभी पीछा नहीं छोड़ती। स्मृति पटल के द्वार पर आ आ कर बार बार दस्तक देती रहतीं हैं।

आज भी यादें तेरी दिल को लुभाती हैं बहुत,
बचपने के दिन सुहाने गाँव की अमराईयाँ ।

मैं अकेला था मगर यादों के मेले साथ थे,
आज दश्ते आदमी में हैं बहुत तनहाइयाँ ।

आज भी हैं याद मुझको वो सुनहरे दिन 'विजय',
हर तरफ़ जब रोशनी थी साथ थी परछाइयाँ ।

'कह दिया तो कह दिया ' बड़ी मीठी ग़ज़ल है। चंद शेर नहीं, पूरी की पूरी ग़ज़ल पढ़ने लायक है। बानगी देख लीजिए :

ज़िंन्दगी भर पत्थरों की ही तरह जीता रहा,
आइना उसको मगर अब कह दिया तो कह दिया ।

बाकी की ग़ज़ल का पूरा आनंद स्वयं लीजिए।

विजय तिवारी जी की ग़ज़लों की ख़ासियत है कि उन्होंने ख़ुद्दारी को तरजीह दी है। वह कहते हैं :

तूफ़ान हो आँधी हो या क़ुदरत का कोप हो,
दीपक मगर सच का कभी बुझने नहीं दिया ।
तन्हा रहे औ' मुश्किलों का सामना किया,
हर हाल में सर को कभी झुकने नहीं दिया ।

इसमें संदेह नहीं कि विपरीत परिस्थितियों से जूझते हुए मनुष्य स्वयं उनसे बाहर आ

सकता है। यह उसकी समस्या है तो निदान भी उसके पास है। विजय तिवारी जी अपने शेरों में उसमें साहस का संचार कर पुरुषार्थ करने को प्रेरित करते हैं। ऐसी दुविधा वाली परिस्थिति में अपना विवेक से काम लेने की नसीहत देते हुए शेर कहते हैं :

नहीं है ज़िन्दगी मायूस होकर बैठने लायक,
अभी दुनिया में है बाक़ी बहुत कुछ देखने लायक ।

किसी से भी यहाँ उम्मीद सच्चाई की है बेकार,
बना ख़ुद को ही तू हर झूठ-सच को आँकने लायक ।

नियम ऐसे बनाओ तुम 'विजय' हो बस तुम्हारी ही,
तभी बन पाएगा यह खेल यारों खेलने लायक ।

इसके अलावा वह लोगों को आगाह करते हुए भी कुछ ग़ज़ल कहते हैं। धोखा, बेईमानी, छल कपट से दूर रहने को भी कहते हैं। कहीं आशा की बात करते हैं तो कहीं निराश भी नज़र आते हैं। फिर निराशा से उबरने की बात भी है कुछ ग़ज़लों में। उनके कुछ शेरों में यह स्पष्ट हो जाता है कि न तो उन्हें मौत का डर है, अपनी कमियों के प्रति एक सकारात्मक रवैया है और समाज से लड़ने की क्षमता भी है। देखिए ये शेर:

अब निराशा न कभी लौट के फिर आएगी,
तेरी तसवीर से हम बात किया करते हैं ।

मौत से शर्त लगाकर वो मज़ा आया की,
ज़िन्दगी और भी मस्ती में जिया करते हैं ।

मेरी तक़दीर में कालिख भी अगर है तो 'विजय',
उसके चेहरे पे बनूँ तिल ये दुआ करते हैं ।

विजय तिवारी जी ने विरोधाभासी परिस्थितियों का उल्लेख अपनी ग़ज़लों में किया है जब वे लिखते हैं :

विश्व शांति के नये हल का असर भी देखिए,
हर तरफ़ होने लगी है जंग की तैयारियाँ ।

विजय तिवारी जी के पूरे ग़ज़ल संग्रह 'आक़ा बदल रहे हैं ' नाम के अनुरूप ऐसे शेरों की भरमार है जिसमें बदलते हुए मानदंड, देश में फैली विसंगतियाँ, आपसी सूझबूझ की कमी, प्रेम के बदलते स्वरूप तथा जीवन के विभिन्न पहलुओं को समाहित करने का प्रयास किया गया है।

इसीलिए इस संग्रह का कैनवास बहुत बड़ा हो गया है जिस पर विजय तिवारी जी ने कुशल चितेरे की भाँति अपनी कूँची चला कर अनेक चित्र बनाए हैं। विभिन्न प्रकार के रंग भर कर अपनी भावनाओं को इन्होंने उकेरा है। मुझे पूरा विश्वास है कि आशंकाओं, भावनाओं और संवेदनाओं पर रचित ग़ज़लें पाठकों के हृदय को अवश्य ही छुएँगीं और ग़ज़लों

के रूप में सदा बसी रहेंगी।

मरने के बाद भी हम ज़िन्दा 'विजय' रहेंगे,
हम गीत औ' ग़ज़ल में ढलते रहे सदा ही ।

इस संग्रह का आवरण मोहक है, छपाई स्पष्ट है। श्री विजय तिवारी जी द्वारा रचित ग़ज़ल संग्रह 'आक़ा बदल रहे हैं' की भाषा सरल, पारदर्शी और सुपाठ्य है। श्री विजय तिवारी जी अपने विविध रंगी ग़ज़ल संग्रह के लिए निश्चित ही बधाई के पात्र हैं।

- डॉ. अन्नदा पाटनी
वरिष्ठ प्रवासी साहित्यकार
मैरी लैंड, वॉशिंगटन डीसी,
अमेरिका

❖

'आक़ा बदल रहे हैं' ग़ज़ल संग्रह एक नज़र

– डॉ. सुभाष भदौरिया

अहमदाबाद साहित्यालोक संस्था की पचासवीं वर्षगांठ पर श्री विजय तिवारी के ग़ज़ल संग्रह **आक़ा बदल रहे हैं** पुस्तक के विमोचन पर्व पर बहैसियत समीक्षक के रूप में पुस्तक का विहंगावलोकन करने का अवसर मिला। ग़ज़ल उर्दू कविता का सशक्त काव्य स्वरूप है। संकेत और संक्षेप में दो पंक्तियों में गागर में सागर भरने की कला ग़ज़ल में निहित होती है। वास्तव में ग़ज़ल का मतलब होता है इश्किया अशआर कहना, औरतों से बातचीत करना प्रियतमा से वार्तालाप। ग़ज़ल में निहित प्रेम समाज स्वीकृत न होकर अवैध्य प्रेम है। उर्दू कवि मीर तकी मीर से लेकर ग़ालिब, मोमिन दाग से बशीर बद्र तक ग़ज़ल में महबूबा के रूप सौन्दर्य ही नहीं उसकी बेवफ़ाई का रोना भी है। उर्दू ग़ज़ल की लोकप्रियता ने देश की अन्य भाषाओं के रचनाकारों को अपनी ओर आकर्षित किया।

गुजराती भाषा में तो सौ साल से ज्यादा गुजराती ग़ज़लों का इतिहास देखने को मिलता है। परन्तु कालान्तर में ग़ज़ल के वर्ण विषय प्रेम के साथ साथ ही सामाजिक चेतना, राजनैतिक विंसगतियों को रचनाकारों ने अपनी ग़ज़लों का वर्ण विषय बनाया। दुष्यंत कुमार के ग़ज़ल संग्रह **साये में धूप** ने हिन्दी रचनाकारों खासकर गीतकारों को कथ्य के रूप में इतना आकर्षित किया कि सब राजनैतिक सामाजिक विसंगतियों पर खुले आम प्रहार करने लगे।

श्री विजय तिवारी का ग़ज़ल संग्रह **आक़ा बदल रहे हैं** साये में धूप संग्रह की तरह मौज़ूदा देश के हालात का चित्र वही का वही है कुछ भी नहीं बदला।

आज़ाद हो गये हैं इस भ्रम में पल रहे हैं।
हम तो गुलाम ही हैं आक़ा बदल रहे हैं।।
वे तो पराये थे पर, ये रहनुमां हैं अपने,
ग़ैरों से भी ज़ियादा जो हमको छल रहे हैं।
गुजरात में भी अब तो होने लगी है हिंसा,
गांधी की भूमि पर ही इन्सान जल रहे है।

(पृष्ठ 46)

श्री विजय तिवारी गुजरात के अहमदाबाद शहर में रहते हैं उन्होंने गुजरात अहमदाबाद को बहुत नज़दीक से देखा ही नहीं भोगा भी है। तभी अपनी अन्य ग़ज़ल में मौज़ूदा हुक्मरानों से सीधा धारदार सवाल करते हुए कहते हैं।

बुरा न मान तू हम तो सवाल पूछेंगे।
हुआ है चार सू कैसा ये हाल पूछेंगे।।

यहाँ पे लहलहायेंगी ख़ुशी ये वादा था,
मगर ज़मीन खूँ से क्यों है लाल पूछेंगे।

(पृष्ठ-24)

विजय तिवारी सिर्फ अपनी ग़ज़लों में सवाल ही नहीं पूछते ज़िम्मेदार लोगों की शिनाख़्त भी करवाते हैं साथ ही साथ भविष्य के प्रति आगाह भी करते हैं देखिये–

हर ओर हैं संहार के औज़ार इन दिनों।
दुनिया तो बन गई है अब बाज़ार इन दिनों।।

लायेंगे राम राज्य यहाँ फिर से भेडिये,
भेड़े मगन हैं सुन के समाचार इन दिनों।

रंज़ो अलम अब और भी गहरायेंगे अभी,
वो फिर जता रहा है बहुत प्यार इन दिनों।

(पृष्ठ-18)

जैसे सांपनाथ वैसे नागनाथ, एक डाल डाल दूजे पात पात वाला हाल आज देखने को मिल रहा है। लोगों ने क्या सोचा था क्या हो गया। दिन पे दिन हालात बदतर हो रहे हैं। लम्हों ने खता की थी सदियों ने सज़ा पायी वाला मंजर है विजय अपनी ग़ज़ल में इस तरह बयान करते हैं–

टुकड़े ज़मीं के करके गुलामी चलो गई।
जाते हुए वो बीज मगर विष के बो गयी।।

इस क़ाफ़िले को राह तो मिल ही गई थी पर,
इन रहबरों की भूल भुलैयों में खो गई।

(पृष्ठ-110)

विजय तिवारी अहमदाबाद शहर में रहते हैं शहरी शख़्शियत को भली भांति पहिचानते हैं। शहरी संस्कृति में दो मुँहापन, झूठ, फैशन, दिखावा, दग़ा, अब हुनर बन चुके हैं। जो इसमें जितना माहिर है उतना दिन दूनी रात तरक्की कर रहा है। विजय इस खोखलेपन को पहिचानते हैं तभी ये कहने को मज़बूर हो जाते हैं–

मुखौटे पर मुखौटा है कोई सच्चा नहीं लगता।
किसी से बात करना आजकल अच्छा नहीं लगता।।

अभी तक हादसों में ही जिया हूँ इसलिए ही तो,
किसी घटना से मेरे दिल को अब धक्का नहीं लगता।

(पृष्ठ-16)

शहरी जन आमने सामने मिलने पर खीसे निपोरते हुए सपरिवार हाल चाल पूछना और पीठ पीछे गरिहाना। विजय इस गिरगिट की तरह रंग बदलने वाले नर नारी किन्नर सभी को ही भाँप कर मौन रहने में ही भलाई समझते हैं। वे इस दुख के स्वंय भोक्ता हैं मात्र दर्शक नहीं तभी अपनी ग़ज़ल में इस दर्द को यूँ बयाँ करते हैं–

तक़दीर ने हमको कभी हँसने नहीं दिया।
इक अश्क भी हमने मगर गिरने नहीं दिया।।

मरने पे जिसके कर रहे हैं स्वर्ग की दुआ,
जीते जी उसको चैन से रहने नहीं दिया।

आएँगे फिर से लौट के मेरे ही पास वो,
हमको इसी उम्मीद ने मरने नहीं दिया। (पृष्ठ 36)

आयेंगे फिर से लौट के मेरे ही पास वो हमको इसी उम्मीद ने मरने नहीं दिया। शेर दिल की अथाह गहराइयों से निकली आह है। जैसा कि सब जानते हैं ग़ज़ल में हर शेर में शायर अपने अलग अलग विषय के ब्रह्मांड को समेटे हुए चलता है। विजय भी इसी इश्किया रंग को उपरोक्त शेर में बयां कर गये। ग़ज़ल में व्यक्त किया गया दुख जब समष्टिगत हो जाता है तब उसकी मारक क्षमता और भी बढ़ जाती है। ग़ज़ल में जो सुनता है उसी की दास्ताँ मालूम होती है। शायद इसी लिए ग़ज़ल विधा अन्य काव्य विधाओं से कही ज़्यादा प्रचलित और प्रसारित हुई। मात्र देश की भाषाओं में ही नहीं लोक बोलियों में भी जानदार ग़ज़लें कहीं गयी हैं। गुजराती भाषा के प्रख्यात कवि मुसाफिर पालनपुरी ने गुजरात के शहर पालनपुर में मुस्लिम समुदाय द्वारा बोली जाने वाली हिन्दी गुजराती मिश्रित खिचड़ी लोक भाषा में बहुत ही प्रभावशाली ग़ज़लें कहीं है.

विजय अपनी अन्य ग़ज़ल में महबूब को याद करते हुए कहते हैं–

इन हवाओं पे तेरा नाम लिखा करते हैं।
दूर तक साथ में फिर उसके उड़ा करते हैं।।
लोग बरसात में जन्नत सा सुकूँ पाते हैं,
और इक हम हैं कि बारिश में जला करते हैं। (पृष्ठ 21)

बारिश में जलने का लुत्फ सब को नहीं मयस्सर होता। ग़ज़ल में जो जिस प्रेम का जिक्र आता है वह खोया हुआ प्रेम हैं। ग़ज़ल मिल जाय तो ग़ज़ल नहीं होती ग़ज़ल खो जाये तो ग़ज़ल होती है। संयोग से ज्यादा वियोग के क्षण जान लेवा होते हैं प्रेम का नशा जब चढ़ता है तो होशोहवास के साथ ख़ुद के भी जाने की तैयारी शुरू हो जाती है। विजय भी इसी वेदना को यों व्यक्त करते हैं–

आजकल अब तो कुछ सूझता ही नहीं।
हम कहाँ हैं हमें कुछ पता ही नहीं।।

छल, कपट, स्वार्थ के घोर जंगल में अब,
प्यार का तो कोई रास्ता ही नहीं।

जिसके जीवन में सब कुछ हमीं थे कभी,
आजकल वो हमें जानता ही नहीं। (पृष्ठ 39)

वियोग के साथ साथ विजय तिवारी की ग़ज़लों में संयोग के चित्र भी मनमोहक बन पड़े हैं–

आप आये हैं जब से जीवन में।
है तभी से बहार मधुवन में।।

तेरे आने से वो ख़ुशी आयी,
मोर नाचेंगे मेरे आँगन में

(पृष्ठ - 280

विजय तिवारी व्यवसाय से शिक्षक हैं। शिक्षा क्षेत्र में गुरू महिमा से भलीभांति परिचित ही नहीं भोक्ता भी हैं तभी अपने अनुभव के आधार पर कहने को कितने विवश हैं –

कब तक वो जाने मेरा यूँ इम्तहान लेंगे।
इसके बहाने शायद वो मेरी जान लेंगे।।

मैं जानता नहीं था रणभूमि में गुरूजन,
मुझसे ही छीन मेरा तीरो कमान लेंगे।

(पृष्ठ 23)

अच्छे और सच्चे गुरू शिष्य को बढ़ता देख ख़ुश होते हैं तीरो कमान नहीं छीनते पर अच्छे और सच्चे गुरू नसीब बालों को ही मिलते हैं।

विजय तिवारी की **आक़ा बदल रहे हैं** ग़ज़ल संग्रह की ग़ज़लों को समग्र रूप से देखने पर कहा जा सकता है कि उनकी ग़ज़लों में कथ्य के साथ साथ शिल्प में भी वैविध्य है। ग़ज़ल में क़ाफ़िया, रदीफ़ के सहजता के निर्वाह के साथ साथ प्रायः अधिकतर उर्दू बहरों का सहजता से निर्वाह करते हैं। विजय की ग़ज़लों का शिल्प कसा हुआ है उन्होंने एक उम्र ग़ज़ल साधना में खर्च की है। उर्दू, गुजराती हिन्दी ग़ज़लों के अध्ययन विश्लेषण ने उनकी ग़ज़ल प्रतिभा को निखारा है।

उर्दू की मशहूर बहरे रमल मुसम्मन महज़ूफ़ का उदाहरण देखिये। निम्न ग़ज़ल में फाइलातुन - फाइलातुन फाइलातुन फाइलुन के रुक्न प्रत्येक मिसरे में इस्तेमाल हुए हैं–

हादसों का है शहर अब कह दिया तो कह दिया।
हाँफता है हर बसर अब कह दिया तो कह दिया।।

ज़िन्दगी भर पत्थरों की ही तरह जीता रहा,
आइना उसको मगर अब कह दिया तो कह दिया।।

जानी दुश्मन है मेरा मैं जानता हूँ ऐ 'विजय',
पर उसे जाने जिगर अब कह दिया तो कह दिया।

(पृष्ठ - 27)

इसे आसानी के लिए दुष्यंत कुमार की मशहूर ग़ज़ल हो गई है पीर पर्वत सी पिघलनी चाहिए. साये में धूप (पृष्ठ - 30) समझें. शहर, बसर, मगर, जिगर के क़ाफ़िये के साथ अब कह दिया तो कह दिया की लंबी रदीफ़ का इस्तेमाल किया गया है। ग़ज़ल के प्रारम्भ की दो पंक्तियां जिसमें क़ाफ़िया (प्रास, तुक) और रदीफ़ (अनुप्रास शब्द का वो टुकड़ा जो निरंतर हर शेर में बार बार आता है रदीफ़ कहलाता है) होते हैं उसे ग़ज़ल का मतला कहते हैं. इसके बाद में आने वाली दो पंक्तियां जिसके पहली पंक्ति में क़ाफ़िया रदीफ़ नहीं होते परंतु उसकी दूसरी पंक्ति में क़ाफ़िया, रदीफ़ का आना आवश्यक है। ऐसी दो पंक्तियों को शेर कहते हैं।

शायर ग़ज़ल में कम से कम 1 मतला 4 शेर तो कहता ही है। 7 से ज्यादा शेरों की भी ग़ज़लें कहीं गयी हैं। पर प्रायः अच्छे से अच्छा ग़ज़लगो 5 या 7 शेरों में ही निपट जाते हैं बाद के शेर भर्ती के शेर हो सकते हैं। हासिलें ग़ज़ल शेर तो कोई ही होता है। ग़ज़लकार जिस आखिरी शेर में अपने उपनाम (तखल्लुस) का प्रयोग करता है उसे मक्ता कहते हैं। विजय तिवारी अपनी ग़ज़लों में अपने उपनाम विजय का उपयोग करते हैं। उन्होंने अपनी **आक़ा बदल रहे** संग्रह में सभी 89 ग़ज़लें मक्ते के साथ कही हैं। आजकल खासकर हिन्दी ग़ज़लों में मक्ते का उतना प्रचलन नहीं जितना उर्दू ग़ज़लों में पाया जाता है स्वर्गीयदुष्यंत कुमारजी ने अपने साये में धूप संग्रह की तमाम ग़ज़लें बिना मक्ते की ही कही हैं।

उर्दू की मश्हूर बहरे मुतदारिक मुसम्मन सालिम जिसके प्रत्येक मिसरे में वजन – फाइलुन फाइलुन फाइलुन फाइलुन है का बड़ी सहजता से निर्वाह किया है देखें–

ज़िन्दगी में तो इतना करो कम से कम।
झूठ में एक सच भी कहो कम से कम।।

ख्वाब में भी मसीहा न बन पाओगे,
पहले तुम आदमी तो बनो कम से कम। (पृष्ठ-41)

विजय की सर्वाधिक पसंदीदा बहर संयुक्त बहर निम्न है जिसके प्रत्येक पंक्ति में वजन मफऊल - फाइलातुन-मफऊल फाइलातुन निम्न ग़ज़ल के मिसरे देखें–

मैं घाव अपने दिलके तुमको दिखाऊँ कैसे?
तुमने ही ये दिये हैं तुमको बताऊँ कैसे?

बेहाल है चमन औ' फूलों में है उदासी,
पंछी के जैसे ऐसे मैं चहचहाऊँ कैसे। (पृष्ठ-64)

आक़ा बदल रहे हैं संग्रह की अधिकतर ग़ज़लें इसी बहर में कहीं गयीं हैं (इसे आसानी के लिए सारे जहाँ से अच्छा हिंदोस्ता हमारा का वज़न समझें. उर्दू की कठिन बहरों का भी विजय तिवारी ने अपने ग़ज़ल संग्रह में प्रयोग किया है जिसे नौसिखिया ग़ज़लकार नहीं कर सकते - उर्दू की मश्हूर बहरे मुजतस मुसम्मन मखबून महज़ूफ का इस्तेमाल देखिये इसके अरकान प्रत्येक मिसरे में इस प्रकार हैं–

मफऊल-फाइलात - मफाईल फाइलुन–

हमने तो कोई राज़ छिपाया नहीं कभी।
और तुमने अपना हाल बताया नहीं कभी।।

उस शख़्स का करें तो करें एतबार क्या,
वादा कोई भी जिसने निभाया नहीं कभी।

वो बागबानी के हमें सिखला रहा है ढंग,
पौधा कोई भी जिसने लगाया नहीं कभी।

(पृष्ठ-106)

विजय ने अपनी एक उम्र ग़ज़ल को दी है। ग़ज़ल के कथ्य और शिल्प को लेकर संजीदा भी हैं ग़ज़ल के परंपरागत रंग प्रेम के साथ साथ वर्तमान राजनीति, समाज, दुर्दशा के साथ संघर्ष के स्वर भी मुखरित हुए हैं पर बकौले फिराक गोरखपुरी

उम्र भर का है तज़र्बा अपना,
उम्र भर शायरी नहीं आती।

ऐसा नहीं कि विजय से ग़ज़लों में चूक नहीं हुई जैसे **आक़ा बदल रहे हैं** संग्रह की आखिरी ग़ज़ल के शेर की प्रथम पंक्ति

देश की ख़ातिर गवां दी जान लेकिन राहबर (फाइलातुन फाइलातुन - फाइलातुन - फाइलुन है) पर दूसरे मिसरे में,

उन शहीदों के भी अब तो घाव बेचने लगे. पंक्ति पहले मिसरे के वजन पर नहीं है। वास्तव में उपरोक्त ग़ज़ल के मतलें को अगर शिल्प की दृष्टि से बारीकी से न देखें तों कथ्य बहुत ही जानदार है जैसे

सीखकर के हाय वे आदाब बेचने लगे।
नाख़ुदा मझधार में ही नाव बेंचने लगे।।

विजय तिवारी के **आक़ा बदल रहे हैं** ग़ज़ल संग्रह का यह शेर देखिए –

मैं जा रहा हूँ स्वर्ग में डरता हुआ बहुत,
उससे कहीं पे भूल हुई है हिसाब में।

(पृष्ठ-19)

बकौले ग़ालिब नुक्ताची है ग़मे दिल उसको सुनाये न बने वाले हम नहीं। सिर्फ हमारी नज़र नुक्श पर नहीं खसूसियत पर भी रही है। विजय ने ग़ज़ल को साधा है साथ ही उनकी ग़ज़लों में युगबोध के साथ राजनैतिक सामाजिक विसंगतियों के भी स्वर मुखरित हुए हैं रही इश्क मुहब्बत की बात तो बकौले मीरतकी मीर.

हम हुए तुम हुए की मीर हुए.
उसकी ज़ुल्फों के सब असीर हुए.

विजय भी उसकी झुल्फों से कैसे बच सकते हैं। अच्छी बात ये है कि झुल्फों में असीर कैद हो के नहीं रहे। उन्होंने अपनी ग़जलों में लोगो के साथ मुल्क की फिक्र की है। 'आक़ा बदल रहे हैं' ग़जल संग्रह को पढ़कर तो यही राय बनती है। अंत में अल्लाह करे ज़ोरे क़लम और ज्यादा।

डॉ. सुभाष भदौरिया
प्रिंसीपल
सरकारी आर्टस कॉलेज शहेरा
जिला पंचमहाल - 389210 गुजरात

❖

एक शोधात्मक निबन्ध-कृति - साहित्य, साहित्यकार और वैश्विक धरोहर

– डॉ. किशोर काबरा

गद्य कवि की विवशता है। कोई भी कवि स्वेच्छा से गद्य नहीं लिखता, उससे गद्य लिखवाया जाता है। गद्य लेखक के लिए कविता करना अनिवार्य नहीं है, पर प्रत्येक कवि को गद्य से कहीं न कहीं जुड़ना पड़ता है। संसार गद्य से चलता है और कवि को संसार के साथ चलना पड़ता है। श्री विजय तिवारी अच्छे ग़ज़लकार हैं, गीतकार हैं, दोहाकार हैं। उनके **निर्झर**, **फल खाए शजर**, और **आक़ा बदल रहे हैं** जैसे चर्चित ग़ज़ल संग्रह तथा **धरा से गगन तक** शीर्षक से अंतरराष्ट्रीय हिन्दी काव्य संकलन को लोगों ने सराहा है और ग़ज़लकार - गीतकार की इमेज इनके आसपास एकत्र हुई है। ये मंच के अच्छे कवि और संचालक भी हैं, पर विभिन्न अवसरों पर, विभिन्न आग्रहों के कारण, विभिन्न प्रतिबद्धताओं से जुड़कर इनके द्वारा लिखे गए शोध-पत्रों, अनुलेखों, चिन्तनात्मक निबन्धों और विवरणात्मक आलेखों को ये **साहित्य, साहित्यकार और वैश्विक धरोहर** शीर्षक से शोधात्मक निबन्ध-कृति के रूप में लेकर उपस्थित हुए हैं। इनमें लेखकीय श्रम है, शोधात्मक सतर्कता है, शिक्षकीय दायित्व है, सम्पादकीय व्यवस्था है और है चुनौती स्वीकार करने का आत्म संतोष।

ग्रंथ में संस्कृत के प्रकांड विद्वान और गुजरात युनिवर्सिटी के संस्कृत विभागाध्यक्ष प्रो. कमलेश चोकसी जी ने **शुभाशंसा** के रूप में लेखक और उसके सारस्वत श्रम की सराहना की है। उन्होंने बड़ी ही तात्विक दृष्टि से सभी आलेखों को परखा है और लेखकीय श्रम की प्रशंसा की है। हिन्दी विभागाध्यक्ष डॉ. निशा रम्पाल ने विजय तिवारी के बहुआयामी व्यक्तित्व की सराहना की है और कृति के आलोचनात्मक विश्लेषण को पसंद किया है। डॉ. सुनिल कुमार ने कृति के सभी आलेखों की केन्द्रीय भावभूमि की चर्चा करके लेखकीय श्रम पर सन्तोष प्रकट किया है। स्वयं लेखक ने **मन की बात** शीर्षक में आत्मकथन में इन आलेखों की पृष्ठभूमि को स्पष्ट करते हुए बताया है कि परिस्थितियों एवं अनिवार्यताओं ने गद्य की नई खिड़की खोली हैं। ये अपने गद्य से संतुष्ट हैं, प्रसन्न हैं, आशान्वित हैं।

अपनी सहधर्मचारिणी कुसुम को समर्पित इस निबन्ध कृति में लेखक ने 14 आलेख लिए हैं। विषय, कथ्य, चिन्तन, इतिहास-बोध, विधा, भाषा एवं शोध की दृष्टि से इन आलेखों को पाँच विभागों में बाँटा जा सकता है। संदर्भ की दृष्टि से मैं प्रत्येक विभाग में आए निबन्धों की संक्षेप में चर्चा कर रहा हूँ।

पहले विभाग में कवियों और उनकी कृतियों के निरूपण को लिया जा सकता है। **सूरदास और उनका काव्यात्मक आभामंडल** शीर्षक आलेख में लेखक ने सूरदास के व्यक्तित्व और कृतित्व को केन्द्र में रखकर विस्तार से एक-एक तथ्य को सामने रखा है। जन्मतिथि, जन्मस्थान, जन्मान्धता, पारिवारिक-परिवेश, गुरु की खोज, एवं कृष्ण-चरित्र के भागवताधार को लेकर लेखक ने बड़े ही विस्तार एवं शोधपूर्ण तरीके से उदाहरणों और उद्धरणों

का सहारा लेकर विषय को समझाया है। एक अच्छे शोधात्मक आलेख के रूप में इसकी गणना की जा सकती है। **कबीर : बहुआयामी प्रतिभा के धनी** शीर्षक आलेख में कबीर के सम्पूर्ण व्यक्तित्व को बड़े निखालस तरीके से प्रस्तुत किया गया है। लगता है जैसे पूरा कबीर साहित्य एवं हजारी प्रसाद द्विवेदी का चिन्तन यहाँ आधार बना है। **पद्मावत में पौराणिक पात्र-कथा निरूपण** में लेखक को खूब परिश्रम करना पड़ा है। क्योंकि पद्मिनी और रत्नसेन की सिंहल-चित्तोड़ कथा में कहीं भी रामायण-महाभारत के संदर्भ नहीं हैं, कोई पौराणिक पात्र वहाँ नहीं है। लेखक ने चुनौती पूर्ण दायित्व लेकर सादृश्य विधान और दृष्टांत योजना के अन्तर्गत मूल पौराणिक कथा, पात्र एवं अन्य संदर्भों को खोजने का प्रयत्न किया है। शोध की दृष्टि से ये तीनों आलेख स्तरीय माने जा सकते हैं।

दूसरे विभाग में उर्दू साहित्य और उससे जुड़े प्रसिद्ध शायरों के कृतित्व की समीक्षा हुई है। **विराट व्यक्तित्व के ग़ज़ल गो - फ़िराक़ गोरखपुरी** में लेखक ने बताया है कि इश्किया शायरी के विरुद्ध प्रगतिशील साहित्य एवं बाद में साम्यवादी चिन्तन से निराश होकर फ़िराक़ साहब ने प्राचीन एवं नवीन के बीच उच्चतम प्रेम काव्य से स्वयं को जोड़े रखा और एक अच्छे शायर की तरह प्रतिष्ठा प्राप्त की। **पं. ब्रज नारायण चकबस्त के कलमी खाके** में आशिक माशूक के चोंचलों से बाहर निकलकर देशभक्ति, प्रकृति चित्रण एवं युगबोध से जुड़नेवाले चकबस्त की लेखक ने बड़ी प्रशंसा की है। शब्दों के सही और सटीक प्रयोग के लिए सदा जाने जाते रहेंगे। उनके द्वारा किए गए **रामायण** के उर्दू अनुवाद को भी पूरी दुनिया ने सराहा है। **उर्दू साहित्य में कौमी एकता** के अन्तर्गत लेखक ने कौमी एकता और उसके लिए किए गए शायरों के प्रयत्न को सराहा है, साथ ही यह भी सिद्ध किया है कि यह प्रवृत्ति सभी भाषाओं में दृष्टिगोचर होती है। लेख के अन्त में फ़िराक़ गोरखपुरी की **कौमी एकता** कविता देकर हमारे दुमुँहेपन पर अच्छा व्यंग्य किया है।

विजय तिवारी ने धर्म, समाज एवं व्यक्तिगत जीवन की प्रश्नावलियों के भीतर जाकर उनके उत्तर भी ढूँढ़े हैं। **वैश्विक धर्म : अपने कर्तव्य का पालन** में उन्होंने धर्म और कर्तव्य की एकता बताते हुए भगवती चरण वर्मा के उपन्यास **चित्रलेखा** एवं श्रीमद्भगवद्गीता के **कर्मण्येवाधिकारस्ते** – श्लोक के संदर्भों को बड़े ही रोचक शिल्प के साथ प्रस्तुत किया है। दोनों ग्रंथों के सार को जैसे लेखक ने आत्मसात कर लिया है। रेखा चित्र जैसा बोध भी होता है आलेख में। **चलो भगवान बनें** शीर्षक आलेख में लेखक ने बताया है कि विश्व के विभिन्न धर्मों, सम्प्रदायों, मतों एवं मान्यताओं में ईश्वर की परिभाषा ढूँढ़ी जाती है, लेकिन सही अर्थ में भगवान किसे कहते हैं - इसे अपने मन के भीतर उतर कर समझना चाहिए। वस्तुत: देव और दानव मनुष्य के भीतर ही छिपे हैं। सद्गणों का विस्तार और विकास ही भगवान बनना है। इसी तरह **ज़िन्दगी में शॉर्टकट कितना ज़रूरी** आलेख में भागदौड़ और आपाधापी के इस युग में शॉर्टकट पद्धति को अपनाने की जैसे होड़ लगी है। लेखक इस प्रवृत्ति को अत्यंत हेय मानता है और सहज जीवन तथा पुरुषार्थ के संयोग को श्रेष्ठ समझता है।

चौथे विभाग में लेखक ने राष्ट्रभाषा, साहित्य में प्रकृति चित्रण, गुजरात के हिन्दी गीतकार एवं दक्कनी भाषा के गुजराती कवि वली गुजराती जैसे हाशिये के विषयों पर अपनी क़लम चलाई है। **हमारी राष्ट्रभाषा और हमारी राष्ट्रीय अस्मिता** में सांस्कृतिक गौरव तथा

ऐतिहासिक पहचान को आगे रखकर लेखक ने राष्ट्रभाषा हिन्दी के सभी आयामों की चर्चा की है। राजभाषा, संपर्क भाषा, राष्ट्रभाषा जैसे त्रिकोणों में उलझे प्रश्नों को भी सुलझाते हुए हमें राष्ट्रीय अस्मिता से जोड़ने का प्रयत्न करता है लेखक। इस आलेख में विभिन्न विद्वानों एवं चिन्तकों के विचार देकर वह हमें आश्वस्त भी करता है। **साहित्य में निरूपित प्रकृति चित्रण** आलेख प्रकृति के विभिन्न रूपों एवं आयामों के विवरणों एवं उदाहरणों से युक्त है। लेखक ने कुछ प्रसिद्ध एवं चर्चित कवियों की रचनाओं के प्रकृति विषयक उद्धरण दिए हैं। **गुजरात के समकालीन हिन्दी गीतकार** के अन्तर्गत इस प्रदेश में रहकर हिन्दी की सेवा करने वाले गीतकारों के दायित्व बोध और श्रम को सराहा गया है। लेखक ने बताया है कि गुजरात में हिन्दी गीतों की लम्बी एवं समृद्ध परम्परा रही है। इस आलेख में लगभग सभी प्रतिष्ठित समकालीन हिन्दी गीतकारों को स्थान दिया गया है और उनके कृतित्व को उदाहरणों एवं व्याख्याओं द्वारा समझाया गया है। विजय जी स्वयं गीतकार हैं अतः इस आलेख में वे अपने-आपको ईमानदारी से अभिव्यक्त कर पाए हैं। आलेख में एक अच्छा गीतात्मक परिवेश निर्मित हुआ है। राजनैतिक अस्थिरता एवं सामाजिक अराजकता तथा जीवन के शाश्वत चिन्तन के साथ लेखक ने स्वयं को भी खँगाला है। **वली गुजराती : फ़न और शख्सियत** आलेख में दक्कनी के श्रेष्ठ शायर वली गुजराती के व्यक्तित्व-कृतित्व को सराहा गया है। बिम्बों- प्रतीकों एवं मिथकों से युक्त वली की शायरी आम आदमी की शायरी बन गई है।

व्यक्ति-व्यक्तित्व एवं कृति - कृतित्व जैसे विषयों से अलग हटकर लेखक ने एक महानगर को भी अपने आलेख का विषय बनाया है। यह प्रसन्नता, गौरव एवं रोमांच प्रदान करने जैसी बात है। **वैश्विक अस्मिता : अहमदाबाद** शीर्षक आलेख को मैं पाँचवे विभाग में रखता हूँ। लेखक चूँकि स्वयं अहमदाबाद में रहता है और यहाँ की संस्कृति, जीवन - पद्धति, एवं वैश्विक उपलब्धि से पूरी तरह परिचित है, अतः इस आलेख को उसने पूरी तन्मयता से लिखा है। **वर्ल्ड हेरिटेज** में इस महानगर का सम्मिलित होना छोटी-मोटी बात नहीं है। वर्षों की तपस्या एवं प्रतीक्षा इसके पीछे छिपी है। लेखक ने अहमदाबाद का पूरा इतिहास दिया है, दर्शनीय स्थलों एवं ऐतिहासिक महत्व के स्थापत्यों का विस्तार से परिचय दिया है और इस महानगर की **पोल - संस्कृति** की भूरी - भूरी प्रशंसा की है। कई संस्कृतियों के संगम जैसे इस महानगर को भाईचारे, कौमी एकता एवं उद्योग - व्यवसायों के लिए विश्वभर में जाना जाता है। वस्तुत: अहमदाबाद आध्यात्मिकता एवं भौतिकता का अद्भुत संगम स्थल है। इस लेख में शोध, प्रवासन,स्थल विवरण, ऐतिहासिक संदर्भ और वर्तमान स्थितियों की व्याख्या - सबकुछ आ गए हैं। वैश्विक अस्मिता वाले अहमदाबाद को मैं प्रणाम करता हूँ, क्योंकि यहाँ की हवाओं में मैं भी वर्षों से श्वास ले रहा हूँ।

साहित्य, साहित्यकार और वैश्विक धरोहर शीर्षक इस निबन्ध संग्रह में विजय तिवारी ने अपने ग़ज़लकार - गीतकार स्वरूप से अलग हटकर समीक्षात्मक, शोधात्मक एवं चिन्तनात्मक गद्य लेखक के रूप में अपने आपको साहित्य में प्रस्तुत किया है। भाषा सीधी, सरल एवं प्रवाह पूर्ण है। लोकभोग्यता उसका विशेष गुण है। शिक्षकीय दायित्व एवं सतर्क मन भी यत्र-तत्र लेखक के साथ चलते हैं। कई तर्कों, उदाहरणों एवं उद्धरणों से लेखक पाठकों को पूरी तरह आश्वस्त करने का प्रयत्न करता है। संदर्भ - पटुता, इतिहास प्रेम, शोध रुचि

आदि से लेखों में वैविध्य तथा जानकारियों का संग्रह अच्छा हुआ है। **मैटर** इकट्ठा करने की श्रम साध्यता स्पष्ट दिखाई देती है।

ग्रंथ के कई उद्धरण देर तक मन को प्रभावित करते हैं, जैसे - 1 - हम न पाप करते हैं, न पुण्य करते हैं। हम केवल वह करते हैं जो हमें करना पड़ता है। 2 - लफ़्ज़ों की अपनी कोई कौम नहीं होती। 3 - किसी भी भाषा में अन्य भाषा के शब्द ग्रहण करने की शक्ति ही उसे समृद्ध करती है। आदि , गीत - ग़ज़लकार होने के कारण कई आलेखों में इस कृति का लेखक पद्यमय भी हो गया है।

अस्तु विजय तिवारी को बहुत बहुत बधाई और हार्दिक शुभकामनाएं।

डॉ. किशोर काबरा
वरिष्ठ साहित्यकार
2, नवजीवन प्रेस कॉलोनी,
गुजरात विद्यापीठ के पीछे,
अहमदाबाद - 380014

❖

'साहित्य, साहित्यकार और वैश्विक धरोहर' एक समीक्षा

–डॉ. धनंजय भंज

किसी भी काव्यकृति के विषय में दो-चार वाक्यों में समीक्षात्मक उपस्थापन के लिए विशेषाग्रह को स्वीकार करते हुए परम मित्र विजय तिवारी जी की प्रस्तुति **साहित्य, साहित्यकार और वैश्विक धरोहर** पुस्तक प्रस्तुति पढ़ा, सामान्य ज्ञानवशतः थोड़ा बहुत अवगत हुआ, दो वाक्य लिखने को प्रेरित भी हुआ।

वस्तुतः पुस्तक, संरचना और उसकी समीक्षात्मक आलोचना (समाचोलना, नकारात्मक पहलू है) दो अलग-अलग चीजें है। परम श्रद्धेय विजय तिवारी जी ना केवल कवि हैं अपितु बहुप्रतिभा के आयामी भी हैं। भारत के अनेक राज्यों में भ्रमण करते हुए यात्रानुभव से धनी हैं। संगोष्ठी, कार्यशाला, चर्चासत्रों में स्वनिबन्धों का उपस्थापन करते हुए भारतीय साहित्य, भूगोल, इतिहास, मानवजीवन, धर्म, पुरुषार्थ और प्राकृतिक विद्याओं में सिद्धहस्त प्रतीत होते हैं।

'मितं च सारं च वचो हि वाग्मीतां' अर्थात् कम शब्दों में कथनीय गूढतथ्यों को उजागर करना ही वास्तविक पंडित का लक्षण, गुण और कर्म होता है। तिवारी जी तीनों पक्षों में खरे उतरते हैं। १४ अध्यायों में सीमाबद्ध पुस्तक **साहित्य साहित्यकार और वैश्विक धरोहर** युगोपयोगी विषयानिष्ठ आलेखों से न सिर्फ सामान्य साहित्यप्रेमी के लिए खुराक बनता है अपितु कोई भी उच्च भाषाशिक्षा संस्थान में पाठ्य पुस्तक अथवा पुरकपुस्तक के रूप में स्वीकरणीय प्रतीत होता है। एक सर्वा सदी में समीक्षात्मक पुस्तक-निबन्धलेखसंग्रह के प्रति औदासीन्य को यह पुस्तक कुछ हद तक दूर करता है। राष्ट्रभाषा और राष्ट्रीय एकता के प्रति समर्पणभाव से संकलित तथ्यों को पाठक जरूर हृदयगामी कर सकता है यह निश्चित है।

जिस प्रकार कच्ची मिट्टी को (स्वरूप में प्रारूप) आकार देक विविध मूरत बनाने की कला और क्षमता एक अनुभवी कुम्हार के पास होती है उसी प्रकार बौद्धिक तथा साहित्यिक रसामृतरूपी कलश को बनाने में जो अथक प्रयास की आवश्यकता है वह विजय तिवारी जी के लेख से प्रमाणित होता है। एक उत्कृष्ट सृष्टा ही तबला वादक की तरह लेखनी चलाते हुए भावावेग को स्फूरण करता है। साहित्यिक-अस्मिता की संरक्षण में दिशानिरूपण कर सकता है। कवि सृष्टा है, जननी है, तिवारी जी की १४ अलग-अलग प्रस्तुतिः एक एक सन्तान की भांति पाठकों को भावावेश करती है।

प्रथम और अष्टम लेख में सद्दास कबीरदास के माध्यम से प्राचीन भक्तियुग की भारतीय भाषा साहित्य और प्रेमाधारित भावना को उजागर किया है। नवम लेख में (पद्मावत में पौराणिक...) ऐतिहासिक कथावस्तु प्रतिपादित करने में विजयजी सफल हुए है। उर्दू भाषा में निपुणता तिवारी जी की ओर एक साहसिक गुण जो ग्यारवे लेख में दिखाई पड़ता है। भाषाओं के प्रति समत्वभाव को उन्होंने सकारात्मक ढंग से उपस्थापन करने में सफल रहे हैं।

मूल्यबोधरचनाओं में चौथा और दसवां लेख भी स्वतंत्र है। प्रकृति चित्रण (छटवा लेख) वसुधैव कुटुम्बकम् (पांचवा और आखिर १४ वां लेख) छन्दमुक्तक रीतियुगाय कविता की विविधता (तीसरा लेख) भी विक्षिप्तरूप से प्रतिपादन किया गया है।

तिवारी जी की कर्मभूमि अहमदाबाद महानगर होने के कारण युनेस्को-प्रमाणित विश्व धरोहर नगर का वर्णन शूक्ष्मतिशूक्ष्म तरीके से किया है जो प्राथमिक विद्यालय से लेकर विश्वविद्यालयों में पढ़ाने वाले प्राध्यापकों के लिए भी उपयोगी साबित होगा यह निःसंदेह है। वैश्विक अस्मिता, बली गुजराती, फिराक गोरखपुरी, पं. ब्रजनारायण - सबके विषय में सुन्दर चित्रण भी प्रशंसनीय है। देश के प्रति समर्पण भाव, राष्ट्रनिर्माण के लिए पं. ब्रजनारायण की भूमिका अपने कर्तव्य के पालन के समय निःस्वार्थ सेवा का एहसास निबन्धसंग्रह का सार है।

परम आदरणीय विजय तिवारी जी की लेखनी में निश्छल सच्चाई का आभास होता है। मैंने साहित्यिक और वैश्विक धरोहर पुस्तक में एक समष्टि भाव का अनुभव किया। उदाहरण के तौर पर ऐतिहासिक तथ्यों, तिर्थ और तात्पर्य से भरा आखिरी निबंध जहाँ जैन, हिन्दू, मुस्लिम संप्रदायों को एक ही सूत्र में बांध रखने में समर्थ है। यह निबंध एक अद्वितीय बेमिसाल पाठ्यसामग्री के तौर पर विचार किया जा सकता है। पुनश्च तिवारी जी के लेख में शब्दों की संयोजना प्रशंसनीय है। जैसे कि पृष्ठांक १२९ में धार्मिक धर्मनिष्ठता के साथ बौद्धिक हस्तकला...

राष्ट्रीय एकता में उर्दू साहित्य की देन इस निबंध में तिवारी जी ने बारीकी से विविध धार्मिक, सांस्कृतिक और बौद्धिक विकासों के ऊपर चर्चा विमर्श किया है। कवि स्वयं ग़ज़ल साहित्य में प्रवीण अतः उर्दू भाषाधिकार एवं भारतीय वाङ्गमयजगत में अद्वितीय स्थान तो सही अर्थ में प्रभावशाली है। भारतीय राष्ट्रनिर्माण प्रक्रिया में उर्दू साहित्यकारों का योगदान पुनर्वार परिवेषित हुआ है।

भगवान बनने की कला, प्रवृत्ति एक उच्चस्तरीय व्यङ्गकथा का आभास कराता है। व्यस्ततामय जीवन में नैसर्गिक परिवेश, कुदरती जीवन और परमेश्वर की सत्ता का अनुभव करना कठिन होते हुए भी भगवान बनने की कला में पुरूषोत्तम रामजी की कथा से लेकर लुप्त प्राय सभ्यतापर्यन्तं (पृष्ठांक - 61, 62) वास्तविक जीवन की छवि दिखाई पड़ती है।

निर्गुण-निराकार ईश्वर सत्ता को मानने वाला केवल प्रेम और सद्भावना को ही ईश्वर ही है और घृणा, आतंक, नफ़रत को दानव ही मानेगा यह निश्चित है। सच्चिदानंद स्वरूपरहित भगवत प्राप्ति केवल विश्वबन्धुता से ही संभव यह लेख से प्रमाणित किया गया है।

अहमदाबाद महानगर का इतिहास धरोहर, विश्वसभ्यता को देन - एक अनोखा विषयवस्तु है। महानगर की भौगोलिक स्थिति प्राचीन इतिहास की परिकल्पना विजय जी का अदम्य शोधसंस्कार कर्म का पूर्वाभास ही है। एक उत्कृष्टवाक्य से ही महाकाव्य बनता है। महाकाव्य को साकार संपूर्ण करने में सृष्टा की आन्तरिकता भी आवश्यक, जो विजय तिवारी जी ने निबन्ध संग्रह के माध्यम से प्रतिपादन किया है।

अंत में यह कहूँगा कि पुस्तक के प्रत्येक लेख अपनी अपनी महत्ता को लेकर उद्भासित होते हैं। एक मालाकार के लिए जिस प्रकार हर फूल प्यारा होता है उसी प्रकार पाठकों के लिए यह निबन्धसंग्रह (पुस्तक) अनेक फुलों की माला की तरह और विविध प्रसंगों से जुड़ा

हुआ एकत्वभाव का प्रतीक के रूप में सदा सुरभित होता रहेगा यह नि:संदेह है।

अन्ततः मैं यह कह सकता हूँ की राज्य साहित्य अकादमी के सौजन्य से प्रकाशित यह पुस्तक न सिर्फ तिवारी जी की कार्मिक शक्ति को उजागर करती है बल्कि आने वाले समय के युवा कवि-लेखक, समीक्षकों के लिए प्रेरणादायी भी बन सकती है।

शोधपरक निबन्ध लिखना और ज्ञानीगुणीजनों की संगोष्ठी में उपस्थापन करना, वाक्चातुर्य, भाषाधिकार, निर्भिकता और शब्दसंयोजना में सबका उत्कृष्ट सन्तुलन बनाये रखना कवि श्री विजय तिवारी जी का निरन्तर शास्त्रीय ग्रन्थों का पठन पाठन का प्रमाण है। प्रभु श्री जगन्नाथ उनको अपार काव्यिक शक्ति दें ताकि भविष्य में भारतीय भाषासंपदा पुनः पुनः विकसित प्रस्फुरित सुरक्षित हो।

- डॉ. धनंजय भंज

सहसम्पादक, विश्वस्य वृत्तान्तः, सूरत

❖

'साहित्य, साहित्यकार और वैश्विक धरोहर' एक विशाल परिदृश्य

– डॉ. विनोद बब्बर

सुपरिचित कवि, विजय तिवारी जी से प्रथम मुलाकात श्रीनाथद्वारा में साहित्य मंडल द्वारा आयोजित समारोह में हुई। ग़ज़ल कहने का उनका अंदाज ही नहीं, उनका सौम्य व्यक्तित्व भी प्रथमदृष्टया प्रभावित करता है। श्रीनाथद्वारा के बाद भी अनेक बार मिले। विद्वान शिक्षक होते हुए भी उनके स्वभाव में साख्य भाव है जो उनकी स्वीकार्यता बढ़ाता है। मैं उनकी काव्यात्मक प्रतिभा का प्रशंसक था लेकिन जब गुजरात हिंदी साहित्य अकादमी के सहयोग से प्रकाशित उनकी पुस्तक **'साहित्य, साहित्यकार और वैश्विक धरोहर'** पढ़ी तो मुझे किंचित आश्चर्य हुआ क्योंकि आमतौर पर अच्छे कवि अच्छे लेखक नहीं हो पाते। जहाँ तक मैं समझ पाया हूँ - कवि अति संक्षेप में गहरी और विस्तृत अर्थ वाली बात को कलात्मक ढंग से कहने के अभ्यस्त होते हैं जबकि शोध लेख, समीक्षा आदि विभिन्न संदर्भों सहित विस्तार की माँग करते हैं। लेकिन इस क्षेत्र में भी विजय जी का विजयी अभियान देखकर आश्चर्य मिश्रित प्रसन्नता हुई।

निश्चित रूप से विजय जी बहुमुखी प्रतिभा के धनी हैं। इस पुस्तक में संकलित उनके 14 लेख विभिन्न विषयों पर उनकी गहरी समझ की कहानी स्वयं कहते हैं। सूरदास जी से आरंभ हुई यह शब्द यात्रा लेखक के अपने शहर अहमदाबाद पहुँच कर संपन्न होती है। लेकिन लेखक ने अपनी कवि बिरादरी को विशेष उपकृत किया है। यथा गुजरात के समकालीन हिंदी गीतकार, विराट व्यक्तित्व के ग़ज़ल गो: फिराक गोरखपुरी, कबीर: बहुआयामी प्रतिभा के धनी, पदमावत में पौराणिक पात्र कथा निरुपण, पं. ब्रजनारायण चकबस्त के कलमी खाके और वली गुजरातीः फ़न और शख़्सियत। 'साहित्य में निरुपित प्रकृति चित्रण' और 'उर्दू साहित्य में कौमी एकता' भी काव्य ही है। कुल 14 में से 9 लेख अर्थात् उनका प्रथम प्रेम काव्य ही है।

'सूरदास और उनका काव्यात्मक आभामण्डल' सर्वाधिक विस्तृत, व्यवस्थित और विशिष्ट अंदाज से प्रस्तुत आलेख है। कुल 15 पृष्ठों में सूरदास जी के जीवन से उनके द्वारा रचित साहित्य का विद्वतापूर्वक प्रस्तुतीकरण है। तो 'गुजरात के समकालीन हिंदी गीतकार' में उन्होंने गुजराती-हिंदी अंतर्संबंधों को सुंदर ढंग से पारिभाषित किया है। इसे संयोग ही कहा जायेगा कि आलेख में वर्णित डॉ. रामदरश मिश्र जी से डॉ. किशोर काबरा तक अधिकांश गीतकार मूलतः हिंदी भाषी प्रदेशों से हैं। लेकिन जिन नूतन रंगों और विभिन्न आयामों वाले गीतों की चर्चा है वे जरूर गुजरात की धरा पर ही रचे गये।

'विराट व्यक्तित्व के ग़ज़लगो फिराक गोरखपुरी' के विलक्षण व्यक्तित्व के विभिन्न रूपों से परिचित कराते इस आलेख में उनकी रुबाईयों से नज्मों और ग़ज़लों की विशिष्टताओं की जानकारी तो हैं लेकिन न जाने क्यों फिराक साहब का असली नाम (श्री रघुपति सहाय)

और नाम बदलने की कहानी की चर्चा नहीं हैं। इसे फिराक साहब के ही शब्दों में कहूँ तो–

कोई समझे तो एक बात कहूँ,
इश्क़ तौफ़ीक़ है गुनाह नहीं।

'कबीर : बहुआयामी के धनी' लेखक की अध्ययनशीलता का प्रमाण है। तो 'पदमावत में पौराणिक पात्र कथा निरुपण' पर और भी बहुत कुछ कहा जा सकता था। 'पं. ब्रजनारायण चकबस्त के कलमी खाके' और 'वली गुजरातीः फ़न और शख़्सियत' निश्चित रूप से पाठकों का ज्ञानवर्धन करेंगे। 'साहित्य में निरुपित प्रकृति चित्रण' और 'उर्दू साहित्य में कौमी एकता' संक्षेप में कहे गये विस्तृत वक्तव्य हैं।

'हमारी राष्ट्रभाषा और हमारी राष्ट्रीय अस्मिता' इस संग्रह का सर्वाधिक महत्वपूर्ण आलेख कहा जा सकता है। इस आलेख में विभिन्न विदेशी विद्वानों के हिंदी के पक्ष में दिये गये कथनों को प्रस्तुत कर लेखक ने विदेशी भाषा की गुलामी करने वाले 'काले अंग्रेजों' को आँखे खोलने के लिए बाध्य किया है। तो 'वैश्विक धर्म: अपने कर्तव्य का पालन' में श्री भगवतीचरण वर्मा के उपन्यास 'चित्रलेखा' का सार प्रस्तुत कर गंभीर बात को सरल बना दिया है। वास्तव में 'परिस्थितियों द्वारा सौंपे गये कर्तव्य का शुद्ध अंतर्करण से निष्ठापूर्वक निर्वहन' ही धर्म है। 'चलो भगवान बनें' आधुनिक दृष्टि से सर्वशक्तिमान को समझाने और ढ़ोंग की पोल खोलने का प्रयास है।

'ज़िंदगी में शॉटकट कितना जरूरी' जैसे महत्वपूर्ण विषय को अति संक्षिप्त कर प्रस्तुत करना लेखकीय कला है। तो 'वैश्विक अस्मिता: अहमदाबाद' अपने शहर से न्याय करने के समान है। बचपन से अब तक सैंकड़ों बार अहमदाबाद प्रवास के दौरान बहुत कुछ जानने - देखने के बाद भी इस लेख ने बताया कि मेरा अहमदाबाद से परिचय आधा-अधूरा है। इसलिए लेखक को साधुवाद। लेकिन अहमदाबाद के विभिन्न स्थलों की जानकारी संग यदि 'कर्णावती' की चर्चा भी की जाती तो लेखक स्वयं को साम्यवादी ठप्पे से बचा सकते थे। खैर कुल मिलाकर यह लेख पाठक मन में गुजरात के प्रति आकर्षण बढ़ायेगा।

'साहित्य, साहित्यकार और वैश्विक धरोहर' पुस्तक के लिए प्रिय विजय तिवारी जी और प्रकाशन सहयोग के लिए गुजरात हिंदी साहित्य अकादमी को बहुत-बहुत बधाई। आशा ही नहीं, पूर्ण विश्वास है कि यह पुस्तक बहुचर्चित होकर लोकप्रियता प्राप्त करेगी।

- डॉ. विनोद बब्बर
संपादक, राष्ट्र-किंकर
ए-2 / 9ए, हस्तसाल रोड, उत्तम नगर
नई दिल्ली-110059

❖

'साहित्य, साहित्यकार और वैश्विक धरोहर' श्रेष्ठ संक्षिप्त इतिहास

–डॉ. दक्षा जोशी

मानव जीवन में साहित्य का स्थान सर्वोपरि है। जीवन के हर पहलू से संबंधित होने के कारण साहित्य के अंतर्गत कला, संस्कृति और विज्ञान का समन्वय स्वयं हो जाता है। युगों से मानव को प्रेरणा देनेवाला साहित्य धर्मोपदेश से लेकर कथा–कहानी तक सभी प्रकार की मनोमयों से तरंगित होता रहता है। भारतीयता की पावन अवधारणा को यदि हम साहित्य के द्वीप के रूप में देखें तो एक निर्मल आकाश का आनंद हमारे सामने प्रस्तुत होता है। इस आंगन में साहित्य–कानन में खिले हुए रंगबिरंगे विलक्षण कुसुम हैं, लोकमंगल का सुगंधित स्वर है, साहित्याकाश में ऊँची उड़ान भरने को उत्सुक पखेरू हैं, आस्था का स्वर है, श्रद्धा का संगीत है, मानवीय संवेदनाओं एवं मानवीय अनुभूतियों के गीत हैं। साहित्य की इस शब्द सलिला में भारतीयता की शीतलता है, जो विभिन्न साहित्यिक धाराओं में बह रही है। ये सब हमें एक साथ देखने को मिलता है श्री विजय तिवारी की पुस्तक **'साहित्य, साहित्यकार और वैश्विक धरोहर'** में।

श्री विजय तिवारी समकालीन हिन्दी साहित्य के एक सशक्त हस्ताक्षर है। विशेषतः कवि के रूप में सुप्रसिद्ध श्री विजय तिवारी के गद्य में भी काफ़ी वैविध्य और नावीन्य है। आपने ग़ज़ल, कविता, कहानी, आलेख, आकाशवाणी से रेड़ियो–वार्तालाप, दूरदर्शन से कहानी–पठन आदि विधाओं की ओर अपनी लेखन प्रवृत्ति को मोड़ा है। विविध संस्थाओं एवं विविध साहित्यिक अकादमी के द्वारा आपका विशेष सम्मान भी हो चुका है।

'साहित्य, साहित्यकार और वैश्विक धरोहर' श्री विजय तिवारी द्वारा बना हुआ 14 आलेखों का एक ऐसा पुष्पगुच्छ है जिसमें अनेक प्रकार के प्रसूनों की पृथक्–पृथक् महक विद्यमान है। कहीं राष्ट्रभाषा, कहीं गुजरात के हिन्दी गीतकार, कहीं साहित्य में निरूपित प्रकृति–चित्रण तो कहीं सूरदास, कबीर, फिराक गौरखपुरी, पंडित ब्रजनारायण चकबस्त, वली और कहीं जायसी के 'पद्मावत' की सौंधी महक ! लेखक ने अनेक विषयों पर अधिकारपूर्वक लेखनी चलाई है। मध्यकाल से लेकर आधुनिककाल तक की साहित्यिक विधाओं पर विस्तृत प्रकाश डाला है। वास्तव में साहित्य को लेकर आपने यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि साहित्य मानव–चेतना का ऐसा विकासक्रम है जो साहित्यकार के द्वारा उसके अंतरंग तथा बहिरंग को परिष्कृत कर, विशेष जीवन–पद्धति का सृजन करती है। साहित्य मानव–चेतना की प्राकृतिक उर्ध्वगति का प्रकाशन है, मानव की अंतर्भूत और प्रसूप्त विशेषताओं की परिष्कृति और अभिव्यक्ति है जो मनुष्य को और मानव–संस्कृति को वैश्विक फलक पर रख देती है।

उस पुस्तक में सूरदास और उनका काव्यात्मक आभामंडल, हमारी राष्ट्रभाषा और हमारी राष्ट्रीय अस्मिता, गुजरात के समकालीन हिन्दी गीतकार, वैश्विक धर्म : अपने कर्तव्य का पालन, चलो भगवान बने, साहित्य में निरूपित प्रकृति चित्रण, विराट व्यक्तित्व के ग़ज़ल गो फिराक गोरखपुरी, कबीर : बहुआयामी प्रतिभा के धनी, 'पद्मावत' में पौराणिक पात्र कथा

निरूपण, ज़िन्दगी में शोर्टकट कितना जरूरी, उर्दू साहित्य में कौसी एकता, पं. ब्रजनारायण चकबस्त के कलमी खाके, वली गुजराती : फ़न और शख़्सियत, वैश्विक अस्मिता : अहमदाबाद' आदि विषयों पर गहन अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। जैसे एक चित्रकार एक–दो कूची इधर–उधर मारता है और हमारे सामने पूरी तस्वीर अपने समस्त भावों के साथ उभरकर सामने आती है, उसी प्रकार चन्द छोटे–छोटे भावयों से, किसी बड़े सत्य का उद्घाटन कर, लेखक ने अपने विचारों को व्यक्त कर साहित्यिक आदर्शों की रक्षा करने का प्रयास किया है जिससे आपकी सर्वोन्मुखी प्रतिभा दृष्टव्य होती है। यही कारण है कि आपके कुछ लेख धार्मिक, कुछ पौराणिक, कुछ राष्ट्रीय, तो कुछ ऐतिहासिक एवं समसामायिक परिवेश को विशाल 'कैनवास' पर प्रस्तुत करते दिखाई देते है। निश्चित ही श्री विजय तिवारी की प्रतिभा अपने ढंग की अंगूठी है।

गद्यलेखन की सबसे बड़ी विशेषता प्रवाह एवं लयात्मकता है। तिवारी जी के आलेखों में ये दोनों तत्त्व प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं।

इस पुस्तक की प्रत्येक रचना स्वतंत्र है, किन्तु प्रत्येक जगह आतुर मन की जिज्ञासा और जीवन की उहापोह में निमज्जित है। इसलिये छोटे–छोटे संदर्भों को लेकर लेखक ने क़लम का ख़ूब सदुपयोग किया है। इनकी संवेदना बहिर्मुखी है। अपेक्षा यह कि समाज या जीवन की विसंगतियाँ कम हों और हम सब का जीवन सहजता से भरपूर हो, ताकि व्यक्ति विधेयात्मक सोच से परिपूर्ण रहे।

आलेखों की भाषा में सरलता है, तरलता है, सुकोमल भावों की मनोरम्य अभिव्यंजना है। लेखक की संवेदनशीलता ने आम शब्द–चयन, सरल प्रतीक–विधान और चित्रोपम बिम्ब योजना से गद्य को भी काव्यमय बनाकर कथ्य का सटीक संप्रेषण किया है। आपके लेखन में हिमालय की सी ऊँचाई है, प्रशांत सिंधु का सा गांभीर्य और विस्तार, शब्द–सौन्दर्य तथा अर्थ–माधुर्य है। भाव और भाषा समानान्तर होड़ लगाते दृष्टिगोचर होते हैं। प्रमाणभूत अनुभूति किन्तु संवेदनात्मक अभिव्यक्ति आपकी लेखन–शैली रही है। सरलता और सहजता आपके निजी गुण हैं जो आलेखों में प्रतिबिंबित हुए हैं। रूमानी ख़यालात और रूमानियत से दूर रहे हैं।

सभी लेखों के अध्ययन के पश्चात् हमें लक्षित होता है कि लेखक ने जो जिया है वही लिखा है, और जो लिखा है वही जिया है। अतः जो आज उनके हृदय में अंकुरित होते हैं अनुभव उसकी परवरिश करता है चिंतन उसे परिपक्व बनाता है और संप्रेषण पीड़ा उसे कागज़ पर ला उतारती है। परिणाम स्वरूप आलेखों में मानवीय संघर्ष एक नई दृष्टि के साथ चित्रित मिलता है।

मार्के की बात यह है कि लेखक ने वर्तमान को प्रेरणा देने के लिए मूर्त प्रतीकों एवं बिम्बों को स्वीकार किया है। इसलिए उनकी रचनाओं में ग़ज़ब की निजता एवं सह–अनुभूति विद्यमान हैं। गद्य जिस अभ्यास, सोच एवं चिंतन की माँग करता है, वह सब लेखक के पास है। अभिव्यक्ति की छटपटाहट को वे हर क्षण महसूस करते हैं। कदाचित यही उनकी सृजनधर्मिता को जीवंत बनाए रखने का अवलंब है। घुमावों वाले शब्दों से आलेखों को बचाते हुए वे अपनी संप्रेषणीयता को कम शब्दों से सादगी एवं भाषाई अनुशासन के साथ सीधे आवाम के स्वरों से जोड़ने का प्रयास करते हैं। जाने–पहचाने लफ़्ज़ों में ही गहरी अनुभूति की बातें करना लेखक की खासियत है। लेखक का व्यष्टि जिस तरह समष्टि से सहज ही

जुड़ता है, अत्यंत प्रशंसनीय है।

सभी आलेखों का अध्ययन करने के बाद हम कह सकते हैं कि लेखक की इन रचनाओं में संत्रास, कुंठा, अलगाव और अकेलापन कहीं दृष्टिगोचर नहीं होता, बल्कि आशावादी और जनता के साथ लगाव रखनेवाले हैं। यहाँ वे स्वयं अनुभूत घटना को अभिव्यक्ति देने में सफल हुए हैं। भाव और भाषा की दृष्टि से पाठक को प्रभावित करने में समर्थ हैं। अदने आदमी से लेकर दार्शनिक विचार तक उसका विस्तार है। प्रकृति को मन की आँखों से देखने के कारण लेखक अपनी रचना में प्रकृति का सिर्फ़ बाह्य सौन्दर्य ही नहीं, प्रकृति का गहरा चटक रंग और सुंदरता को सहजतापूर्वक, मार्मिक ढ़ंग से प्रस्तुत करने में सफल रहे है। कहना न होगा कि बहुत सारे विषय और संदर्भो को समेटने की चाहत के बावजूद भी लेखक अपने लक्ष्यार्थ की ड़ोर से बंधे हुए प्रतीत होते हैं। रचनाओं के पठन के बाद लेखक के विचारों की स्पष्टता और शब्दों की सरलता–सहजता से कोई भी प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। यह आलेख संग्रह अपने भीतर विविधता को समेटे हुए है जिसमें गीतात्मकता, आंतरिकता, संवेगिक आतुरता और अनुभूति की सच्चाई सर्वत्र बिखरी दिखाई देती है।

निःसंदेह **'साहित्य, साहित्यकार और वैश्विक धरोहर'** ऐहिक चेतना का नहीं, मानवचेतना का ऐसा लेख–संग्रह है जिसमें सूर का भक्ति संगीत, कबीर की प्रेम–भक्ति, अनन्य राष्ट्रभाव, राष्ट्रभाषा के प्रति प्यार और वैश्विक धर्म का चिंतन है। विविध उत्कृष्ट कवियों की रचनाओं के द्वारा प्राप्त जीवन–दर्शन का रसास्वादन है। निश्चित रूप से लेखक ने अपनी कृति के व्यापक आधार फलक पर मानवजीवन की उस मूल समस्या का समाधान प्रस्तुत करने का प्रयास किया है जो सामयिक समकालीक होते हुए भी शाश्वत है। बहुजनहिताय, बहुजनसुखाय का मंत्रोच्चार करते हुए 'वसुधैव कुटुंबकम्' का अपना मंतव्य पूर्ण किया है।

निश्चित ही यह पुस्तक श्री विजय तिवारी जी की अक्षय–कीर्ति का स्मारक सिद्ध होगी। साहित्य जगत को उनसे अनेकानेक अपेक्षाएँ हैं। अपेक्षा करती हूँ कि वे अपनी लेखन–प्रतिभा को विराम न देकर विकास की ओर ले जाते हुए पाठकों को नवीन आलेखों का रसास्वादन कराते रहेंगे।

हार्दिक शुभकामनाएँ देती हूँ कि श्री विजय तिवारी जी अपनी इसी साहित्यिक चेतना के सहारे साहित्यिक जगत की बुलंदियों को चुमें। आशा करती हूँ कि पाठकगण इस पुस्तक का समादर करेंगे। श्री अंबाशंकर नागर की इन पंक्तियों के द्वारा इस पुस्तक के लिए कहना चाहूँगी –

'ऐसा महसूस हुआ है,
कि जैसे सुरतरू
मेरे गमले में ऊगा है।'

- डॉ. दक्षा जोशी
रिटायर्ड प्रिन्सिपाल
एम. जे. के. आर्ट्स, कोमर्स एन्ड कम्प्यूटर सायन्स कोलेज
राजकोट–380005 (गुजरात)

❖

'साहित्य, साहित्यकार और वैश्विक धरोहर' स्तरीय आलेख

– डॉ. देवनारायण शर्मा "चक्रधर"

गुजरात प्रान्त के हिन्दी साहित्य जगत में एक कर्मठ, ऊर्जावान बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी श्री विजय तिवारी जी परमेश्वर को अपना परम प्रिय परम ध्येय और परम इष्ट मानकर साहित्य का सृजन करने के लिए सदैव तत्पर और सक्रिय रहते हैं। प्रभु का भक्त बनना ही उनके जीवन की एक बडी उपलब्धि है। परमात्मा में विश्वास और उनके प्रति समर्पण करनेवाले मानवभक्त को कभी किसी वस्तु की कमी नहीं रहती है। भक्त की इच्छानुसार भगवान उसे सबकुछ प्रदान करते रहते हैं क्योंकि वह सर्वदा निर्विकार और निष्काम रहता है। प्रगतिपथ पर चलते हुए कर्म करते हुए जीवन का परम उदेश्य बना लेता है। कवि कभी इस महानतम भावना के विपरीत स्वप्न में भी नहीं सोच सकता है इसीलिए सदैव विश्वकल्याण मयी भावना उसके जीवनकानन में हिलोरे लेती रहती है। इसी के फलीभूत होकर श्री विजय तिवारी जी के जीवन में विश्वकल्याण कारी भावना का उच्चजीवन, उच्चविचार और उच्चमानवता का सुन्दर परिचय मिलता रहता है जिसका अनुभव उनके परोपकारी भावना में स्पष्ट दृष्टिगोचर होता रहता है।

श्री विजय तिवारी जी की पुस्तक **साहित्य, साहित्यकार और वैश्विक धरोहर** को चौदह अनुक्रम में सजाया संवारा गया है जो इनकी एक बडी उपलब्धि है। एक विशाल विपुल और अगाध उद्देश्य को लेकर अपनी विचारधारा से भावाभिव्यक्ति और मनहर मनभावन प्रस्तुतिसराहनीय है। प्रथमः सूरदास और उनका काव्यात्मक आभामंडल लेख के ऊपर आभाषित है। सूरदास के द्वारा प्राकृतिक शोभा और सौन्दर्य का विस्तृत वर्णन के साथ साथ भक्ति की तल्लीनता, आत्मसमर्पण उद्धार की प्रार्थना आदि बिन्दुओं पर प्रकाश डालने में सक्षम हुए हैं।

सूर के गेय पदों में हृदयस्थ भावों की बड़ी सुंदर व्यजना हुई है। उनके कृष्ण लीला संबंधी पदों में सूर के भक्त और कवि हृदय की सुंदर झाँकी मिलती है।

हमारी राष्ट्रभाषा और हमारी राष्ट्रीय अस्मिताः इस लेख में तिवारी जी ने हिन्दी की दशा और दिशा के ऊपर एक सुन्दर लेख लिखकर हिन्दी की महत्ता को दर्शाया है और सटीक सुझाव भी प्रस्तुत किये हैं जो सराहनीय व प्रशंसनीय है।

गुजरात के समकालीन हिन्दी गीतकार : शीर्षक लेख में गुजरात में स्थित हिन्दी गीतों की काव्यात्मक, राजनीतिक और सामाजिक समीक्षा को समावेश करके लेखक द्वारा प्रतिपादित किया गया है। समीक्षा बहुत ही उपयोगी और बहुत सुन्दर बन पड़ी है।

वैश्विक धर्म अपने कर्तव्य का पालन : श्री विजय तिवारी जी ने इस लेख में धर्म और कर्तव्य की एकजुटता एकता की विवेचना बहुत ही मार्मिक ढंग से की है। मानवजीवन का उदेश्य है कर्म करना और फल की प्राप्ति नहीं।

चलो भगवान बनें : भगवान को पाने के लिए मनुष्य को सदैव मणिकांचन गुण,

समरसताभाव और सकारात्मक सोच को। विकसित करके जीवनयापन करना चाहिए। सद्गणों अच्छाइयों, सहानुभूति तथ्य और प्रमाणिकता, स्नेह और प्रेम सद्भावना जन जन के प्रति प्रेम और विश्वशांति के लिए सोचना और मनन करना चाहिए।

साहित्य में निरुपित प्रकृतिचित्रण : साहित्य समाज का दर्पण है या साहित्य में समाज का प्रतिबिंब दृष्टिगोचर होता है। साहित्य और प्रकृति के अन्योन्याश्रित संबंध को लेकर उसकी विवेचना की गई है।

विराट व्यक्तित्व के ग़ज़लगो फिराक : इस आलेख में प्रसिद्ध ग़ज़लकार फिराक गोरखपुरी पर प्रकाश डालकर कवि ने अपनी योग्यता और क्षमता का पूर्णरुपेण परिचय दिया है। शायरी की अमूल्यनिधि साहित्यिक अवदान और व्यक्तित्व पर भी हृदयस्पर्शी रोचक और मार्मिक प्रकाश डालने में लेखक ने अपनी क्षमता का परिचय दिया है। लेख जन जन. द्वारा सराहा भी गया है।

कबीरः बहुआयामी प्रतिभा के धनी : हिन्दी साहित्य में कबीर का भी बड़ा महत्व है। इस अध्याय के द्वारा लेखक ने कबीर के व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रकाश डालते हुए अपने अध्ययन का पूर्ण परिचय संप्रेषित किया है। लेख बहुत ही सुन्दर बन पड़ा है।

पदमावत में पौराणिक पात्र कथा निरुपण : इस लेख में जायसी के प्रसिद्ध महाकाव्य में रामायण महाभारत पुराण आदि के कथा प्रसंग में आये पौराणिक पात्रों को लेकर सारगर्भित और उपयोगी समसामयिक विषय पर विश्लेषण आधारित है।

जिन्दगी में शार्टकट कितना ज़रुरी : जीवन में शार्टकट कितना आवश्यक और उपयुक्त है। साहित्य की समीक्षा के साथ साथ वर्तमान जगत की चिन्ता करनेवाले. समीक्षक के रूप में यह लेख है। आधुनिक युग में मानव मशीन बन गया है और यह लेख उसके लिए आवश्यक है।

उर्दू साहित्य में कौमी एकता : इस लेख में भी राष्ट्रीयता की भावना को आभाषित करने करानेवाला परिलक्षित होता है। साहित्य मात्र मनोरंजन की वस्तु न होकर पारम्परिक सद्भावना प्रेम स्नेह का परिचायक भी है। कवि ने इसमें इसी की विवेचना की है।

पं. ब्रजनारायण चक्रबस्त के क़लमी खाके। शायरी के जाने मानें कलाकार तथा रचनाकार ब्रजनारायण के योगदान को अंकित करने का प्रयास किया गया है। लेखक का मत है कि इसकी शायरी आशिक मासुक के चोचलों से निकलकर देशभक्ति तथा कौमी एकता की ओर अग्रसरित हुई है।

वली गुजरातीः फन और शख़्सियत : दक्खिनी हिन्दी के ख्यातिलब्ध साहित्यकार वली गुजराती की शायरी को लेकर लेख लिखा गया है। शायरी को लेकर इस लेख में इसकी सारगर्भित विवेचना की गई है।

वैश्विक अस्मिता अहमदाबाद। इस संकलन का आखिरी लेख है और युनेस्को द्वारा अहमदाबाद को संसार हेरिटेज (वैश्विक धरोहर) का दर्जा दिए जाने के संदर्भ में है। इसमें शहर की ऐतिहासिक सांस्कृतिक और सामाजिक विशेषताओं के साथ साथ शहर की स्थापत्य कला तथा नगर व्यवस्था के बिषय में बहुत मार्मिक और रोचक ढ़ंग से प्रकाश डाला गया है। प्रारम्भ से अन्त तक रोचक और प्रभावपूर्ण शैली का परिचय भी प्रस्तुत किया गया है। पाठक

गण की. जिज्ञासा निरन्तर बढ़ती ही जाती है। इस लेख द्वारा अहमदाबाद शहर के मुख्य मुख्य स्थलों का वर्णन भी उपयोगी और ज्ञानवर्धक है। विजय तिवारी ने अहमदाबाद की ऐतिहासिकता में चारचांद लगा दिया है। शहर के मुख्य मुख्य घटनाचक्रों को भी आभाषित करके इस लेख की उपयोगिता और महत्ता में अभिवृद्धि कर दी है। तिवारी जी ने निःसंदेह एक ऐतिहासिक कार्य किया है और वे बधाई के पात्र हैं।

सभी उपलब्ध साम्रगी का समुचित, यथायोग्य यथास्थान पर उपयोग करते हुए और पैनी दृष्टि से अवलोकन करके गहराई से विश्लेषण किया है। बडी निष्ठा और कर्तव्यभाव से मनन चिंतन करके अपने मत भी प्रकट किये हैं। सम्पूर्ण पुस्तक में मांगलिक और मानवता का उज्जवल रुप चरितार्थ हुआ है। यह कार्य बहुत श्रमसाध्य है जिसको कवि ने निष्ठापूर्वक सम्पन्न किया है मुझे पूर्ण विश्वास है कि हिन्दी साहित्य के विद्वान प्रेमीजन और प्रबुद्ध पाठक इसका यथोचित आदर और सम्मान करेंगे। लेखक के उत्कृष्ट सराहनीय प्रशंसनीय और श्लाघनीय गौरवपूर्ण कार्य की जितनी प्रशंसा की जाय अल्प ही है। हमारा सादर अनुरोध है कि अपनी विद्वता व कौशल समीक्षात्मक शक्ति से इस प्रकार हिन्दी भाषा को लोक प्रिय बनाने के लिए सतत ज्ञानवर्धक आकर्षक विषयों और लेखों को लेकर रचनात्मक कार्य करते रहें। हमें आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि भविष्य में भी जिज्ञासु साहित्यकार पाठकगण निरन्तर लाभान्वित होते रहेंगे।

श्री विजय तिवारी जी अहमदाबाद निवासी गुजरात हिन्दी साहित्य के गद्य और पद्य के समर्थ विद्वान लोकप्रिय प्राध्यापक और हिन्दी के योगक्षेम के सजग प्रहरी भी हैं। उनकी सद्यः प्रकाशित अन्य कृतियों से उनका परिचय पारिधि कार्यक्षमता और उनकी हिन्दी के प्रति सच्ची निष्ठा का अनुमान भी किया जा सकता है। तिवारी जी के सारस्वत व्यक्तित्व क्रमिक विकास निखार परिपोष एवं पौढि को देखता और मुग्ध होता रहा हूँ। वह दिन दूर नहीं है जब तिवारी जी क्षमता के शिखर पर आरुढ़ होकर प्रदेश देश का नाम रोशन करेंगे और अपनी कीर्तिपताका फहरायेंगे। उनकी लगन निष्ठा कर्तव्यपरायणता और कार्यकुशलता के प्रति मैं नतमस्तक हूँ। श्री विजय तिवारी जी की साहित्य और संयोजन की इस प्रिय और उपयोगी क्षमता के प्रति मेरा साधुवाद है।

डॉ. देवनारायण शर्मा "चक्रधर"
अन्तरराष्टीय साहित्यकार
मुंम्बई

❖

साहित्य, साहित्यकार और वैश्विक धरोहर – शोधात्मक लेखों का श्रेष्ठ संग्रह

– कार्तिका एस. नायर

गुजरात के हिंदी साहित्य जगत में श्री विजय तिवारी जी युवा कवि के रूप में प्रसिद्ध हैं। वे मात्र कवि नहीं हैं मान्य लेखक, संपादक, समीक्षक, अनुवादक एवं प्रूफ़रीडर, और कुशल संचालक भी हैं। हिंदी साहित्य में गद्य लेखन का अपना विशेष महत्व है। गद्य लेखन में विविधताएँ भी बहुत हैं और प्रकार भी अनेक हैं। गद्य लेखन की सबसे बड़ी विशेषता यह भी है कि इसमें विचारों की अभिव्यक्ति के लिए लेखक के पास पर्याप्त स्थान होता है। यदि लेखक के पास विशाल शब्द भंडार हो और मानव मन को समझने की योग्यता और क्षमता हो तो लेखक की अभिव्यक्ति प्रभावपूर्ण आकर्षक और असरदार हो जाती है। दृश्य, घटनाएँ, प्रकृति आदि को चित्रित करने के लिए गद्य लेखन में विशाल स्थान है। आवश्यकता है तो उतने ही विशाल शब्द भंडार और उतनी ही सूक्ष्मता से उसे समझदारी से चित्रित करने की, उकेरने की जो हमारे माननीय लेखक श्री विजय तिवारी जी में हैं। इसका जीता-जागता उदाहरण है **"साहित्य, साहित्यकार और वैश्विक धरोहर"** जो हमारे लेखक ने अपनी लेखन शैली द्वारा सभी पाठकों को अचंभित कर दिया है।

जैसा की आप सब को पता है कि साहित्य तत्कालीन संदर्भों का जीवंत दस्तावेज रहा है इसी संदर्भ में हमारे लेखक श्री विजय तिवारी जी के आलेखों का संकलन **"साहित्य, साहित्यकार और वैश्विक धरोहर"** हमारे सम्मुख है संकलन का प्रथम आलेख है **"सूरदास और उनका काव्यात्मक आभामंडल।**

प्रथम आलेख में लेखक ने सूरदास जी के जन्म काल तथा जन्म स्थान के विषय में कई विद्वानों में पर्याप्त मतभेद के बारे में बताया है। उदाहरण के लिए सूरदास जी का जन्म संवत 1540 के आसपास माना जाता है। वास्तव में इनके जन्म स्थान को लेकर विभिन्न स्तोत्र विभिन्न प्रकार की बातें करते हैं कोई 'सीही' बताता है और कोई 'रुनकता। लेखक ने इस आलेख में सूरदास जी के जीवन के हर पहलुओं को पूर्णता जानकर हम पाठकों के सामने प्रस्तुत किया है। उदाहरण के लिए कहीं-कहीं किंवदंती प्रचलित हैं कि सूरदास जन्मांध थे यह बात 'भावप्रकाश' में लिखा है किंतु "चौरासी वैष्णव की वार्ता" तथा "अष्ट-सखान" की वार्ता में कहीं भी यह उल्लेख नहीं है की सूरदास जन्मांध है। सूरदास के अंधे होने के संबंध में यह किंवदंती है कि सूरदास किसी सुंदरी की सुंदरता पर मुग्ध हो जाते हैं तभी उन्हें अपनी त्रुटि का बोध है और उन्होंने पश्चाताप के कारण अपनी आंखें फोड़ लीं। लेखक ने सूरदास के जन्मांध न होने का कारण भी प्रस्तुत किया है जो बहुत ही महत्वपूर्ण बात है लेखक यह तर्क देते हैं कि जो जन्म से अँधा हो वह भला हू-ब-हू और इतना मनोहारी वर्णन करना असंभव है, मुझे यह तर्क बहुत ही विश्वसनीय लगा क्योंकि लेखक एक और उदाहरण प्रस्तुत करते हैं जिससे पाठकों को ज्ञात होता है कि सूरदास बाद में नेत्रहीन हो गए होंगे, यह

पंक्ति है- **"सूरदास सों कहा निठुरई नैनन हू की हानि।** लेखक आगे लिखते हैं कि सूरदास पहले विनय के पद गाया करते थे यहाँ पर लेखक ने यह तक बताया है कि सूरदास कहां पर विनय के पद गाया करते थे, जो मुझे बहुत ही बढ़िया लगा और नई जानकारी भी है मेरे लिए आगे लेखक ने बहुत सटीक वर्णन द्वारा यह बताया है कि कैसे महाप्रभु वल्लभाचार्य ने सूरदास को "पुष्टिमार्ग" संप्रदाय की दीक्षा दी और प्रेरणा दी श्री कृष्ण की बाल माधुरी के पदों की रचना करें। लेखक ने यह भी पाठकों को बताया है कि कैसे सूरदास "अष्टछाप" के कवि बने। लेखक ने सूरदास की काव्यात्मक यात्रा के बारे में जानने के लिए इतिहास के हर पन्ने को बहुत अच्छे ढंग से खंगाला है। वास्तव में मैंने कभी भी सोचा भी ना था कि अकबर भी सूरदास जी से मिला होगा।

आगे लेखक सूरदास की रचनाओं के बारे में पाठकों को अवगत कराते हैं। वास्तव में मुझे बड़ी ही हैरानी हुई कि लेखक ने सूरदास की 5 रचना बताई है, और मुझे जहाँ तक ज्ञात है सूरदास की केवल तीन रचनाएं हैं। लेखक ने "साहित्य - लहरी" रचना के विषय में पाठकों को यह बताया है कि रचना "कूट प्रधान", यहाँ तक कि इस रचना में कितने पद हैं? और उनका विषय क्या है? और किन अलंकारों की भरमार है? इन सब का लेखक ने बहुत बढ़िया वर्णन दिया है। लेखक ने "साहित्य - लहरी" की काव्य भाषा पर भी अपनी राय व्यक्त की है। इसके उपरांत लेखक "सूरसारावली" रचना के विषय में वर्णन करते हैं, यहाँ लेखक ने "सूरसारावली" के अर्थ को वर्णन किया है इसमें कितने पद संगृहीत हैं इसका भी ब्यौरा दिया है। आगे लेखक ने सूरदास के अक्षय एवं वैश्विक कीर्ति का आधार स्तंभ "सूरसागर" के विषय में बहुत ही सुंदर और सटीक वर्णन किया है। लेखक ने पाठकों को इस बात से अवगत कराया है कि "सूरसागर" में अब तक केवल दस हज़ार से अधिक पद नहीं मिले। यहाँ लेखक ने बताया है कि विद्वानों ने 'एक लक्ष्य पद वंद पंक्ति को एक लक्ष्य स्वरूप (श्री कृष्ण) के चरणों की वंदना एक लाख या सवा लाख पद की बात भ्रामक या अतिशयोक्ति प्रतीत होती है। आगे लेखक ने इस बात को और भी अच्छे ढंग से समझाया उन्होंने 'चौरासी वैष्णव की वार्ता' से एक पंक्ति लेकर समझाया, "और सूरदास ने सहस्रावधि पद किए हैं, ताको सागर कहीं तो सब जगत में प्रसिद्ध भये" इससे यह और भी स्पष्ट हो जाता है कि सूरदास ने हजारों पद अवश्य लिखें हैं लाख या सवा लाख नहीं लेखक ने "सूरसागर" के विषय में बहुत ही जानकारियाँ दी है जो शोध करना चाहते हैं और "सूरसागर" के बारे में कम शब्दों में जानना चाहते हैं उनके लिए यह आलेख बहुत ही सहायक होगा। "सूरसागर" विषय में लेखक ने यह बताया है कि यह किस प्रकार की काव्य विधा है? इसमें किस तरह के पदों का प्रयोग हुआ है? इस महाकाव्य का उद्देश्य क्या है? आदि बातों के बारे में बताया है। "सूरसागर" के विषय में विस्तार से वर्णन किया है, इसमें कितने स्कंध हैं? और इसकी रचना किस आधार पर हुई है ? लेखक ने यह भी बताया है कि भले ही "मुक्तक पदों में रचना की और क्रमवार में लगाकर "प्रबंध काव्य" की तरह सरसता और क्रमबद्ध का आयोजन किया गया है। लेखक आगे वर्णन करते हुए हर स्कन्ध का क्या विषय है? इन बातों को भी पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हैं। इसमें प्रथम स्कंध में विनय संबंधी पद, द्वितीय स्कन्ध में भक्ति संबंधी पद, तृतीय से नवम स्कन्ध तक विभिन्न पौराणिक कथाओं तथा भगवान

विष्णु के अवतार की कथा का वर्णन किया है। दशम स्कंध में श्री कृष्ण के अवतार का विस्तृत वर्णन किया और इसमें 3632 पद भी हैं। लेखक आगे लिखते हैं कि सूरसागर की रचना का मुख्य उद्देश्य केवल श्री कृष्ण बाल लीलाओं का चित्रण मात्र ही था, भले ही बाल लीलाओं का वर्णन हो किंतु कुछ किशोरावस्था तथा यौवन के पद भी हैं। सूरसागर के ग्यारहवें स्कंध में नारायण तथा हंस अवतार की कथा है, बारहवें स्कंध में कल्कि अवतार की कथा एवं परीक्षित तथा जनमेजय की कथा का वर्णन है। जैसा कि मैंने पहले ही कहा था लेखक ने इतिहास के हर पन्ने को इतने अच्छे ढंग से खंगाला है कि हमें केवल लेखक द्वारा दिए विवरण से ही सूरसागर के विषय में ज्ञात हो जाता है लेखक ने यह भी बताया है कि क्यों सूरदास को वात्सल्य रस का राजा कहा जाता है ? लेखक यह भी बताते हैं कि कैसे सूरदास ने बाल मनोवैज्ञानिक वर्णन किया है, इस कथन को स्पष्ट करने के लिए लेखक ने डॉ. रामकुमार वर्मा के कथन के द्वारा समझाया है। जैसे सूरदास ने बालकृष्ण के हर पहलुओं को छुआ वैसे ही हमारे लेखक ने भी सूरदास कृत सूरसागर के हर पहलुओं को छूकर हमें सूरदास की काव्य शैली, सूरदास की कृष्ण के प्रति भक्ति का परिचय करवाया है। लेखक ने वात्सल्य के हर प्रसंग के पदों का पाठकों से परिचय करवाया है जिसे पढ़कर हमें सूरसागर के विषय में अधिक जानने की जिज्ञासा होती है लेखक ने बाल लीलाओं के प्रसंग से बहुत ही उत्तम कोटि के पदों का चयन करके हम पाठकों के सामने प्रस्तुत किया है। आगे लेखक ने "भ्रमरगीत" जो सूरसागर की आत्मा मानी जाती है इसका बहुत ही सटीक विवरण हम पाठकों के सामने प्रस्तुत किया है। लेखक ने आगे यह भी बताया है कि कैसे सूरदास का "भ्रमरगीत" सबसे अधिक प्रसिद्ध है, भले ही सूरदास के बाद नंददास का भ्रमरगीत तथा आधुनिक काल के जगन्नाथ दास रत्नाकर "उद्धवशतक" भी लिखे गए हो फिर भी सूरदास कृत "भ्रमरगीत" ही सबसे अधिक प्रिय है। इसका भी कारण लेखक ने प्रस्तुत किया है जो कुछ इस प्रकार है- व्यंग्य काव्य की दृष्टि से संसार के साहित्य में भ्रमरगीत का स्थान सर्वश्रेष्ठ है। हिंदी साहित्य में यह व्यंग्य अपना सानी नहीं रखता है, सूरदास कृत भ्रमरगीत के पद मानव के अंतरतम को छू लेते हैं, प्रेम की गरिमा और उसके सौंदर्य का ऐसा मर्मस्पर्शी काव्य हिंदी साहित्य की बहुमूल्य उपलब्धि हैं।

जैसे कि लेखक ने सूरदास के काव्य रचना के पहले चरण में बताया था कि सूरदास ने पहले विनय के पद की रचना की, जब उन्होंने "पुष्टिमार्ग" में दीक्षा ग्रहण की उसके उपरांत ही सूरदास ने कृष्ण बाल-माधुरी पदों की रचना की है। उनके विनय पदों को यदि ध्यान से पढ़ा जाए तो हमें यह ज्ञात होने लगेगा कि कवि ने अपने को एक आत्मा और परमात्मा से प्रार्थना की है कि भगवान सूरदास जी का उद्धार करें। इस कथन को भी स्पष्टता देने के लिए लेखक ने श्री जयनाथ नलिन के वाक्यों को लिया है जो इस प्रकार है "विनय के पदों में सूर की तीखी वेदना, करुणोत्पादक दीनता, इष्ट का महत्व - भावना, उपास्य के दाक्षिण्य का अचल विश्वास, उस विश्वास से उत्पन्न उल्लास तथा शरणागत आस्था अक्षु भीगा चीत्कार और आत्मा की सच्ची पुकार बाँध तोड़कर उमड़ पड़ी हैं"।

लेखक ने आगे भक्ति में दीनभाव की भक्ति की सात मनोदशाओं को प्रस्तुत किया हैं। वह भी सूरदास कृत सूरसागर के पदों द्वारा हमें दीन भाव भक्ति क्या होती है? इस विषय

में हम पाठकों को अवगत कराया है, जो मेरे लिए बहुत बढ़िया और नई जानकारी है क्योंकि सूरदास ने साख्य भाव भक्ति के अलावा दीन भाव भक्ति में इतनी सुन्दर रचना की हैं जो मुझे आश्चर्यचकित कर रही हैं। जैसे कि मैंने कहा हमारे लेखक ने सूरदास जी के इतिहास के हर पन्ने को खंगाला है कि हर बार नई नई जानकारियाँ प्राप्त हो रही हैं।

आगे लेखक हमें बताते हैं कि कैसे भक्त और भगवान के बीच का रिश्ता कैसे फलता-फूलता है, जब भक्त भगवान में साख्य भाव आ जाता हैं तब भक्त अपने ईश्वर से बहुत ही संपूर्णता के भक्ति के साथ ही साथ मित्रता भी निभाता हैं और यही विशेष बात हमें सूरदास की रचनाओं में नज़र आती हैं। जैसे ही सूरदास जी ने पुष्टिमार्ग स्वीकार किया वैसे ही उनकी रचनाओं में साख्य भाव पनपने लगा। जैसे की हम सब जानते हैं कि मित्रता में सब एक हो जाते हैं और सूरदास जी ने अपनी रचनाओं के द्वारा इस कथन को स्पष्ट भी किया है और हमारे लेखक ने इस कथन को सिद्ध करने के लिए सूरदास की कुछ पंक्तियों को प्रस्तुत किया है जो कुछ इस प्रकार है "भक्त अपने भगवान से साफ कहता है तुम्हें गरज हो तो हजार बार आकर मेरा उद्धार करो और नहीं आना हो तो मत आओ"।

लेखक ने एक और बात भी बताई है सूरदास जी के बारे में एक महत्वपूर्ण बात है हम सब जानते हैं कि सूरदास सगुण भक्ति शाखा के कृष्ण भक्त कवि हैं अपितु सगुण भक्ति शाखा के कवि होने के बाद भी उनकी रचनाओं में हमें निर्गुण ब्रहम की महिमा के बारे में ज्ञात होता है। उदाहरण के लिए सूरदास जी ने कहा है- "पिता मात इनके नहीं कोई। आपहि करता आपहि हरता निर्गुण गये ते रहत है कोई"।

भले ही वैष्णव भक्ति पद्धति निर्गुण ब्रह्म उपासना का ही एक प्रकार है जिसमें साकार पूजा रूपक के रूप में अपनाई गई है, श्री कृष्ण ब्रह्म के प्रतीक है, राधा उनकी शक्ति है, गोपियाँ आत्माएँ हैं, और वृंदावन गोलोक है। यह रासलीला अनादि काल से चली आई है और अनंत काल तक चलती रहेगी। उदाहरण के लिए यह प्रस्तुत पंक्तियाँ देखिये

अविगत, आदि, अनंत, अनुपम, अखिल पुरुष अविनाशी।
पूरन ब्रह्म प्रगट पुरुषोत्तम, निज गोलोक निवासी।

यह पंक्तियाँ पढ़ने के उपरांत हम कभी सोच भी नहीं सकते कि सूरदास जी ने सगुण की उपासना की आवश्यकता का व्याख्यान करते हुए लिखा है- **अविगत गति कछु कहत ना आवे। ज्यों गूँगेहि मीठे फल चाख्यौ रस अंतर्गत ही भावै॥ रूप रेख गुन जाति जुगति बिनु निरालंब मन चकृत धावै। सब विधि अगम बिचारहि ताते सूर सगुन लीला पद गावै।**

आगे लेखक ने पुष्टिमार्ग के सिद्धांतों के बारे में बताया है और पुष्टिमार्ग के कितने प्रकार हैं, उसका भी वर्णन किया है। लेखक ने सूरदास जी के काव्य को हृदयवादी काव्य कहा है क्योंकि सूरदास ने जो भी रचना की है उसमें अनेक प्रकार के राग-रागिनीओं में बंधे सूरों के पदों में साहित्य और संगीत का बहुत ही सुंदर संयोग हुआ है। लेखक ने सूरदास की काव्य शैली व भाषा शैली के बारे में बहुत सुंदर और सटीक विवरण दिया है। मेरे अभिप्राय में हमारे माननीय लेखक श्री विजय तिवारी जी ने सूरदास के काव्यात्मक को इस तरह टटोला

कि हमें अन्य किसी पुस्तक की आवश्यकता नहीं सूरदास के बारे में जानने के लिए क्योंकि लेखक ने उन सभी विषयों को खंगाला और हमारे सामने प्रस्तुत किया है। शोध छात्र, स्नातकोत्तर छात्रों तथा वाचन के शौकीन लोगों को श्री विजय तिवारी द्वारा कृत "सूरदास और उनका काव्यात्मक आभामंडल" बहुत ही सहायक सिद्ध होगा। तिवारी जी ने सूरदास की रचना के हर अंग को बहुत ही सुंदर ढंग से हमारे समक्ष प्रस्तुत किया जो बहुत ही सहारानीय और प्रशंसनीय है।

- कार्तिका एस नायर
(अध्यपिका)
संत अलॉयसियस पी यू कॉलेज, मंगलौरु.

❖

श्रेष्ठ लेखों का महत्वपूर्ण दस्तावेज

–प्रो. कमलेशकुमार चोकसी

गुजरात के हिन्दी साहित्य जगत में श्री विजय तिवारी युवा कवि के रूप में प्रसिद्ध हैं। वे मात्र कवि नहीं हैं, समीक्षक भी हैं। आपके द्वारा भिन्न भिन्न अवसर पर लिखे गये लेखों का संग्रह जिसे उन्होंने **'साहित्य, साहित्यकार और वैश्विक धरोहर'** नाम दिया है, प्रकाशित हो रहा है। इस अवसर पर मैं उन्हें अपनी शुभकामनाएँ देता हूँ। साथ ही यह अपेक्षा रखता हूँ कि वे इसी तरह से काव्य–सृष्टि के सर्जन में तथा काव्य के समीक्षक की तथा भावक की अपनी भूमिका सतत अदा करते रहें।

श्री विजय तिवारी ने मुझे इस प्रकाशन के प्रसंग पर अपना अभिप्राय लिख कर देने के लिये आत्मिक निवेदन किया। मैं यद्यपि हिन्दी साहित्य से अधिक परिचित नहीं है, पुनरपि प्रेमभाव के कारण मैंने इस निवेदन का सहर्ष स्वीकार किया है।

इस लेख संग्रह को उन्होंने अपनी प्रिय पत्नी को समर्पित किया है। कविजन प्रायः नियतिकृत सृष्टि के पर रह कर स्वयं रचित सृष्टि में मग्न रहते हैं। इस परिस्थिति से अलग हटके इन्होंने अपने नियतिकृत सचेतन सृष्टि के प्रति जो आदरभाव प्रदर्शित किया है, उसके लिये मैं सर्वप्रथम उनका अभिवादन करता हूँ।

प्रस्तुत लेख संग्रह में कुल मिला कर चौदह लेख हैं – (1) सूरदास और उनका काव्यात्मक आभामण्डल शीर्षक वाले लेख में आपने सूरसागर के कुछ पद्यों की समीक्षा की है। इससे पूर्व सूरदास के काव्य की पृष्ठिभूमि भी आकारित की है। सूरदास काव्य के प्रति अपने विचारों को प्रस्तुत करते हुए आपने अन्य समीक्षकों के अभिप्राय भी यथास्थान अंकित किये हैं। प्रवर्तमान लेखन में उद्धरणों के पते देने की जो विद्वन्मान्य परम्परा प्रचलित है, उसका यहाँ निर्वहन किया गया होता तो बहुत ही अच्छा होता।

दूसरा लेख (2) हमारी राष्ट्रभाषा और हमारी राष्ट्रीय अस्मिता पर है। आपने बहुत ही सरसता से इस लेख में हिन्दी की वर्तमान स्थिति के बारे में अपने अनुभव प्रस्तुत किये हैं। आपका मानना है कि जनता का कार्य जनता की भाषा में ही होना चाहिये। (पृ. 33)

(3) गुजरात के समकालीन हिन्दी गीतकार – शीर्षक वाले लेख में गुजरात में रचे गये हिन्दी गीतों की समीक्षा की गई है। इस समीक्षा में काव्यात्मक समीक्षा के साथ साथ राजनैतिक तथा सामाजिक समीक्षा का भी समावेश कर दिया गया है।

(4) वैश्विक धर्म – अपने कर्तव्य का पालन – इस लेख में आपने धर्म और कर्तव्य की एकता का प्रतिपादन बहुत ही सटीक रूप से किया है। कर्मण्येवाधिकारस्ते.... जैसी संस्कृत सूक्ति के गूढ़ार्थ को भी अपने विचार से उजागर किया है।

(5) चलो भगवान बनें – भक्त को भगवान बनने के मार्ग को इस लेख में प्रशस्त किया है। आपके विचार से सद्गुण, अच्छाई, प्रामाणिकता, सहानुभूति, प्रेम, सद्भावना, विश्वशान्ति ये ही भगवान का अर्थ है (पृ. 56)

(6) साहित्य में निरूपित प्रकृति चित्रण – इस लेख में लेखक का केन्द्रीभूत विचार है कि साहित्य में प्रकृति का सबसे मनोहारी चित्रण यदि कहीं हुआ है तो वह काव्य है। आपका यह विचार हिन्दी साहित्य के संदर्भ में सही हो सकता है, पर संस्कृत में तो काव्य के साथ नाटक में भी उतना ही मनोहर रूप से प्रकृति चित्रण हुआ है। (यद्यपि संस्कृत भाषा की दृष्टि से तो काव्य शब्द में श्रव्य तथा दृश्य दोनों प्रकार के काव्यों का समावेश होता है। इसे भी ध्यान में रखना चाहिये।) इस लेख में हिन्दी की कुछ सुप्रसिद्ध रचनाओं में चित्रित प्रकृति चित्रण का रसास्वादन करवाया गया है।

(7) विराट व्यक्तित्व के राजल गो – फिराक गोरखपुरी। इस लेख का प्रारंभ करते हुए लिखा है कि इन पर इतना अधिक कार्य हुआ है कि उसे एक दिन में मुकम्मल तौर पर बयान नहीं किया जा सकता। – इस परिस्थिति के होने पर भी आपने अपनी मेघा से इस कार्य को इस लघु लेख में आकारित कर अपनी बुद्धिमता का परिचय करवाने के साथ साथ फिराक गोरखपुरी की रचनाओं से आम जनता को परिचित करवाया है। आपका मानना है कि – फिराक ने ऊर्दू की इश्किया शायरी की कायापलट कर दी है। (पृ. 71)

(8) कबीर – बहुआयामी प्रतिभा के धनी पूर्वाचार्यों की कबीर विषयक धारणा को उद्धृत करते हुए लेखक ने कबीर की प्रतिभा का अपने स्तर पर अवलोकन किया है। इसे प्रस्तुत करते हुए इस लेख में कई विधान किये गये हैं। उनमें से एक है – बाह्याडंबर और बाह्य सौन्दर्य तथा सजाव बनाव के विरोधी कबीर ने कविता में भी उनकी उपेक्षा की है। (आपके इस विधान को पढ़ कर संस्कृत साहित्य में प्रसिद्ध एक न्याय सहज ही स्मरण में आ जाता है – यदि कवि शृङ्गारी है, तो सर्वजगत् शृङ्गारी बन जाता है और यदि कवि वीतराग है, तो संसार भी वैसा ही हो जाता है – शृंगारी चेत् कविः काव्ये जातं रसमयं जगत्। स एव चेदशृंगारी नीरसं सर्वमेव तत्॥ – भोजकृत सरस्वतीकण्ठाभर, (परिच्छेद 5)

(9) पदमावत में पौराणिक पात्र कथा निरूपण। यह लेख रामकथा का पदमावत के रूप में जो अवतार हुआ है, उससे माहितगार करवाता है। इसी अभिप्राय के साथ लेख का उपसंहार किया गया है।

(10) ज़िन्दगी में शोर्टकट कितना जरूरी। साहित्य की समीक्षा के साथ साथ वर्तमान जगत की चिन्ता करने वाले समीक्षक के रूप में यह लेख है। वर्तमान में मानव मशीन बन चुका है। ऐसे मशीनी मानव के लिये यह लेख प्रेरणाप्रद है। इस में लेखक ने शोर्ट कट को अपनाने वाले लोगों को जीवन के सत्य को और उसके आनन्द को न समझने वाले के रूप में दर्शाया गया है। जो सर्वथा सत्य ही है।

(11) उर्दू साहित्य में कौमी एकता। यह लेख भी राष्ट्रीयता की मानवता की भावना को उजागर करने कराने वाला है। साहित्य केवल मनोरंज के लिये नहीं है, वह पारस्परिक सद्भावना का भी प्रसारक है। इस तथ्य को यहाँ उजागर किया गया है।

(12) पं. ब्रजनारायण चकबस्त के कलमी खाके शायरी के जाने माने। कलाकार तथा रचनाकार पं. ब्रजनारायण के योगदान को अंकित करने का इस लेख में उपक्रम किया गया है। लेखक का मानना है कि इनकी शायरी आशिक-माशुक के चोंचलों से निकल कर देशभक्ति तथा कौमी एकता की ओर आगे बढ़ी है।

(13) वली गुजराती – फन और शख्सियत। गुजरात के विभूति के जीवन तथा कवन का परिचय इस लेख में करवाया गया है।

(14) वैश्विक अस्मिता – अहमदाबाद। इस लेख का शीर्षक स्वयं स्पष्ट है। हाल में ही हमारे इस नगर को वर्ल्ड हेरीटेज का दर्जा प्राप्त हुआ है। इस प्रकार यह लेख प्रासंगिक बन गया है।

उपर्युक्त लेखों में विषयों का वैविध्य स्पष्ट है। लेखों का संग्रह होने से ऐसा संभावित ही था। पर, यह संग्रह श्री विजय तिवारी की विज्ञता के व्याप का निर्देश करता है। मैं प्रसन्नता पूर्वक उनके इस प्रकाशन का स्वागत करता हूँ।

अहमदाबाद
ता. 14-4-19
रामनवमी, 2075

प्रो. कमलेशकुमार छ. चोकसी
प्रोफेसर एवम् अध्यक्ष,
संस्कृत विभाग, भाषासाहित्य भवन,
गुजरात युनिवर्सिटी, अहमबाद – 380009.

समकालीन स्थिति का जीवंत आईना

–डॉ. सुनील कुमार

साहित्य तत्कालीन संदर्भों का जीवंत दस्तावेज रहा है। इसी संदर्भ में विजय तिवारी के आलेखों का संकलन **"साहित्य, साहित्यकार और वैश्विक धरोहर"** हमारे सम्मुख है। संकलन में चौदह आलेख संकलित हैं, जो विभिन्न साहित्यकारों एवं समसामयिक विषयों पर केन्द्रित हैं। प्रथम आलेख "सूरदास और उनका काव्यात्मक आभामंडल" में उनके जन्म से लेकर प्रचलित विभिन्न अवधारणाओं पर युक्तिसंगत विचार किया गया है। काव्य बोध के धरातल पर लेखक का मानना है कि सूरदास के काव्य का कोई सानी नहीं है। दूसरा आलेख है "हमारी राष्ट्रभाषा और हमारी राष्ट्रीय अस्मिता" इसमें विभिन्न प्रसंगों सहित हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकारने के औचित्य पर विचार करते हुए हिंदी के अवदान और राष्ट्रभाषा के रूप में यथास्थिति सहित सामाजिकों में व्याप्त भाषिक मनोविज्ञान पर दृष्टिपात किया गया है। लेखक का मानना है कि प्रांत स्तर पर प्रादेशिक भाषा के साथ–साथ राष्ट्रीय स्तर पर हिंदी का प्रयोग होना चाहिए। तीसरे आलेख "गुजरात के समकालीन हिंदी गीतकार" के अंतर्गत गुजरात के सभी प्रमुख गीतकारों का परिचय दिया गया है, जिसमें स्वयं लेखक भी सम्मिलित हैं। चौथा आलेख है "वैश्विक धर्म : अपने कर्तव्य का पालन" इसमें विभिन्न धर्मों का संदर्भ लेते हुए लेखक ने अपने मंतव्य स्वरूप कर्तव्य पालन को वैश्विक धर्म और मानव धर्म माना है। पंचम आलेख "चलो भगवान बने" में लेखक भगवान की अवधारणा को लेकर मनोमस्तिष्क में सामान्य रूप से उठने वाले प्रश्नों की चर्चा, और मनुष्य से देवत्त्व और भगवान बनने के दृष्टांत सम्मुख रखता है। छटे आलेख "साहित्य में निरूपित प्रकृति चित्रण" में साहित्य और प्रकृति के अन्योन्याश्रित संबंध को लेकर उसकी विवेचना की गई है। सातवें आलेख में प्रसिद्ध ग़ज़लकार फिराक गोरखपुरी पर प्रकाश डाला गया है और उनकी ख्यातिलब्ध शायरी का अमूल्य साहित्यनिधि के रूप में उल्लेख हुआ है। साथ ही उनके साहित्यिक अवदान और बेबाक व्यक्तित्व पर भी रोचक ढंग से प्रकाश डाला गया है।

आठवें आलेख में 'कबीर' के व्यक्तित्व और कृतित्व पर प्रकाश डालते हुए उनके जन्म से लेकर रामानंद के शिष्य बनने सहित रचना धर्मिता की चर्चा हुई है। लेखक ने कबीर के व्यक्तित्व तथा कृतित्व को अद्वितीय एवं अद्भुत माना है। नौवां आलेख है "पदमावत में पौराणिक पात्र कथा निरूपण" इसमें। जायसी के प्रसिद्ध महाकाव्य पदमावत में रामायण, महाभारत, पुराण आदि से कथा प्रसंग में आए पौराणिक पात्रों को लेकर सारगर्भित विश्लेषण हुआ है। दसवाँ आलेख "जिंदगी में शोर्टकट कितना जरूरी" समसामयिक विषय पर आधारित है। यहाँ पर उन्होंने शोर्टकट को मृगतृष्णा के समान मानते हुए उसे अस्वीकार किया है। ग्यारहवें आलेख "उर्दू साहित्य में कोमी एकता" के अंतर्गत धार्मिक वैमनस्य के निराकरण में उर्दू साहित्य के योगदान पर प्रासंगिक रूप से विचार–विमर्श किया गया है। बारहवें आलेख में उर्दू शायरी के प्रसिद्ध हस्ताक्षर पं. बजनारायण चकबस्त जिन्हें उर्दू, संस्कृत और अवधी भाषा का पूर्ण ज्ञान था, उनकी उर्दू शायरी और रचना कर्म पर विस्तार से प्रकाश डाला गया

है। तेरहवें आलेख में दक्खनी हिंदी के ख्यातिलब्ध रचनाकार वली गुजराती की शायरी को लेकर सारगर्भित विवेचना की गई है। चैदहवाँ आलेख "वैश्विक अस्मिता अहमदाबाद" जो इस संकलन का आखिरी आलेख है और यूनेस्को द्वारा अहमदाबाद को वर्ल्ड हेरीटेज (वैश्विक धरोहर) का दर्जा दिए जाने के संदर्भ में है। इसमें शहर की ऐतिहासिक, साँस्कृतिक और सामाजिक विशेषताओं के साथ–साथ शहर की स्थापत्य कला तथा नगर व्यवस्था के विषय में बहुत रोचक ढंग से प्रकाश डाला है।

संकलन नवीन कलेवर और मौलिकता लिए हुए है। लेखक ने संबंधित विषय–वस्तु का रोचक शैली में प्रस्तुतिकरण किया है। सभी आलेख सम्यक जानकारी से परिपूर्ण हैं। संकलन सुधि पाठकों की कसौटी पर खरा उतरेगा ऐसा मेरा विश्वास है।

डॉ. सुनील कुमार
क्षेत्रीय निदेशक
केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, अहमदाबाद केन्द्र
बालभवन, बापुनगर,
अहमदाबाद – 380024

कृति के दोहे कीर्ति दें...

–डॉ. प्रेमशंकर त्रिपाठी

हिन्दी कविता का अत्यंत प्राचीन एवं सर्वप्रिय छंद है दोहा। साहित्य के आदिकाल से लेकर आजतक उसकी लोकप्रियता अव्याहत रही है। पाली, प्राकृत, अपभ्रंश हो या अवधी, भोजपुरी, मैथिली आदि भाषाएँ – सभी का भंडार इस छन्द से समृद्ध हुआ है। खड़ी बोली हिन्दी के प्राचीन – नवीन, स्थापित – नवोदित रचनाकारों को इसने समानरूप से आकृष्ट किया है। कबीर, नानक, दादू, तुलसी, जायसी, रहीम, वृन्द, बिहारी ही नहीं, आधुनिक काल के कवियों ने भी दोहों से अपार यश प्राप्त किया है। दोहों की महत्ता का बखान करते हुए नीरज ने लिखा ही है –

जो जन–जन के होंठ पर, बसे और रम जाय।
ऐसा सुन्दर दोहरा, क्यों न सभी को भाय॥

सुनने–पढ़ने में दोहा जितना सहज लगता है, इतना सरल वह होता नहीं है। छोटी सी दो पंक्तियों और चार चरणों में बड़ा संदेश कोई सिद्ध रचनाकार ही दे सकता है। अन्योक्ति, समासोक्ति आदि गुणों से सम्पन्न दोहे अपनी लघु परीधि में भी अर्थ की विराटता समेटे रहते हैं और रसिकों को पुलकित करने की क्षमता से युक्त होते हैं 'बिहारी सतसई' के दोहों के लिए चर्चित है यह उक्ति –

सतसैया के दोहरे, ज्यों नावक के तीर।
देखन में छोटे लगें, घाव करें गंभीर॥

सतसई परम्परा हाल की 'गाथा सप्तशती' गोवर्द्धनाचार्य की 'आर्या सप्तशती' से होती हुई तुलसी, वृंद, रहीम, मतिराम आदि के सतसई ग्रंथों तक आती है। इस क्रम में 'बिहारी सतसई' सर्वाधिक चर्चित कृति के रुप में परीगणित की जाती है। 700 से अधिक दोहोंवाली इन रचनाओं के क्रम में इन दिनों दोहा शतक, दोहा द्विशती आदि रचनाएँ भी देखी जाती हैं। परन्तु इधर के कुछ वर्षों में मेरी नज़र में किसी आधुनिक कवि की 'सतसई' नहीं आई थी। अतः अहमदाबाद के कवि श्री विजय तिवारी की 'विजय सतसई' की पाण्डुलिपि देखकर मुझे आश्चर्यमिश्रित हर्ष हुआ। दोहों के प्रति स्वाभाविक स्नेह के कारण पहले मैंने कृति का सिंहावलोकन/ विहंगावलोकन तो कर लिया लेकिन इस प्रक्रिया ने मुझे इन दोहों को ठहरकर पढ़ने की प्रेरणा दी। कह सकता हूँ कि विविध विषयों पर सीधी–सादी, लेकिन प्रभावी अभिव्यक्तियों के कारण विजयजी के दोहों ने मेरा मन मोह लिया।

श्री विजय तिवारी से मेरा परिचय 'हृदयांगन' संस्था के भव्य वार्षिक अनुष्ठान में देहरादून में हुआ था। उस एक दिवसीय आयोजन के अन्तर्गत दो सत्रों का कवि सम्मेलन भी सम्पन्न हुआ था, जिसमें लगभग चालीस कवियों ने काव्यपाठ किया था। प्रथम – सत्र का गरीमापूर्ण संचालन विजयजी ने किया था। मुझे स्मरण है कि अपनी रचनाओं से उन्होंने श्रोताओं का अपार स्नेह प्राप्त किया था। मैं उस आयोजन से उनका एक दोहा गुनगुनाते हुए

लौटा था –

जीभ हिलाई तो मुझे, मिला बहुत अपमान।
पूँछ हिलाई गैर ने, पाया वो सम्मान॥

दोहा चाहे भक्तिपरक हो या नीतिपरक; राष्ट्र की गरिमा का बखान करता हो या पारिवारिक सम्बन्धों की महिमा का साँस्कृतिक गौरव का निनाद करता हो अथवा ओजस्विता का शंखनाद, समाज की संगति – विसंगति का अंकन करता हो या परम्परा आधुनिकता के द्वन्द्व का विवेचन समर्थ कवि की लेखनी का स्पर्श पाकर पाठकों/ श्रोताओं के दिल में उतर जाता है। सरल शब्दों में बड़ा संदेश देने का जटिल कार्य ऐसे कवि सहज रुप से कर पाते हैं। मुझे यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि विजयजी के ये दोहे इस क्षमता से सम्पन्न हैं। उदाहरण स्वरुप प्रस्तुत हैं इसी पुस्तक के दोहे –

मुझसे सुख का हो रहा, लगातार संवाद।
मेरे सर पर है अभी, माँ का आशीर्वाद॥

तेरे कर्मों से अगर, ख़ुश होंगे भगवान
तो बेटी के रूप में, पायेगा वरदान॥

मानेगा कोई नहीं, कोरा सच मत बोल।
झूठ अदाकारी ज़रा, पहले उसमें घोल॥

बोल नहीं सकता अभी, गूँगा है यह देश।
भाषा इसकी है नहीं, और नहीं है भेष।

जन्मभूमि है राम की, अवधपुरी अभिराम।
इसकी मिट्टी को सदा, करता विश्व प्रणाम॥

राम–कृष्ण का देश यह, संस्कृतियों का मूल॥
मोहक इसका रूप है, पावन इसकी धूल॥

सुख में इतराऊँ नहीं, दुख में नहीं निराश।
समरस रखना हे प्रभो, बस इतनी है आस॥

कृति के दोहों से गुजरते हुए मुझे बार–बार याद आ रही थी कवि सूर्यकुमार पाण्डेय (लखनऊ) रचित चार पंक्तियाँ

रचना अपनी अंतर–लय से झंकृत होती है,
कवि – वाणी बस शब्द नहीं, वह अमृत होती है।

जिसको सुनकर – पढ़कर, जनमन रंजित होता हो
वह ही सच्चा कवि, जिसकी कृति उद्धृत होती है।

मुझे विश्वास है कि 'विजय सतसई' के दोहे सुनकर – पढ़कर काव्य प्रेमी पाठकों का मन प्रफुल्लित तो होगा ही और ये दोहे लोगों की जुबान पर बस कर उद्धृत भी होंगे।

मैं श्री विजय तिवारी की इस कृति का स्वागत करता हूँ और अपनी ओर से अधोलिखित दोहे के माध्यम से उन्हें शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ।

कृति के दोहे कीर्ति दें, देवी दें वरदान।
पाठकगण निज प्रेम दें, बढ़े मान–सम्मान॥

– डॉ. प्रेमशंकर त्रिपाठी
वरिष्ठ साहित्यकार
निवृत्त ऐसो. प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष
कोलकाता, विश्वविद्यालय

❖

समाज का आईना है – विजय सतसई

– सुषमा मल्होत्रा

विजय तिवारी को "विजय सतसई" के लिए शुभकामनाएँ देते हुए मुझे प्रसन्नता हो रही है।

विजय तिवारी की पुस्तक "विजय सतसई" वास्तव में "सतसई" शब्द "सत" और "सई" से बने हुए शब्द का प्रतीक है। जैसा कि "सत" का अर्थ सात और सई का अर्थ "सौ" है। इस प्रकार सतसई काव्य वह काव्य है जिसमें एक ही कवि के सात सौ छंद होते हैं। सतसइयों में प्रमुख रूप से "दोहा" छंद का प्रयोग होता है; "दोहा" के साथ "सोरठा" और "बरवै" छंद का प्रयोग भी सतसईकार बीच बीच में कर देते हैं। सतसइयों, में प्रमुख रूप से श्रृंगाररस की प्रधानता है। श्रृंगारप्रधान सतसईयों में श्रृंगार के साथ नीति तथा भक्ति और वैराग्य के दोहे भी मिलते हैं, तुलसी सतसई में भक्ति के दोहों की प्रधानता है। मुख्य रूप से श्रृंगार और नीति इन दोनों की प्रधानता सतसइयों में देखने को मिलती है।

"विजय सतसई" में विजय तिवारी के अपने लिखे हुए सात सो दोहे हैं। इन दोहों में उन्होंने अलग अलग विषयों को लेकर अपने भाव के इर्द गिर्द अपने शब्दों में उन्हें पिरो दिया है। पुस्तक के आरम्भ में वे तुलसी सतसई के भक्ति रूप को लेकर प्रभु से प्रार्थना करते हैं और वरदान माँगते हैं। उनके शब्दों में उनकी भक्ति और ईश्वर पर आस्था और विश्वास का प्रमाण है। इसमें प्रारंभ से लेखक विजय तिवारी श्री गणेश, माँ सरस्वती, श्री हनुमान और शिव भगवान का आशीर्वाद माँगते हैं और लिखते हैं –

शक्ति भक्ति औ' मुक्ति का, दो मुझको वरदान ।
बस इतनी है प्रार्थना, सुनिए श्री हनुमान ।।

विजय तिवारी स्वयं एक कवि हैं और कविता एवं ग़ज़ल लिखने में बहुत निपुण हैं। परन्तु अब इस पुस्तक में उन्होंने अलग अलग अनुभूति, भाव और विषय लेकर इस पुस्तक को जन्म दिया है। प्रकृति तथा अपने बड़ों के प्रति अपने जुनून से सात सौ दोहे लिख चुके हैं। कवि विजय जानते हैं कि वे एक कवि तो हैं ही परन्तु वे प्रभु से वरदान माँग रहे हैं कि वे भी मीरा, सूरदास और तुलसी की भाँति लिख सकें और अपना नाम प्रसिद्ध कर सकें।

विजय सतसई के दोहे पढ़ने वाले के भीतर देश प्रेम के भाव जागृत करते हैं। विजय तिवारी को देश से प्रेम है और वह इनकी पुस्तक विजय सतसई में स्पष्ट दिखाई देता है जहाँ ये लिखते हैं भारत की संस्कृति विश्व में महान है। देश प्रेम के लिए इन्होंने कहा है कि धर्म और विज्ञान में भी भारत विश्व में सबसे आगे है। भारत के वीरों की गाथा का वर्णन करते हैं जिसमें विशेषकर सुभाष, लक्ष्मी बाई और महाराणा प्रताप के बारे में लिखा है।

विविध जाती औ' धर्म है, भारत की पहचान ।
है अनेकता में छिपी, इसकी शक्ति महान ।

मान रहा अब विश्व भी, है बस यही महान।
श्रेष्ठ सनातन संस्कृति, भारत की पहचान॥

भारत की संस्कृति सदा, जग में रही महान।
सागर चरण पखारता, हिमगिरि करे वितान॥

प्राचीन काल में सतसई एक ही विषय पर केन्द्रित दोहों का संकलन होता था। किन्तु समय के साथ – साथ बदलाव आए और अब तो सतसई में अनेकों विषयों के विविध रंगों से सज्ज दोहे भरपूर मात्रा में पाये जाते हैं। शायद ही कोई ऐसा विषय रहा हो जो दोहों से अछूता रह गया है। इसी तरह "विजय सतसई" पुस्तक में कई तरह के विषयों को लेकर कवि ने दोहों का संकलन तैयार किया है।

कवि के दोहों में मानवता और मानव के स्वभाव के विचार भी झलकते हैं जब वे कहते हैं कि –

मूर्ख जब उपदेश दे, तब तू हो जा मौन।
उसकी चकचक में भला, तुझे सुनेगा कौन॥

जग को मित्र बनाइये, करिये सब से बात।
पर सतर्क रहिये सदा, कौन कर रहा घात॥

इसी तरह विजय तिवारी अपनी पुस्तक सतसई में उत्साहजनक और प्रोत्साहित करते हुए दोहे लिखकर युवकों को जीवन की मंज़िल की और बढ़ने के लिए कहते हैं। इनके दोहों से अनुशासन, भ्रष्टाचार, और कानून भी अछूते नहीं रहे हैं।

"अंधे हैं कानून सब, बहरी है सरकार।....."
जिसके शासन में कभी, दुखी हुआ मज़दूर ....."

एक और दोहा जो राजनीति पर सीधा कटाक्ष है

"राजनीति में आइये, धुल जायेंगे पाप।
वर्ना सच के साथ भी, गुनहगार हैं आप।"

आजकल के समय में जो बुजुर्ग माता पिता की हालत है उस पर भी आपने इस प्रकार लिखा है –

बंगले में बेटा रहे, वृद्धाश्रम माँ-बाप।
नये दौर का देखिये, ये कैसा अभिशाप॥

विश्व प्रसिद्ध एक सतसई का नाम उभर कर सामने आता है, और वो है बिहारी लाल की "बिहारी सतसई" श्रृंगार रस से भरपूर इस सतसई ने सतसई परम्परा को विशेष स्थान और गति प्रदान की है। उन्ही का अनुसरण करते हुए कवि विजय ने कुछ श्रृंगार रस पर भी दोहे लिखे हैं।

मोहक तेरी हर अदा, मतवाले हैं नैन।
तुझे देखने के लिए, रहते हैं बेचैन।

मृगनयनी, गजगामिनी, चंद्रमुखी कचनार।
अद्‌भुत, अतुल अमूल्य है, तेरा रूप अपार॥

ज्यों ज्यों मैं विजय सतसई को पढ़ती गई तो मुझे नए नए विषयों पर दोहे पढ़ने को मिलते गए। यूँ महसूस हो रहा था कि मैं विजय सतसई के सारे दोहे यहाँ पर दोबारा से लिख दूँ। परन्तु कुछ दोहे मैं अवश्य चाहूँगी कि अपनी शुभकामनाओं में लिखूँ जिनमें कवि विजय ने माँ का आशीर्वाद प्राप्त कर सुख महसूस किया है –

मुझसे सुख का हो रहा, लगातार संवाद।
मेरे सर पर है अभी, माँ का आशीर्वाद॥

अतः मैं यह कहना चाहूँगी कि जिस के ऊपर माँ का आशीर्वाद है उस पर प्रभु की कृपा तो सदैव रहती है।

मैं विजय तिवारी को उनकी पुस्तक "विजय सतसई" के लिए बधाई एवं कोटि कोटि साधुवाद देती हूँ। शुभकामना सहित आशा करती हूँ कि उनकी लेखनी इसी प्रकार चलती रहे। भविष्य में किसी अन्य विषय पर भी लिख कर वे साहित्य के क्षेत्र में अपना परचम यूँ ही फैलाते रहें।

– सुषमा मल्होत्रा
सहायक व्याख्याता
क्वींस कॉलेज
सिटी युनिवर्सिटी ऑफ न्यूयॉर्क
न्यूयार्क
एवं
सेवानिवृत्त सहायक प्राचार्य
शिक्षा विभाग न्यूयॉर्क शहर

❖

दुर्गुणों पर सद्‌गुणों की विजय – विजय सतसई

– डॉ. अनु मेहता

हिंदी साहित्य में सतसई परंपरा का सुंदर – समृद्ध इतिहास प्राप्त होता है। हम जानते हैं कि हिंदी साहित्य के इतिहास के विविध कालों में हमें अनेक साहित्यकारों द्वारा लिखित सतसइयाँ प्राप्त हुई हैं। हम सबके लिए यह प्रसन्नता और गौरव का विषय है कि 21वीं सदी में भी यह परंपरा आगे बढ़ रही है तथा इस संदर्भ में विजय तिवारी जी द्वारा रचित विजय सतसई भी सतसई परंपरा की एक महत्वपूर्ण कड़ी बन पड़ी है। भारतीय संस्कृति के अनुरूप मंगलाचरण के रूप में विविध देवी देवताओं की स्तुति एवं प्रार्थना से शुरू हुई इस सतसई में कुल 772 दोहों का समावेश है। "वसुधैव कुटुंबकम्" तथा "बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय" की भावना से प्रेरित आस्थावान कवि भक्ति, शक्ति और मुक्ति की कामना करते हुए अपने आराध्य देवी–देवताओं के प्रति नतमस्तक होता है तथा उनसे मानवता की राह पर चलने एवं अहं सहित तमाम दुर्गुणों से मुक्ति पाने की कामना करता है। अपनी मिट्टी से जुड़े हुए इस कवि का धरा के प्रति, संस्कृति के प्रति, देश के प्रति प्रेम गुजरात तथा भारत का गौरव गान करने वाले दोहों में साफ़ नज़र आता है। कवि लिखता है –

टुकड़ा नहीं ज़मीन का, मेरा भारत देश।
मानवता महके यहाँ, जीवित है परिवेश॥

अपनी मिट्टी की ख़ुशबू लिए हुए अनेक दोहे हमें सतसई में देखने को मिलते हैं। हमारी भारतीय संस्कृति हजारों वर्षों पुरानी संस्कृति है और भारत की रत्नगर्भा धरती देशभक्तों, वीरों, महापुरुषों, संत–महात्माओं की धरती है और कवि ने भी अपने दोहों में अलग–अलग जगह अलग–अलग महानुभावों के योगदान को भी यहाँ इंगित किया है। मात्र देश ही नहीं बल्कि सरहद पर जाकर देश की रक्षा करने वाले सेना के जवानों को भी सतसईकार भूला नहीं है –

कैसी भी हो आपदा, सेना करे बचाव।
प्रेमभाव सबके लिए, कोई नहीं दुराव॥

वैर–वैमनस्य को भूलकर मानवता की राह को सर्वश्रेष्ठ मानने वाला कवि अपने दोहों के माध्यम से देश को सर्वधर्म समभाव का एवं हिंदू–मुस्लिम एकता का भी संदेश देता है और देश के लोगों को एकता के सूत्र में बंधने के लिए प्रेरित करता है।

संस्कृति के उत्तमांशों से समन्वित हमारी परंपराएं भारतीय संस्कृति की परिचायक हैं। साहित्योपासक कवि भी साहित्य ज्ञान की समृद्ध परंपरा को प्राप्त करना चाहता है। इसलिए लिखता है, –

तुलसी, मीरा जायसी, सूरदास रसखान।
उनके जैसा लिख सकूँ, ऐसा चाहूँ ज्ञान॥

लोकमंगल की कामना से युक्त कवि लोगों को काम, क्रोध, लोभ, ईर्ष्या जैसे दुर्गुणों

से मुक्त होने का आग्रह कर मन को साफ़ रखने की हिदायत भी देता है –

तन की चिंता छोड़ दे, मन को कर ले साफ़।
वरना कोई भी 'विजय', नहीं करेगा माफ़॥

हम जानते हैं कि सत्य का मार्ग मुश्किल तो है लेकिन अपराजेय है। सत्य और अहिंसा का पक्षधर कवि मानव को विविध व्यसन, मांसाहार आदि को त्यागने और दीन दुखियों की सेवा करने का संदेश देते हुए निर्भय होकर सत्य के मार्ग पर अडिग रहने का आह्वान करता है –

दीप जलाकर सत्य का, मत हो तू भयभीत।
तूफानों में भी हुई, सदा इसी की जीत॥

कहा गया है – यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः। यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः॥ अर्थात जहाँ स्त्रियों की पूजा होती है, वहाँ देवता निवास करते हैं और जहाँ नारियों की पूजा नहीं होती है वहाँ समस्त (अच्छी से अच्छी) क्रियाएं (कर्म) निष्फल हो जाती हैं। कवि भी अपने दोहों के माध्यम से नारी के हर रूप को सम्मानीय – स्तुत्य मान नारी शक्ति की वंदना करता है, विशेष कर नारी के माता स्वरूप की आराधना करता हुआ कहता है –

माँ के जैसा कौन है, माँ तो है बेजोड़।
माँ की तुलना के लिए, कौन करेगा होड़॥

मानव मात्र के लिए बड़ा सौहार्द और प्रेम होने के कारण कवि का हृदय किसी भी प्रकार के शोषण, अन्याय और अत्याचार का सख्त विरोध करता है। यही कारण है कि वह मज़दूर, श्रमिक और किसान की पीड़ा को देखकर द्रवित को उठता है–

सूखे सारे खेत हैं, सूखे सब खलिहान।
हाल यही सब देख के, चिंतित बहुत किसान॥

कोई संदेह नहीं है कि घर के बुजुर्ग घर की नींव होते हैं। किंतु हम देखते हैं कि सम्मान और प्यार के अधिकारी ये बुजुर्ग अपने ही घर में उपेक्षा, अपमान और अवहेलना के शिकार होते हैं और चाहे अनचाहे परिवार और परिस्थितियों से त्रस्त एवं विवश होकर वृद्धाश्रम में धकेल दिए जाते हैं। वर्तमान समय में वृद्धाश्रमों में वृद्धों की संख्या का बढ़ते जाना समाज पर प्रश्नचिह्न खड़ा करता है। कवि के हृदय में भी ऐसे क्षोभनीय स्थिति को लेकर मलाल है –

वृद्धाश्रम संस्कृति नयी, पनपी चारों ओर।
ऊषा में भी दिख रही, मुझको काली कोर॥

अपने देश धरती से प्रेम करने वाला कवि देश की समस्याओं को लेकर भी पूर्णत: सजग है। इसी कारण वह पर्यावरण के प्रति अपनी चिंता–संवेदना व्यक्त करता है। नदी, धरती, हवा प्रदूषण का विरोध करता है तथा मानव को चेतावनी देता है कि अगर प्रदूषण और पर्यावरण से छेड़छाड़ को नहीं रोका गया तो वह दिन दूर नहीं जब उसका अस्तित्व खतरे में पड़ जाएगा –

हम कुदरत के नियम के, रहें सदा अनुकूल।
जड़ समेत मिट जायंगे, अगर गए प्रतिकूल॥

मानव की स्वार्थ प्रवृति तथा लोभ – लालसा के कारण आज पर्यावरण असुरक्षित एवं असंतुलित होता जा रहा है। हर तरफ़ प्रदूषण देखने को मिलता है। यही कारण है कि कवि कुदरती आपदाओं को कहीं ना कहीं मानव सर्जित मानता है –

कुदरत के ही कोप हैं, आँधी या तूफान।
छेड़ा है तूने 'विजय', आया तभी उफान॥

बड़े साफ़ शब्दों में कवि पर्यावरण की और से बेपरवाह लोगों को उनकी करनी के लिए खरी–खरी सुनाता है –

नदियों को दूषित किया, वन को दिया उजाड़।
धरती डाली खोद सब, काटे सभी पहाड़॥

सतसई के अनेक दोहों में वर्तमान राजनीतिक परिदृश्य को लेकर भी कवि चिंतित निराश दिखाई देता है और नेताओं के दोगले चरित्र पर वार करता है –

नेताओं ने देश का, ऐसा किया विनाश।
धर्म, अर्थ और नीति पर, नहीं रहा विश्वास॥

शिक्षा तथा शैक्षिक संस्थानों के गिरते स्तर को लेकर भी कवि अपना रोष जाहिर करता है –

जोर शोर से हो रहा, शिक्षा का व्यापार।
डूबे हैं आकण्ठ ये, राजा साहूकार॥

सोशल मीडिया के बढ़ते प्रचार प्रसार से हम सब परिचित हैं और जिस तरह से हर सिक्के के दो पहलू होते हैं। इस तरह से सोशल मीडिया के कारण लोगों को एक मुक्ति मंच मिला है और अपनी अभिव्यक्ति को प्रस्तुत करने का एक उम्दा रास्ता प्राप्त हुआ है। किंतु वहीं पर कविता के नाम पर कुछ भी परोस देने वालों की बाढ़ को देखकर भी कवि को हैरानी है। साथ ही कविता के गिरते स्तर को देखकर भी वह बहुत परेशान है –

कवि सम्मेलन में हुआ, बस फूहड़ परिहास।
और विदूषक मसखरे, करते हैं उल्लास॥

और लोगों के हाथों होती कविता की दुर्गति को देखकर कवि का दुखी मन लिखता है–

मोबाइल पर हो रहे, कवि सम्मेलन खूब।
कविता पढ़ पाओ सनद, और मिटाओ ऊब॥

स्तरीय कविताओं तथा गरिमामयी कवि-सम्मेलनों की कमी कवि को बेहद अखरती है–

कविताओं को देखकर, कलम हो गई बंद।
तुकबंदी बेहाल है, हार गए हैं छंद॥

भाषा मात्र सम्प्रेषण का माध्यम नहीं होती बल्कि राष्ट्र का गौरव एवं उसकी पहचान होती है। कवि अंग्रेजी के बढ़ते वर्चस्व को देख कर क्षुब्ध है। लोगों की हिंदी भाषा के प्रति उदासीनता कवि को पीड़ा देती है। हिंदी भाषा की महिमा उजागर करते हुए कवि का भाषा–प्रेम यहाँ पर व्यक्त हुआ है –

भाषाओं में विश्व की, हिंदी बहुत सशक्त।
इसमें मन के भाव सब, हो सकते हैं व्यक्त॥

पत्रकारिता को लोकतंत्र का चौथा स्तंभ माना जाता है। कवि पत्रकारिता के महत्व को समझता है कि पत्रकारिता का निष्पक्ष और सत्य निष्ठ होना बेहद जरूरी है। किंतु जब पत्रकारिता में यह गुण नहीं रहते तो वह अपना अर्थ खो देती है तथा लोग वास्तविकता से अनभिज्ञ रह जाते हैं। इसलिए कवि पीत – पत्रकारिता पर व्यंग्य कसता है –

समाचार सब बिक रहे, बिकते हैं अखबार।
पत्रकारिता बन गई, चाट मसालेदार॥

वर्तमान समय में संबंधों में स्वकेंद्रीयता, स्वार्थ और महत्वाकाँक्षाएँ बढ़ी हैं। किसी विलुप्त होती प्रजाति की भाँति आज संयुक्त परिवार भी खत्म होते जा रहे हैं और उनका स्थान एकल परिवारों ने ले लिया है। कवि की लेखनी इस ओर भी इशारा करती है –

घर टूटा, आँगन गए, बस रह गए मकान।
पक्का लालच स्वार्थ है, कच्चे हैं बस कान॥

संवेदनहीनता की समस्या विकराल है। संबंध औपचारिक और सतही बन गए हैं। अब संवेदना प्रदर्शित करने के लिए इमोजी प्रयुक्त किए जाने लगे हैं। यंत्रवत मानव जीवन की इस कटु सच्चाई के संदर्भ में कवि लिखता है –

मोबाइल पर निभ रहै, सामाजिक संबंध ।
लेकिन हृदय कपाट तो, भीतर से है बंद॥

आत्मविश्वास हर मनुष्य के विकास के लिए बेहद जरूरी है जो मनुष्य को जीवन–संघर्ष से सफलतापूर्वक पार उतरने के लिए प्रेरित करता है। यही आत्मविश्वास कवि की ताकत है और इस बात की झाँकी हमें उनके कई दोहों में मिलती है –

नन्हा दीपक ही सही, लेकिन हूँ दमदार।
घने अंधेरे काँपते, माने मुझसे हार॥

हमारी संस्कृति में कर्म का बहुत महत्व है। 'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन' – कर्म की ओर प्रेरित करने तथा जीवन जीने की कला सिखाने वाला सूत्र है प्रारब्ध से अधिक पुरुषार्थ पर बल देने वाला सतसईकार मानव मात्र को कर्मठ बने रहने का संदेश देते हुए निरंतर कर्म में प्रवृत रहने और कठोर परिश्रम करने का आह्वान करता है –

श्रम को इतना साध तू, हो ईश्वर हैरान।
ख़ुश होकर फिर वह कहे, अब तो ले वरदान॥

इस सतसई के सफ़र से गुजरने के बाद यह स्पष्ट महसूस होता है कि इस दूरदर्शी कवि के जीवन अनुभव बहुत व्यापक और गहन हैं और यही कारण है कि उनके दोहों में हमें मानव जीवन तथा समाज के यथार्थ निरूपण के विविध चित्र सहज ही उपलब्ध हो जाते हैं जो समाज – जीवन की दशा–दिशा से हमें परिचित करवाते हैं। इस संदर्भ में कवि की आत्मस्वीकृति भी प्राप्त होती है –

अनुभव सब दिल से लिखे, और लिखे जज़्बात।
कभी सुखों की रोशनी, कभी दुखों की रात॥

सतसई के अंत में हम देखते हैं कि जीवनानुभवों से समृद्ध प्रौढ़ावस्था को प्राप्त कवि का हृदय पुन: बाल्यावस्था की ओर लौटने को आतुर है। बचपन के प्रति कवि का प्रेम यथावत है। कहीं ना कहीं हमें लगता है कि कवि समाज और जीवन की विसंगतियों और विद्रूपताओं से बेहद परेशान और आहत है और शायद इसी कारण वह उस बचपन में लौट जाना चाहता है, वह बचपन जो निर्दोष, निष्कपट, मासूम, और सहज – सरल है।

प्रकृति का तो सवर्धन–सरंक्षण होना चाहिए। प्राकृतिक सौदर्य मानव जीवन के लिए ईश्वर का दिया हुआ अनमोल तोहफ़ा है। सतसई में प्राकृतिक सौंदर्य के भी कुछ दोहे प्राप्त होते हैं –

गेंदा, जूही, मोगरा, महके हरसिंगार।
आभा बहुत गुलाब की, खूब खिला कचनार॥

विविध रसों का निर्वाह सतसई की विशेषता है। श्रृंगार जिसे रसराज कहा जाता है, के कई दोहे हमें यहाँ प्राप्त होते हैं। श्रृंगार में नख – शिख वर्णन तथा विरह–मिलन से संबंधित पद हैं। किंतु विशेष रूप से कवि का मन श्रृंगार के वियोग पक्ष की अपेक्षा संयोग पक्ष में अधिक रमा है। कवि नायिका का रूप वर्णन करते हुए उसके सौन्दर्य को विविध उपमाओं से अलंकृत करता है –

मृगनयनी गजगामिनी, चंद्रमुखी कचनार।
अद्‌भुत अतुल, अमूल्य है, तेरा रूप अपार॥

दोहा छंद का निर्वाह करते हुए भावपक्ष की दृष्टि से सबल एवं किसी भी प्रकार की क्लिष्टता या दुरूहता से रहित सरल–सहज तथा संप्रेषणीय भाषा में लिखी इस **विजय सतसई** में हमें कवि के लोकमंगल से पूरित संवेदनशील किंतु सजग हृदय के दर्शन होते हैं। पूरी सजगता – सतर्कता से जीवन और समाज में फैले दुर्गुणों, समस्याओं, चुनौतियों को कवि अपने निशाने पर रखता है, वहीं वह मनुष्य जीवन को सुंदर बनाने वाले सभी सद्‌गणों की पैरवी भी करता दिखाई देता है।

हमारी 21वीं सदी जो अब 24 साल की हो गई है और जहाँ कई विधाएँ समय की मार झेल रही हैं – ऐसे में विजय तिवारी जी की ओर से हिंदी साहित्य को 772 दोहों की साहित्य निधि प्राप्त हुई है। जीवन जीने की कला की ओर इंगित कर जीवन जगत की समस्याओं और विसंगतियों को ताक पर रख मानवता और सद्‌गणों की राह पर चलने और

दुर्गुणों को छोड़ परिश्रम और पुरुषार्थ के माध्यम से मनुष्य को जीवन में आगे बढ़ने का सुंदर संदेश दे रही है। इस समय साहित्य में एक अच्छी सतसई का आगमन हिंदी साहित्य समृद्धि की संभावनाओं की ओर शुभ संकेत है जो प्रशंसनीय एवं अभिनंदनीय है। माँ सरस्वती की कृपा विजय जी पर सदैव बनी रहे और उनकी लेखनी अनवरत चलती रहे, ऐसी मंगल कामना करती हूँ तथा आशा करती हूँ कि पाठक वर्ग के लिए यह सतसई संग्रहणीय और स्पृहणीय सिद्ध होगी।

दिनांक–1–5–2024
गुजरात स्थापना दिवस

– डॉ. अनु मेहता
आचार्य एवं कवयित्री
आनंद इंस्टिट्यूट ऑफ़ पी. जी. स्टडीज इन आर्टस,
आनंद, गुजरात

❖

विजय सतसई में जीवन के रंग

– डॉ. पूनम झा

वर्तमान में सतसई हिन्दी साहित्य की सबसे लोकप्रिय विधा के रूप में प्रचलित है। यह मुक्तक काव्य की एक विशिष्ट विधा के रूप में ख्यात है। इसकी मुख्य विशेषता यह है कि इसके अंतर्गत कविगण 700या 700 से अधिक दोहे लिखकर एक ग्रंथ की रचना करते हैं। 'सत्' और 'सई' शब्द से सतसई शब्द का निर्माण हुआ है, जिसका अर्थ सामान्यतः सात सौ है। अत: सतसई वह काव्य रचना है जिसमें सात सौ छंद होते हैं।

प्रस्तुत संकलन '**विजय सतसई**' 772 दोहों का संकलन है । विजय जी जिन्हें मैं श्रद्धा से भाई साहब बुलाती हूँ, मुख्य रूप से कवि हैं, परंतु कवि के साथ साथ गीत, छंद बद्ध कविता, सवैया, कवित्त आदि में भी नित निरंतर कलम चलाते रहे हैं। हिन्दी साहित्य की अत्यंत लोकप्रिय विधा छंद, दोहा जिससे संपूर्ण विश्व प्रभावित है जो स्वयं कवि के शब्दों में इस प्रकार व्यक्त हुआ है "भला मैं कैसे इससे बच सकता था।" कवि का मूल स्वर ग़ज़ल है, परंतु विजय सतसई लिखकर इन्होंने यह प्रमाणित कर दिया है कि दोहा सवा शेर है।

विजय सतसई में मुख्य रूप से जीवन के हरेक रंग को बड़ी गहराई से रंगा गया है जैसे देश भक्ति, ईश्वर आराधना, राष्ट्रीय चेतना, दर्शन, भय, त्रास, कुंठा, संयोग– वियोग, रिश्ते–नाते आदि विषयों को अत्यंत यथार्थ रूप में रूपाकार किया गया है।

कवि विजय की यह अपनी खास विशेषता है कि सतसई परंपरा के समस्त कवियों को भी सहृदयता के साथ स्मरण करते हुए अपनी रचना को जोड़ने का सुन्दर प्रयास किया है। विजय सतसई की यह पंक्ति पढ़कर ही यह एहसास हो जाता है कि कवि ने जीवन और जगत को कितना निकट से जाना और भोगा है जो इस प्रकार व्यक्त हुआ है –

रामनाम जप छोड़कर, खुद को ही पहचान।
तेरे भीतर हैं बसे, त्रिभुवनपति भगवान॥

वास्तव में मनुष्य यदि खुद को पहचान ले तो जीने की कला वह खुद ब खुद सीख लेगा। अपनी रचना में कवि ने नीति और रीति का भी अत्यंत चित्रात्मक वर्णन किया है जो दिल को छू लेता है और हम भावविभोर हो जाते हैं।

छल, कपट, स्वार्थ जो जन जन में बसा है और जन जन इस रोग से ग्रस्त है उस पर भी कवि ने करारा प्रहार किया है।

स्वार्थ, कपट, छल से सदा, रहना कोसों दूर।
होगी तेरी प्रार्थना, तभी वहाँ मंजूर॥

कवि लोगों को अपने कर्म के प्रति सचेत भी करना चाहते हैं कि छल, कपट, स्वार्थ आदि जितने भी अमानवीय गुण हैं। उससे दूर रहने में ही हमारी भलाई है और तभी हमारी प्रार्थना स्वीकार होगी अन्यथा हम दर दर भटकते रहेंगे और कोई हमारी सुनने वाला नहीं होगा। इन दोहों में एक ओर जहाँ कवि स्वयं से कुछ कहते हैं वहीं दूसरी ओर जीवन के

यथार्थ का भी अत्यंत मार्मिक और यथार्थ वर्णन करते हैं जो संपूर्ण मानव जाति के लिए प्रेरणा स्रोत है। इस प्रकार विजय सतसई में जीवन के विभिन्न रंगों को चित्रांकित किया गया है।

मेरी शुभकामना है आपकी कलम यूँ ही नित निरंतर चलती रहे, शब्द यात्रा सदैव गतिमान रहे।

– डॉ. पूनम झा
प्राध्यापक – हिन्दी विभाग
नेपाल संस्कृत विश्वविद्यालय,
काठमांडू–नेपाल

❖

विविध विषयों एवं समसामयिक समाज का प्रतिबिंब : विजय सतसई

– डॉ. धीरज वणकर

दरअसल कविता हृदय से उद्‌भवित वह अभिव्यक्ति है जो सदैव परिवेश से प्रभावित होती है। कविता गहरे दायित्वबोध की सार्थक अभिव्यक्ति है। समाज की विसंगतियों – विद्रूपताओं के खिलाफ कविता आक्रोश व्यक्त करने के साथ ही मनुष्य में चेतना का संचार करती है। पाश्चात्य आलोचक मैथ्यू आर्नोल्ड के मतानुसार कविता जीवन की आलोचना है। वैसे साहित्य समाज का दर्पण भी है और दीपक भी। साहित्यकार समाज में जन्म लेता है, पलता है और आगे बढ़ता है। साहित्यकार समाज में जो देखता है, सुनता है और अनुभव करता है वही साहित्य में प्रतिबिंबित होता है। समाज में विचारों के द्वारा ही समस्त कार्य संपादित होते हैं। साहित्य विचारों का समूह होता है। अतः साहित्य में उजागर विचारों की गुप्तशक्ति संश्लिष्ट होकर समाज का नेतृत्व करती है। समाज को गतिशीलता प्रदान करने में साहित्य की महती भूमिका सिद्ध होती है। कविता मानव भावनाओं को मूर्तरुप प्रदान करती है और जीवन की सार्थकता को व्याख्यायित करती हैं। यहाँ उल्लेखनीय बात यह है कि साहित्य मनुष्य के जीवन एवं जगत, आत्मा एवं परमात्मा, राष्ट्र एवं समाज, आनंद एवं विषाद, महानता तथा हीनता का एक सबल मानदंड है। साहित्यकार में साधारण व्यक्ति की अपेक्षा अधिक संवेदनशीलता, सहानुभूति, सहृदयता तथा उत्तेजनापूर्ण भावनाएँ निहित रहती हैं। इन्हीं गुणों के कारण कवि में अभिव्यक्ति की प्रवृत्ति अधिक प्रबल रहती है। साहित्य ही तो समाज को समय–समय पर नई प्रेरणाएँ देता है।

विजय तिवारी अंतरराष्ट्रीय स्तर पर ख्याति प्राप्त, मशहूर ग़ज़लकार हैं। सदैव कुछ न कुछ लिखना पढ़ना उनका स्वभाव है। हिन्दी साहित्य अकादमी गांधीनगर से **'फल खाए शजर'** और **'आक़ा बदल रहे है'** ग़ज़ल संग्रह पुरस्कृत है। साथ ही अनेकों सेमिनारों में विविध विषयों पर प्रस्तुत इनके लेखों का संग्रह, **'साहित्य, साहित्यकार और वैश्विक धरोहर'** यह भी हिन्दी साहित्य अकादमी, गांधीनगर से पुरस्कृत है। इतना ही नहीं राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय स्तर की कई साहित्यिक संस्थाओं ने तिवारीजी की साहित्य साधना को नवाजा है। उनके संग्रह **'निर्झर'**, **'फल खाए शजर'**, **'आका बदल रहे हैं'** (ग़ज़लसंग्रह), **'धरा से गगन तक'** भाग 1–2 का जिक्र किया जा सकता है। 'धरा से गगन तक – 2' संकलन में विश्व के 21 देशों के 198 प्रसिद्ध कवियों की कविताएँ हैं। 14 सितम्बर 2023 में प्रकाशित इस काव्य–संकलन की वैश्विक स्तर पर भूरि भूरि प्रशंसा की जा रही है। हिन्दी में सतसई की सुदीर्घ परम्परा रही है सर्वाधिक चर्चित एवं प्रसिद्ध सतसई है – 'बिहारी सतसई।' सतसई परंपरा को समृद्ध करने में गुजरात के सतसईकारों का योगदान भी रहा है। गुजरात की हिन्दी सतसई में मध्यकालीन कवि दयाराम की 'दयाराम सतसई', आधुनिक काल में 'किशोर सतसई', 'देसाई सतसई' और 'विजय सतसई' हमें प्राप्त हुई है। यह हमारे लिये गौरव की बात है। सतसई

लिखना आसान काम नहीं है। दोहा छंद में 700 दोहे लिखने पर 'सतसई' कहलाती है। हालाकि हिन्दी में दोहा अपभ्रंश के माध्यम से आया है। अपभ्रंश के बाद आदिकाल में भी हमें दोहा साहित्य मिलता है। अमीर ख़ुशरो, ढोला–मारुरा–दूहा, 'वसंतविलास' आदि तत्पश्चात् भक्तिकाल एवं रीतिकाल में भी कबीर, तुलसी, मतिराम, रहीम आदि कवियों के प्रचुरमात्रा में दोहे मिलते हैं। **'विजय सतसई'** के एक एक दोहे बेहद मार्मिक हैं।

कवि विजय तिवारी ने दोहे पर अपना हाथ आजमाया है और उसमें खरे उतरे हैं। 'विजय सतसई' इसका उदाहरण है। प्रस्तुत सतसई में 772 दोहों का समावेश है। 'विजय सतसई' में आपको विषय – वैविध्य प्रचुर मात्रा में मिलेगा। इसके पीछे कवि की निरंतर अध्ययनशीलता कारणभूत है। प्रस्तुत सतसई के एक–एक दोहे कवि के देखे एवं भोगे हुए क्षणों का जिन्दा 'आईना' है। वस्तुत: यह दोहे देश एवं दुनिया की समसामयिक परिस्थितियों की बोलती तस्वीर है। कवि ने साँप्रत समाज की विविध समस्याओं, विसंगतियों तथा विषमताओं का बेबाकी से चित्रण किया है। विजय तिवारी ने सच को सीधे–सीधे कह दिया है। कुछ दोहे मानवता के मूल्य प्रस्थापित करने की नई चेतना जगाते हैं। प्रत्येक सर्जनात्मक कृति के प्रणयन में फिर वह भले ही किसी रचनाकार की स्वांत: सुखाय वृत्ति या भक्त की एकान्त गहन आध्यात्मिक अनुभूतियों की तन्मयता से ही क्यों न उद्भूत हुई हो – रचनाकार के सामने प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से एक विशिष्ट पाठक – वर्ग रहता ही है ।

'विजय सतसई' में मंगलाचरण, भगवद्स्तुति, भारतीय संस्कृति, भारत के वीरजवानों, नाम महात्म्य, विवेक, साम्प्रदायिक दंगे, सर्वधर्म समभाव, बेटी की महत्ता, माँ की महिमा, जीवन की क्षणभंगुरता, आपाधापी से त्रस्त मनुष्य, मजदूरों की व्यथा, वर्तमान में फैली लूटपाट एवं धोखाधड़ी, शून्य की महत्ता, चापलूसी – चमचागीरी, पर्यावरण पर मंडराते संकट, धरती क्या – क्या नहीं देती, विविध ऋतुओं, बचपन की मधुर यादें, मेले का मज़ा, कृषक जीवन आदि के दोहे हैं। महाकाव्य की भांति विजय सतसई के प्रारंभ में मंगलाचरण किया गया है। प्रत्येक रचनाकार यह चाहता है कि ग्रंथ निर्विघ्न रुप से संपन्न हो। विजय तिवारी जी ने गणेश, सरस्वती विद्या की देवी, हनुमान, मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम, शिव की स्तुति की है जैसे

मोदक इनको प्रिय लगें, इनके पिता महेश।
सर्वप्रथम पूजो इन्हें, इनका नाम गणेश॥

माता वीणावादिनी, चरणों में है शीश।
तेरे गुण गाऊँ सदा, दे मुझको आशीष॥

भगवद् स्तुति करते हुए सतसईकार श्रीराम एवं कृष्ण महिमा का गुण कुछ इस प्रकार करते हैं –

रामनाम जप छोड़कर, खुद को ही पहचान।
तेरे भीतर हैं बसे, त्रिभुवन पति भगवान॥

राम–कृष्ण भारतवासी के आस्था केन्द्र हैं। राम–कृष्ण का नाम जप भवसागर पार कराता है इनके चरणों की धूल पावन है –

राम–कृष्ण का देश यह, संस्कृतियों का मूल।
मोहक इसका रूप है, पावन इसकी धूल॥

मौजूदादौर में संचारक्रांति के कारण दुनिया मुट्ठी में आ गई है, दूरिया कम हुई हैं किन्तु नजदीकियाँ भी कम होती गई हैं। आदमी स्वकेन्द्रित होता जा रहा है। इन्सान–इन्सान के बीच के फासले बढ़ते जा रहे हैं। कवि विजय जी मानवता की चिंता करते हुए भगवान से प्रार्थना करते हैं –

बस इतनी है प्रार्थना, हे मेरे भगवान।
मानवता मुझ में रहे, बना रहूँ इन्सान॥

मानवमात्र के कल्याण की उमदा भावना भी दृष्टव्य है –

हे ईश्वर, इस विश्व के, करदे सब दुःख दूर।
या फिर इतनी शक्ति दे, मदद करूँ भरपूर॥

सतसईकार विजय तिवारी की प्रिय विध गीत – गज़ल है। उनके गीत–गज़लों की कई साहित्य प्रेमियों ने भूरि–भूरि प्रशंसा की है। कई राष्ट्रीय, अंतरराष्ट्रीय कवि संमेलन में विजय जी गीत–ग़ज़ल का पठन करते हैं तो श्रोतागण में से करतल ध्वनि के साथ 'वाह ईर्शाद' सुनाई देता है। आज भी कवि इस विध में पहचान और मिले इसे बयाँ करते हुए लिखते हैं –

गीत – ग़ज़ल से विश्व में, मुझे मिले पहचान।
हे भगवन दे दीजिये, मुझको यह वरदान॥

हमारे देश का इतिहास गौरवशाली रहा है। आज हम विश्वगुरु बनने जा रहे हैं। वेद–पुराण, रामायण–महाभारत जैसी कालजयी कृतियों ने विश्व में अपनी अमिट छाप बनाली है। भारत ने दुनिया को बहुत कुछ दिया इसका प्रमाण ये दोहे हैं –

दुनिया को हमने दिया, आयुर्वेद महान।
इसके जैसा विश्व में, नहीं कहीं विज्ञान॥

है भूगोल – खगोल का, जितना जग को ज्ञान।
उससे ज्यादा जानते, हम उनका विज्ञान॥

परिश्रम से सबकुछ हाँसिल किया जा सकता है। कर्म से आदमी की पहचान बनती है। 'श्रीमद् भगवद्गीता' के कर्मयोग में इसकी महत्ता दर्शायी गई है। विजय तिवारी इसे रेखांकित करते हैं ।

भगवद् गीता ने दिया, हमें कर्म सिद्धान्त।
छिपा हुआ इस ग्रंथ में, पूरा ही वेदांत॥

आजकल सनातन धर्म की बात जोरो–शोरों से चल रही है। भारत देश में विविधता में एकता है। यहाँ के लोग मनभावन हैं। दुनिया में भारतीय संस्कृति की विशिष्ट पहचान है। पूर्वप्रधान मंत्री अटलबिहारी वाजपेयी के शब्दों में कहूँ तो

हमारा देश ये कोई भूमिका टुकड़ा नहीं है,
ये तो जीता जागता राष्ट्र पुरुष है।
ये वंदन की भूमि है अभिनंदन की भूमि है,
ये अर्पण की भूमि है ये तर्पण की भूमि है,
ये राम और कृष्ण की जन्मभूमि है,
बुद्ध और महावीर की तपोभूमि है...
यहाँ का जन–जन हमें प्राणों से भी प्यारा है,
यहाँ की नदी – नदी हमारे लिये गंगा है,
यहाँ का कंकर–कंकर हमारे लिये शंकर है॥

भारतीय सनातन धर्म एवं संस्कृति की गौरवगाथा की सराहना करते हुए सतसईकार ने लिखा है –

मान रहा अब विश्व भी, है बस यही महान।
श्रेष्ठ सनातन संस्कृति, भारत की पहचान॥

टुकड़ा नहीं ज़मीन का, मेरा भारत देश।
मानवता महके यहाँ, जीवित है परिवेश॥

वीरों की है भूमि यह, है अद्‌भुत इतिहास।
उत्सव में भी रंग भरे, जन–जन में उल्लास॥

कबीर की अमृत वाणी की तरह विजय तिवारी किसी को न सताने की तथा मनुष्यजीवन क्षणभंगुरता की हक़ीक़त को कुछ इस प्रकार पेश करते हैं –

दीन–दुःखी की ले दुआ, होगा तभी विकास।
कभी किसी को मत सता, होगा तेरा नाश।

धनदौलत सब कुछ यहीं, जाना है जब छोड़।
तो क्यों तू बेकार में, उन्हें रहा है जोड़॥

गौरतलब है कि 'विजय सतसई' में हमें विषय वैविध्य प्रचुर मात्रा में मिलता है, इसके पीछे सतसईकार का गहन अध्ययन कारण भूत है। बेटी, नारी एवं माँ की सहजता से महिमा गाते हुए कवि बताते हैं कि बेटी है तो सब कुछ है, कवि अप्रत्यक्ष रूप से कन्याभ्रुण हत्या पर इशारा कर रहे हैं। माँ ममता एवं वात्सल्य की मूर्ति है तो नारी सहनशीलता का पर्याय है इस बात का प्रमाण देखिए –

बेटी से ही वंश को, मिलती है संतान।
फिर भी धीरज से सदा, सहती सब अपमान॥

बेटी है गौरव सदा, है यह कुल की आन।
रत्न बड़ा अनमोल है, रख इसका तू ध्यान॥

माँ से बढ़कर दुनिया में कोई नहीं है, वह संतान के लिये क्या–क्या नहीं सहती। माँ

है तो सबकुछ है –

झेल प्रसव की वेदना, देती है संतान।
ऐसी माँ का देवता, भी करते सम्मान॥

रक्षा करती पालती, माँ में है हररूप।
जननी है यह विश्व की, और ज्ञान का कूप॥

संस्कार लुप्त होते जा रहे हैं इस पर चिंता जताते हुए कवि कहते हैं –

दें शिक्षा यदि प्रेम से, बच्चों को माँ–बाप।
तो अच्छे संस्कार की, पड़ती उन पर छाप॥

कवि हिन्दी के उत्थान की बात भी करते हैं। अंग्रेजी के बढ़ते कदम से हमारी हिन्दी की स्थिति ठीक नहीं है। वह आज भी राष्ट्रभाषा नहीं बन पाई है। जो भी कारण हो किंतु हिन्दी मधुर, सरल, करोड़ों लोगों का कंठहार है कवि के शब्दों में देखिए –

अंग्रेजी के सामने, हिंदी है लाचार।
जरा मरण के बीच में, ज्यों रोगी बेजार।

हिन्दी भाषा है सरल, है सटीक व्यवहार।
जैसा लिखते है 'विजय', वैसा ही उच्चार॥

संग्रह में बचपन, मेले, सावन, नदी, हरियाली परक दोहे भी महत्वपूर्ण हैं। अंत में इतना अवश्य कहुँगा कि "विजय सतसई" ने हिंदी सतसई की विकासयात्रा को आगे बढ़ाने का श्लाघ्य प्रयास किया है। मैं कवि को बहुत बहुत बधाई देता हूँ।

– डॉ. धीरज वणकर
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग,
जी.एल.एस. कॉलेज फोर गर्ल्स, अहमदाबाद
मानव संसाधन विकास मंत्रालय से पुरस्कृत लेखक

❖

आधुनिक युग की श्रेष्ठ सतसई – विजय सतसई

–डॉ. बैजनाथ शर्मा 'मिन्टू'

हिन्दी साहित्य की तमाम विधाओं में से एक प्रसिद्ध विधा दोहा है जो कलेवर की दृष्टि से भले ही लघु दिखता हो पर अर्थ की दृष्टि से तो यह अपने आप में एक विराटता को समाहित किए हुए है। तभी तो कविवर बिहारी ने कहा है–

सतसैया के दोहरे, ज्यों नावक के तीर।
देखन में छोटे लगै, घाव करें गंभीर।

काव्य विधा में दोहा ही एक ऐसी सुपरिचित विधा है जिसे जनमानस पढ़ते ही आत्मसात कर लेता है। दोहा आदिकाल से लेकर आज तक के कवियों में समान रूप से प्रिय रहा है। क्योंकि यह अपनी मनमोहक लय और प्रासादिकता के कारण पाठक या श्रोता के हृदय पर सीधा प्रभाव डालता है। इतना ही नहीं यह बड़ी खूबसूरती के साथ संसार के अधिकांश विषयों को अपने में सहेज लेने की सामर्थ्य भी रखता है। तभी तो दोहा को हिंदी काव्य विधा का अत्यंत सशक्त व स्वतंत्र लघुरूपी छंद कहा गया है। इसकी दो पंक्तियाँ मन में सुगमता से बैठ जाती हैं और सरलतापूर्वक रूचि में समाविष्ट होकर जनमानस को रोमांचित कर देती है। तभी तो आदिकाल से आजतक दोहा लिखने–पढ़ने व सहेजने वालों की संख्या में उत्तरोत्तर बढ़ोत्तरी हुई है।

रीतिकाल में कवि बिहारी की लिखी "बिहारी सतसई" ने बड़ी प्रसिद्धि पाई। हिंदी साहित्य इस ग्रंथ का अत्यंत प्रचार हुआ तथा सतसई रचना के लिए इसने अनेक कवियों को प्रेरित किया। इसी कड़ी में हिन्दी साहित्य को एक नई ऊँचाई प्रदान करने वाला चर्चित व वरिष्ठ कवि, शायर, लेखक, आलोचक श्री विजय तिवारी जी का 772 दोहों का संग्रह 'विजय सतसई' ने तमाम साहित्य प्रेमियों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया है।

सद्यः प्रकाशित 'विजय सतसई' में जहाँ एक ओर सामाजिक, आध्यात्मिक, नैतिक और दार्शनिक चिंतन बहुत ही सहज और संवेदनशील तरीके से अभिव्यक्त हुआ है वहीं दूसरी ओर श्रृंगार प्रधान सतसईयों में श्रृंगार तथा वैराग्य के दोहे भी देखने को मिलते हैं। आपके कई ऐसी कई पंक्तियाँ हैं जिन्हें पढ़कर एहसास होता है कि अपने जीवन और जगत को कितना निकट से जाना और भोगा है।

श्री विजय तिवारी जी को मैं बहुत नज़दीक से जनता हूँ। निजी तौर पर कहा जाए तो आप सरल, सौम्य, व्यवहारिक व स्पष्टवादी व्यक्ति हैं। 'विजय सतसई' के प्रारंभ में ही आपने श्री गणेश, माँ सरस्वती, श्री हनुमान और शिव भगवान का आशीर्वाद माँगते हैं दिख रहे हैं। एक ओर जहाँ ईश्वर के प्रति आपका अटूट आस्था है वहीं दूसरी ओर साहित्य के प्रति आपका समर्पित भी उभर कर आया हैं। आपने कहा है–

चरणों में माँ शारदे, पड़ा हुआ यह दास।
कविता का वर दे इसे, बस इतनी है आस॥

चरणों में ही आपके झुका रहा हूँ शीश।
कृपा दृष्टि रखना प्रभो, देकर के आशीष॥

सुख में इतराऊँ नहीं, दुख में नहीं निराश।
समरस रखना हे प्रभो, बस इतनी है आस॥

"विजय सतसई" में विजय तिवारी जी ने अपने इन दोहों के माध्यम से मानव जीवन के प्रत्येक पहलू को उजागर करने का सफल प्रयास किया है। इन दोहों में आपने अलग अलग विषयों को लेकर अपने भाव के इर्द–गिर्द अपने शब्दों में उन्हें पिरो दिया है। –

तू किसान जनतंत्र का, तू ही बचा निपात।
फसल बचाने के लिये, अब उखाड़ खरपात॥

अभी हुआ प्रारम्भ है, और हुआ अभिमान।
कैसे फिर तू पायगा, श्रेष्ठ शिखर सम्मान॥

कहते चाहे लोग सब, सूर्य हो गया अस्त।
पर देने में रोशनी, वो हरदम है व्यस्त।।

दोहा चाहे ओजस्विता का शंखनाद करता हो या परिवार–समाज की विसंगतियों का अंकन, राष्ट्र की गरिमा का बखान करता हो या परम्परा – आधुनिकता के द्वन्द्व का विवेचन समर्थ कवि की लेखनी का स्पर्श पाकर पाठकों/ श्रोताओं के दिल में उतर जाता है। कम शब्दों में बड़ा संदेश देने का दुरूह व जटिल कार्य विजय तिवारी जैसे कवि ही सहज रुप से कर पाते हैं।

बेगुनाह मारे गये, क़ातिल हुये फ़रार।
बेलगाम जनतंत्र में फैला भ्रष्टाचार॥

मानेगा कोई नहीं, कोरा सच मत बोल।
झूठ अदाकारी जरा, पहले उसमें घोल॥

जीभ हिलाई तो मुझे, मिला बहुत अपमान।
पूँछ हिलाई गैर ने, पाया वो सम्मान॥

कवि ने सत्य ही तो कहा है कि मनुष्य यदि खुद को पहचान ले तो जीवन जीना आसान हो जाता है। अपनी रचना में कवि ने नीति और रीति का भी अत्यंत चित्रात्मक वर्णन किया है जो दिल को छू लेता है। छल, कपट, स्वार्थ जो आज मानव का पर्याय हो चुका है कवि ने उस पर करारा प्रहार करते हुए एक सीख देने का भी प्रयास किया–

स्वार्थ, कपट, छल से सदा, रहना कोसों दूर।
होगी तेरी प्रार्थना, तभी वहाँ मंजूर॥

राष्ट्रीय चेतना, साँस्कृतिक और विश्व मानवता का बोध भी इस कृति को महत्व प्रदान् करता है। भाषा सहज प्रेषणीय एवं अलंकृत है। शब्द सौष्ठव एवं अर्थ गौरव में भी दोहे

उत्कृष्ट बन पड़े हैं।

परिवर्तन ही है नियम, बदल रहा हर रूप।
जाते हैं सब छोड़कर, भिक्षुक हो या भूप॥

धरती तपती देखकर, रोया गगन विशाल।
देख तमाशा ये 'विजय', दुनिया है ख़ुशहाल॥

इनके दोहों का विषय– वैविध्य सहज ही द्रष्टव्य है। बचपन, माता–पिता, घर–परिवार, रिश्ते–नाते, पारिवारिक विघटन, बदलते परिवेश और पर्यावरण प्रदूषण से लेकर साँस्कृतिक प्रदूषण तक सभी विषयों पर इन्होंने लेखनी चलाई है। पाश्चात्य संस्कृति तथा इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के कारण बदलती परिस्थितियों ने सर्वाधिक प्रभाव हमारे घर–परिवार और ग्राम्य जीवन पर डाला है। संवेदनहीनता की समस्या विकराल है। संबंध औपचारिक और सतही बन गए हैं। अब संवेदना प्रदर्शित करने के लिए इमोजी प्रयुक्त किए जाने लगे हैं। यंत्रवत मानव जीवन की इस कटु सच्चाई के संदर्भ में कवि लिखता है–

बंगले में बेटा रहे, वृद्धाश्रम माँ – बाप।
नये दौर का देखिये, ये कैसा अभिशाप॥

कुदरत के ही कोप हैं, आँधी या तूफान।
छेड़ा है तूने 'विजय', आया तभी उफान॥

जलती धरती देख कर, दौड़े आये मेह।
कुदरत से ही सीख ले, हे मानव तू स्नेह॥

मोबाइल पर निभ रहै, सामाजिक संबंध।
लेकिन हृदय कपाट तो, भीतर से है बंद॥

समकालीन परिदृश्य में नैतिकता और मूल्यों का ह्रास होता देख सहृदय कवि लोक जागृत हेतु लिखने पर मजबूर होता है। भ्रष्टाचारी नेता व नेताओं के रहम–ओ–करम पर चलने वाली अपाहिज; लोकतंत्र का चौथा स्तंभ (मीडिया) और समाज को नई राह दिखाने वाला धन के लोलुप्त कवि/साहियकार ही अपना कर्तव्य भूल जाये तो कवि विजय तिवारी जैसे स्पष्टवादी कवि को कहना पड़ता है –

समाचार सब बिक रहे, बिकते हैं अखबार।
पत्रकारिता बन गई, चाट मसालेदार॥

नेताओं ने देश का, ऐसा किया विनाश।
धर्म, अर्थ औ नीति पर, नहीं रहा विश्वास॥

लोकतंत्र में अब बचे, ये सुख के आधार।
झूठ, तस्करी, छल कपट, और छद्म व्यवहार॥

तो आज गाँव कस्बे, कस्बे शहर और नगर महानगर बनते जा रहे हैं। विकास की

अंधी दौड़ ने बच्चों का बचपन, घर–परिवार की सुख–शांति और गाँव–देहात का भाईचारा छीन लिया है। लगता है, जैसे गाँव में गाँव रहा ही नहीं। और जब इस तरह के वातावरण उत्पन्न होता है तो विजय तिवारी जैसे कवि की कलम यह लिखने को मजबूर हो जाती है–

मोबाइल पर हो रहे, कवि सम्मेलन खूब।
कविता पढ़ पाओ सनद, और मिटाओ ऊब॥

बेगुनाह मारे गये, क़ातिल हुये फ़रार।
बेलगाम जनतंत्र में, फैला भ्रष्टाचार॥

लूट करो, चोरी करो, खुलकर अत्याचार।
लोकतंत्र का आजकल, यही 'विजय' आधार॥

क़त्ल करो, चोरी करो, और करो फिर राज।
नेता के लक्षण हुए, ये तीनो ही आज॥

'विजय तिवारी जी के दोहे एक तरफ़ पाठक के भीतर देश–प्रेम के भाव जागृत करते हैं तो दूसरी तरफ़ भारतीय संस्कृति को अक्षुण्ण रखने हेतु भी प्रेरित करते हैं। विजय तिवारी लिखते हैं कि भारत की संस्कृति विश्व में महान है। हमारे देश का इतिहास गौरवशाली रहा है। आज हम विश्वगुरु बनने जा रहे हैं। वेद–पुराण, रामायण–महाभारत जैसी कालजयी कृतियों ने विश्व में अपनी अमिट छाप बनाली है। भारत ने दुनिया को बहुत कुछ दिया इसका प्रमाण ये दोहे हैं–

दुनिया को हमने दिया, आयुर्वेद महान।
इसके जैसा विश्व में, नहीं कहीं विज्ञान॥

है भूगोल – खगोल का, जितना जग को ज्ञान।
उससे ज्यादा जानते, हम उनका विज्ञान॥

नये जमाने में 'विजय', कलम बना ले अस्त्र।
ताकतवर के सामने, शास्त्र बनेगा शस्त्र॥

विजय तिवारी आशावादी कवि हैं। आपके दोहों में आशा और आस्था की अभिव्यक्ति, के साथ–साथ प्रेम, शृंगार मानवीय संबंध, निर्धनों की पीड़ा आदि सहज भाव से देखने–पढ़ने मिल जाता है। आपका अंदाज़–ए–बयाँ काबिल–ए–तारीफ़ है। कथ्य व शिल्प की दृष्टि से आपके दोहे बेहतरीन हैं। आपकी भाषा शैली की नवीनता व अभिव्यंजना के गुण सुधी पाठकों को अपनी और आकृष्ट करती है। उदाहरणतः

गेंदा, जूही, मोगरा, महके हरसिंगार।
आभा बहुत गुलाब की, खूब खिला कचनार॥

भाषा मात्र सम्प्रेषण का माध्यम नहीं होती बल्कि व्यक्ति की पहचान उसकी भाषा

और पारंपरिक रीति–रिवाजों से होती है। भाषा और पारंपरिक रीति–रिवाज लंबे समय में विकसित होकर मजबूती से स्थापित हो जाते हैं। भाषा और परंपराएं शाश्वत होती हैं। हिंदी भाषा के प्रति उदासीनता कवि को पीड़ा पहुँचती है। स्तरीय कविताओं तथा गरिमामयी कवि सम्मेलनों की कमी कवि को बेहद अखरती है। कवि कहते हैं

कविताओं को देखकर, कलम हो गई बंद।
तुकबंदी बेहाल है, हार गए हैं छंद॥

अंततः मैं इतना अवश्य कहना चाहूँगा कि आपकी यह पुस्तक पठनीय एवं संग्रहणीय तो है ही, साथ ही नवागंतुकों के लिए एक संदर्भ ग्रंथ की तरह उपयोगी भी है। मुझे पूरा विश्वास है कि 'विजय सतसई' पाठकों में नई भावनाओं और विचारों को भर देगी। आपके दोहे सभी के लिये प्रेरणा, आनंद और आत्म–निरीक्षण के स्रोत बनेंगे। आपकी कलम यूँ ही चलती रहे। शुभकामनाएँ। शुभम् अस्तु!

डॉ. बैजनाथ शर्मा 'मिन्टू'
हिंदी अध्यापक
बिड़ला पब्लिक स्कूल
दोहा -क़तर

❖ ❖ ❖

संक्षिप्त साहित्यिक परिचय
विजय तिवारी

जन्म तिथि : 2 अगस्त 1963

जन्म स्थान : अहमदाबाद

वृत्ति : अध्यापक के पद से स्वैच्छिक निवृति लेकर पूर्णतः साहित्य को समर्पित।

संस्थापक एवं अध्यक्ष :

'साहित्य सेतु परिषद' (पंजीकृत) **साहित्य सेतु अकादमी ट्रस्ट** (पंजीकृत) पूर्णतः साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक संस्था जो राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कार्यरत है।

संस्थापक :

1 - **विश्व हिन्दी साहित्य संस्थान** यू ट्यूब चैनल

2 - vtlibrary.com यह विश्व का सर्वप्रथम वेब पुस्तकालय है।

प्रकाशन :

- **निर्झर** काव्य संग्रह सन् 1991, ध्रुव प्रकाशन, अहमदाबाद।

- **'फल खाए शजर'** ग़ज़ल संग्रह, सन् 1999, ध्रुव प्रकाशन, अहमदाबाद। (हिन्दी साहित्य अकादमी (गुजरात) एवं दि अखिल भारतीय सद्भावना ट्रस्ट द्वारा पुरस्कृत)
- **'आक़ा बदल रहे हैं '** ग़ज़ल संग्रह, सन् 2017, (हिन्दी साहित्य अकादमी (गुजरात) द्वारा पुरस्कृत)
- **'साहित्य, साहित्यकार और वैश्विक धरोहर '** शोध लेख संग्रह, सन् 2019, (हिन्दी साहित्य अकादमी (गुजरात) द्वारा पुरस्कृत)
- **'विजय सतसई'** 2024 में साहित्य सेतु अकादमी ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित।
- देश की लगभग सभी प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं एवं दो दर्जन से अधिक काव्य संकलनों में रचनाएँ प्रकाशित।
- हिन्दी समिति **(इंग्लैंड)** का मुख पत्र **' पुरवाई '**, **नॉर्वे** से अंतरराष्ट्रीय पत्रिका **' स्पाईल'**, **अमेरिका** से प्रकाशित **'विश्व विवेक ' 'विश्वा ' 'देशना और ' कवितावली' , कैनेडा** से प्रकाशित **' हिन्दी चेतना '** में रचनाओं का प्रकाशन।

सम्पादन :

- गुजरात हिन्दी विद्यापीठ का मासिक मुखपत्र **' रैन बसेरा '** का सम्पादन।
- **' धरा से गगन तक '** भारत सहित विश्व के दस राष्ट्रों के हिन्दी कवियों का सर्वप्रथम अन्तरराष्ट्रीय हिन्दी काव्य संकलन।
- **कहकशाँ-ए-ग़ज़ल** भारत सहित विश्व के चार देशों के चुनिंदा पचास शायरों की चुनी हुई बेहद बेहतरीन और दिलकश ग़ज़लों का अद्भुत, अद्वितीय और बेमिसाल ग़ज़ल संग्रह।
- **' धरा से गगन तक-2 '** भारत सहित विश्व के इक्कीस देशों के हिन्दी रचनाकारों का अंतरराष्ट्रीय हिन्दी काव्य संकलन।

विशेष सहभागिता :

नेपाल के जनकपुर में आयोजित तृतीय अंतरराष्ट्रीय सेमिनार 20 और 21 नवम्बर 2021 को नेपाल के जनकपुर में आयोजित तृतीय अंतरराष्ट्रीय सेमिनार में Growth of Tourism industry Through the Development of Ramayana Circuit पर शोध लेख प्रस्तुत किया।

सम्मान-पुरस्कार

- हिन्दी साहित्य परिषद की ओर से सर्वश्रेष्ठ काव्य के लिए सन् 1992 में गुजरात के तत्कालीन राज्यपाल महामहिम डॉ स्वरूप सिंह द्वारा प्रथम पुरस्कार पदक प्राप्त। श्रेष्ठ काव्य के लिए सन् 1993 में राज्यसभा की सदस्या श्री उर्मिलाबहन पटेल द्वारा पुरस्कार पदक प्राप्त।
- **' साहित्य सृजन सम्मानश्री '** 1997, नागपुर , **' साहित्य श्री सम्मान '** 1998 , गुना (म प्र), **' साहित्य गौरव '** 1998 , बिजनौर, (उ प्र) , **' साहित्य शिरोमणि सम्मान '** 1998, जालौन, (उ प्र), **' लेखक श्री सम्मान '** 1998 , बैतूल, (म प्र), **' काव्य वैभव श्री सम्मान '** 1998 ,नागपुर , (महाराष्ट्र), **' साहित्य सिंधु '** 1999 , बैतूल , (म प्र), **' रामचेत वर्मा गौरव पुरस्कार '** 1999, अहमदाबाद, **' सुधा वाणी सम्मान '** 1999, अहमदाबाद, **' कविवर मैथिलीशरण गुप्त सम्मान '** 2000, मथुरा (उ प्र), **' श्री सम्मान '** 2018, क्रान्तिधरा साहित्य अकादमी, मेरठ, (उ प्र), **' ज्ञानरत्न सम्मान '** 2019, वीरभाषा हिन्दी साहित्यपीठ, मुरादाबाद, (उ प्र), **' हिन्दी साहित्य भूषण '** 2019, साहित्य मण्डल, श्री नाथद्धारा (राजस्थान), **' काव्य शिरोमणि '** 2019, श्री श्रीसाहित्य सभा, इन्दौर (म प्र), **' बेकल उत्साही स्मृति सम्मान '** के बी हिन्दी साहित्य समिति बदायूँ, (उ प्र), **' भाषा सहोदरी हिन्दी सम्मान '** 2019, दिल्ली, **' शायर हफीज़ मेरठी स्मृति सम्मान '** 2019, क्रान्तिधरा मेरठ साहित्य अकादमी, मेरठ, (उ प्र), **' विशिष्ट प्रतिभा सम्मान '** 2019 , दिल्ली, **' श्रेष्ठ प्रतिभा सम्मान '** 2020, हिन्दी साहित्य अकादमी, अहमदाबाद, (गुजरात), **साहित्य साधक** 2020 वीरभाषा हिन्दी साहित्यपीठ, मुरादाबाद (उ प्र), **' श्रेष्ठ रचनाकार सम्मान '** 2020,अलीराजपुर, (म प्र), **' अखिल भारतीय मेधावी सृजन अवार्ड '** 2020, वर्धा (महाराष्ट्र),**अंतरराष्ट्रीय हिंदी गौरव सम्मान** रुसी मैत्री संघ **दिशा** (मॉस्को रूस) **अनुबंध साहित्य भूषण सम्मान** 2021, अखिल भारतीय अनुबंध फाउंडेशन (मुम्बई)द्वारा विशिष्ट सम्मान-2021, **कविवर माखनलाल चतुर्वेदी सम्मान- 2022** हृदयांगन साहित्यिक संस्था, मुम्बई, **अग्निशिखा गौरव सम्मान-2022** अखिल भारतीय अग्निशिखा मंच, मुम्बई, **हृदयांगन रत्न सम्मान-2022** हृदयांगन साहित्यिक संस्था, मुम्बई **साहित्य शिरोमणि सम्मान** 2022, श्री श्रीसाहित्य सभा,इंदौर (म प्र) **विधावारिधि सम्मान** 2023 हृदयांगन साहित्यिक संस्था (महाराष्ट्र), **गंगा गोमुखी साहित्य भूषण सम्मान** 2023 हिन्दी साहित्य गंगा संस्था, जलगांव (महाराष्ट्र),

भारत रत्न सरदार पटेल साहब एवार्ड 2023 अखण्ड भारत राष्ट्रवादी सेवादल, (गुजरात), **स्व. आशुतोष तिवारी सम्मान** 2023 कादम्बरी, जबलपुर (म. प्र.) **के. बी. स्मृति साहित्य शिरोमणि सम्मान** 2023 के. बी. हिन्दी सेवा न्यास, बदायूं (उ. प्र.) **साहित्य कीर्ति एवार्ड** 2024, वडनगर साहित्य संस्थान एवं गुजरात हिन्दी साहित्य अकादमी (गुजरात), **साहित्य सौरभ सम्मान** 2024 अखिल भारतीय साहित्य परिषद, धार (म. प्र.), **विशिष्ट साहित्य साधक सम्मान** 2024, बेस्टी एज्युकेशन एंड चैरिटेबल ट्रस्ट (दोहा - कतर), **देवभूमि सम्मान** 2024, उत्तराखंड कला एवं साहित्य मंच, ऋषिकेश (उत्तराखंड), **शब्द शिरोमणि सम्मान** 2024 काव्य धारा प्रकाशन, हैदराबाद, (तेलंगाना)

विशेष :

- गुजरात राज्य शाला पाठ्यपुस्तक मंडल द्वारा राज्य के हिन्दी की पाठ्यपुस्तकों में रचनाएँ प्रकाशित।
- मंच के सफल कवि एवं कुशल संचालक ।
- ईमेल : vijay.tiwari1998@gmail.com

सम्पर्क

- A/202, क्रिश लक्जुरिया, केनेरा बैंक के सामने, शाश्वत महादेव-3 के पास, वस्त्राल रोड, वस्त्राल, अहमदाबाद- 382418 **मोबाइल** – 9427622862

इसी ग्रंथ से....

है तुम्हारी ग़ज़ल न हमारी ग़ज़ल
सबको लगने लगी आज प्यारी ग़ज़ल
कहते होंगे कभी मीर ग़ालिब मगर
आजकल कह रहे हैं तिवारी ग़ज़ल

(अंसार कंबरी, कानपुर, सन् १९९९)

१. अहमदाबाद के प्रसिद्ध कवि श्री विजय तिवारी का यह ग़ज़ल संग्रह "फल ख्राए शजर" हिन्दी कविता के क्षेत्र में ग़ज़ल विधा की एक प्रमुख कड़ी है। श्री विजय तिवारी को ग़ज़ल कहने का सलीका आता है। निश्चय ही वह ग़ज़ल की आत्मा से परिचित हैं। उनकी ग़ज़लें वैसे बहुत सरल तथा सहज हैं किन्दु सोचो तो सोचने को मजबूर करती हैं। हिन्दी ग़ज़ल का मुख्य स्वर व्यंग्य का रहा है। दुष्यंत कुमार ने 'साये में धूप' ग़ज़ल संग्रह के तरकश से जो तीर निकाले थे उनकी मार बहुत दूर तक थी। विजय की ग़ज़लों में भी आज के परिवेश की विसंगतियों पर गहरे प्रहार हैं। ऐसे प्रहार, ऐसी चोटें जो वर्तमान समय के अनगढ पत्थर में से समाज की सुन्दर और पूजा योग्य मूर्ति तराशने में सफल हुई हैं। (डॉ. कुंअर बैचेन, गाजियाबाद, सन् १९९९)

२. श्री विजय कुमार तिवारी की ग़जलों से गुजरते हुए वह राय सहज ही बन जाती है कि श्री तिवारी हिन्दी ग़ज़ल के मर्यादित और मंजे हुए हस्ताक्षर हैं। इन ग़ज़लों का सबसे बेहतरीन पक्ष व्यंग्यात्मकता है। (डॉ. उर्मिलेश, बदायूँ, सन् १९९९)

३. सिद्ध ग़ज़लकारों में अहमदाबाद के श्री विजय तिवारी का नाम विशेष रुप से उल्लेखनीय है। वे निराला जी की ग़ज़ल परम्परा के सम्वाहक हैं। इनके ग़ज़ल कृतित्व में हिन्दी ग़ज़ल और उर्दू ग़ज़ल का बड़ा ही मनोहारी समन्वय मिलता है। तिवारी जी कथ्य एवं शिल्प की दृष्टि से अपनी अलग पहचान स्थापित करने में सफल हुए हैं। (पद्मश्री डॉ. चिरंजीत, दिल्ली, सन् १९९९)

४. ग़ज़ल के शेर में हम देख सकते हैं कि देश-काल और परिस्थिति को लेकर बहुत ही संवेदनशील बात को लेखक ने प्रभावी ढंग से उठाया है। (डॉ. सुनीलकुमार क्षेत्रीय निदेशक, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, अहमदाबाद, सन् २०२०)

प्रकाशक
साहित्य सेतु अकादमी ट्रस्ट
ए-२०२, क्रिश लक्जुरिया, शाश्वत महादेव-३ के पास,
केनरा बैंक के सामने, वस्त्राल, अहमदाबाद-३८२४१८.